रह कहानियों का कहानी संग्रह

व मन



संसार चन्द 'प्रभाकर'

हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी द्वारा प्रदत्त
दो हजार रुपये की वित्तीय सहायता द्वारा प्रकाशित
कहानी संग्रह "मानव मन"

मानव मन



पुस्तक की यह प्रति आदरणीय
शास्त्री श्री राम नाथ जी की
सेवा में सादर भेंट।
संसारचन्द प्रभाकर
5/3/85

—संसार चन्द प्रभाकर

प्रकाशक :—
नीरज प्रकाशन पंकज भवन
फतेहपुर-176053 तह० नूरपुर
जिला कांगड़ा (हि० प्र०)

प्रथम संस्करण दिसम्बर-1984 1050 प्रतियाँ
मूल्य : 15-00 रुपये

मुद्रक :—
नरेन्द्र कुमार
स्नोत्रा आर्ट प्रिंटिंग प्रैस
सामने रमणीक सिनेमा, पठानकोट-145001
फोन : 4496

लेखक :—
संसार चन्द 'प्रभाकर'
गांव तथा डाकघर फतेहपुर
तह० नूरपुर (कांगड़ा) हि०प्र०

"दो शब्द"

संसार चन्द प्रभाकर की वर्तमान पुस्तक को देख और पढ़कर बड़ी सन्तुष्टि और प्रसन्नता होती है। सन्तुष्टि इसलिए कि श्री प्रभाकर अध्यापन कार्य में रत हैं। यह कार्य निश्चय ही बड़ी व्यस्तता का कार्य है और इस व्यस्तता से पुस्तक लिखने का समय निकालना आजकल बड़े साहस का काम है। इस व्यस्तता में हम प्रायः आकाशवाणी और कवि गोष्ठियों एवं लेखक-सम्मेलनों के लिए ही लिख पाते हैं। प्रसन्नता इसलिए कि अब तक प्रदेश में जो प्रकाशन सामने आया है उसमें अधिकतर कविता संग्रहों की बहुलता है। गद्य क्षेत्र में बहुत ही कम लिखा गया है। प्रभाकर जी ने 12 कहानियों का संग्रह निकाल कर हिमाचल में हिन्दी के गद्य-साहित्य को विशिष्ट रचना प्रदान की है।

श्री संसार चन्द प्रभाकर की प्रथम रचना "निरपराध-अपराधी" को पढ़ने का अवसर मिला है। ग्राम्य जीवन की समस्याओं पर आधारित उपन्यास कई दृष्टियों से एक उत्कृष्ट कृति है। पाठकों में, निश्चय ही उसका स्वागत हुआ है और उसी सफल प्रयोजन के बाद श्री प्रभाकर की वर्तमान रचना "मानव मन" निश्चय ही एक सतुत्य प्रयास है।

आज की कहानी समाज की विषम परिस्थितियों से जूझते हुए मनुष्य की प्रतिदिन की जिन्दगी है। संघर्ष अब जीवन-पद्धति है। आज संघर्ष अस्तित्व में रहने का साधन मात्र नहीं है। अब वह एक साध्य वस्तु है। जो व्यक्ति संघर्ष के लिए उठ नहीं पाता उसका जनाजा उठता है। तभी तो प्रभाकर जी की "प्रतिशोध" जैसी कहानियों का जन्म होता है। परन्तु कहानी का निर्वाह अपना है। परिस्थिति कहानी नहीं। यदि परिस्थिति को कला-क्रम

नहीं दिया जाता तो वह घटना है। इस निर्वाह में प्रभाकर जी खरे उतरे हैं।

प्रभाकर जी की ज्यादातर कहानियां वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण हैं। "प्रार्थना पत्र" कहानी में बेरोजगारी की जटिल समस्या का प्रतिरूपण है। बेरोजगारी लाचारी को जन्म देती है। लाचार श्रमिक शरीर छोड़ देता है तो उसका जनाजा उस सड़क से गुजरता है जहां वह मजदूर रहा है और जहां ठीक उसी समय मन्त्री महोदय द्वारा सड़क का उद्‌घाटन किया जा रहा है। यही सामाजिक व्यवस्थाओं की विडम्बना है। निर्धारित व्यवस्था अपेक्षित उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर पाती। इसी परिप्रेक्ष्य में "वसीयत नामा" कहानी कानून के लचीलापन और सामाजिक व्यवस्था के खोखलेपन की ओर इशारा करती है।

कहानीकार अपने पास-पड़ोस से बहुत दूर नहीं जा सकता। यदि वह जाता है तो उसके कथन में कृत्रिमता स्वतः प्रवेश करती है। प्रभाकर जी ने भी अपने परिवेश को ही अनेक कहानियों के लिए केन्द्र बिन्दु बनाया है।

"पेड़ कभी धोखा नहीं देते" में भूमि के बंटवारे की पारम्परिक समस्या और आम के पेड़ों के प्रति भाव और मोह को उजागर किया गया है। "दायित्व" में पक्षियों के प्रति समाज के दायित्व की अभिव्यंजना हुई है। "वारिस" कहानी में समाज में व्याप्त असमानता की रूढ़िग्रस्तता से मुक्ति की अकुलाहट प्रदर्शित होती है। इसका वातावरण पहाड़ी समाज के सेबों के बागीचों का जीवन है। अपने परिवेश की जींवत जानकारी के कारण कहानीकार ने इन कहानियों को सर्वाधिक स्मरणीय बनाया है।

रचना का जीवन के साथ सम्बद्ध होना जितना आवश्यक है उतना ही जीवन दृष्टि को लेकर कथानक का चुनाव तथा प्रस्तुती-

करण की सूक्ष्मता का होना भी जरूरी है। "कला और औरंगजेब" तथा "महमूद की चिट्ठी" कहानियों में जहां स्थानीय परिवेश से दूर का कथानक है वहां भी कहानीकार जीवन की सच्चाईयों से दूर नहीं गया है। "सती" "गौहत्या" और "मतवन्ना" जैसी कहानियां प्रेमचन्दयुगीन कहानियों की याद दिलाती हैं।

श्री प्रभाकर ने "मानव मन" के रूप में कहानियों का यह संग्रह प्रकाशित करके हिमाचल के साहित्य जगत को एक अनुपम रचना प्रदान की है। इनकी भाषा सरल और सहज तथा शिल्प सादा और आकर्षक है। अतः पाठक अन्त तक कृति से बंधा रहता है। कथ्य की स्पष्टता और वर्णन शैली की सादगी से ये कहानियां पाठकों को प्रिय लगेंगी, ऐसा विश्वास है।

एम० आर० ठाकुर सचिव
हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा
अकादमी, क्लिफ एण्ड एस्टेट,
शिमला - 171001

आमुख

"हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा आकादमी" द्वारा प्रदत्त दो हजार रूपये की वित्तीय सहायता से प्रकाशित मैं अपने कहानी संग्रह 'मानव मन' को मां सरस्वती के पावन मन्दिर में भेंट कर रहा हूं।

विभिन्न कथानकों को लेकर लिखी गई इस संग्रह की बारह कहानियां मनुष्य के मन की स्थितियों को उदघाटित करने की कितनी क्षमता रखती हैं, इस बात का अनुमान तो विज्ञ पाठक तथा सूक्ष्म दर्शी आलोचक ही कर पायेगें। इस संग्रह की पहली कहानी 'महमूद की चिट्ठी' में जहां भारतीय नारी के उदात्त गुणों का चित्रण करने की चेष्टा की है। वहां इतिहास प्रसिद्ध लुटेरे सुलतान महमूद गजनवी के क्रूर ह्रदय में कोमलता के अकुंरों को दर्शाने का भी प्रयत्न है। धन की समस्या जो युग युगों से सामाजिक असमानता का कारण बनती चली आ रही है। उसका निरूपण इस कहानी में करने का प्रयास भी किया गया है। इस संग्रह की दूसरी कहानी 'पेड़ कभी धोखा नही देते' में एक विधवा नारी की समस्याओं, ग्राम्य जीवन तथा भूमि के वंटवारे की समस्या और आम के वृक्षों के प्रति प्यार, बाल स्नेह और पंचायत तथा कानून की अवहेलना पर ईश्वरीय प्रकोप को दर्शाया गया है। इस संग्रह की तीसरी कहानी 'शहीद' में साम्प्रदायिक एकता, भारत भूमि के लिए प्रत्येक भारतवासी का दायित्व तथा युद्ध में सैनिक कर्तव्य और एक वीरगति प्राप्त सैनिक की माँ की ममता के साथ साथ देशभक्ति का चित्रण किया है। चौथी कहानी 'सती' का कथानक सतिप्रथा से सम्बन्धित है फिर भी इसमें आधुनिकता लाने का प्रयास किया है। मनुष्य को पुर्नविवाह की समाज द्वारा छूट और नारी को सती जैसी प्रथाओं का प्रतिबन्ध आज भी समाज को

घेरे हुए है। यद्यपि सती प्रथा अब नहीं है पर इसी प्रकार की कई प्रथांए नारी जाति को इस युग में भी घुटन का जीवन व्यतीत करने पर बाध्य करती हैं। नारी युग युगों से पीड़ित है इसी कथानक को लेकर 'सती' कहानी लिखी गई है। पांचवी कहानी 'कला और औरंगजेब' में कला के प्रति बादशाह औरंगजेब की उदासीनता तथा एक कलाकार की कला के निरादर के परिणाम को लिखना ही इस कहानी का मूल तात्पर्य है। इस संग्रह की छठी कहानी 'मतवन्ना' को ग्राम्य जीवन से लेकर नगरों के धनी समाज द्वारा उसकी सन्तान को खरीदना और पोते के मोह में दादा का देहान्त लिखने का तात्पर्य यही है कि जितना प्यार सन्तान से मां बांप को नहीं होता उससे कहीं अधिक दादा और दादी को होता है। इस संग्रह की सातवीं कहानी 'प्रार्थना पत्र' में जहां एक दलित मजदूर की पुकार है वहां दहेज प्रथा और सामाजिक व्यवस्था की विडम्बना को दिखाया गया है। इस संग्रह की आठवीं कहानी 'वारिस' में सम्पति के ठीक वारिस को ढूंडने तथा सामाजिक असमानता में जाति-प्रथा की बाधा को लेकर विभिन्न सामाजिक रुढ़ियों का चित्रण करने का प्रयास किया गया है। अगली कहानी 'गौ हत्या' में बाल विवाह से लेकर शाहूकारी प्रथा और एक विधवा नारी की समस्याओं तथा गौ हत्या के परिणाम और गाए के प्रति मोह को जगाया है। 'प्रतिशोध' इस संग्रह की दसवीं कहानी में पढ़े लिखे युवक वर्ग को चेतावनी का संकेत दिया गया है। नारी पर ढाई गई विपति तथा पुत्र का अपनी मां के प्रति प्यार और मनुष्य जाति की विहवलता की विडम्बना को दर्शाने का प्रयास किया है। 'दायित्व' इस संग्रह की कहानी पक्षियों के प्रति मानव मोह को लेकर लिखी गई है। जहां अधिकारी और कर्मचारी दो वर्गों को मनोदशाओं को दिखाने का प्रयास किया गया है, वहां मनुष्य के पक्षियों के प्रति दायित्व को पहचानने की ओर संकेत करने की

चेष्टा की गई है। 'वसीयतनामा' इस संग्रह की अन्तिम कहानी में कानून के लचीले और खोखलेपन को दिखाने की चेष्टा की गई है। कुल मिलाकर इस संग्रह की बारह कहानियां है जिनकी कल्पना मैं ईश्वरीय कृपा से ही कर पाया हूं। मैं इस संग्रह में कहां तक सफल हो पाया हू इस बात का अनुमान पाठक वृन्द ही लगा सकेंगे। इन कहानियों के पात्र ऐतिहासिक कहानियों के कुछ पात्रों को छोड़कर सभी काल्पनिक हैं।

मैं हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा आकदमी का आभार व्यक्त करता हूं जहां से मुझे इस दूसरी कृति **'मानव मन'** को प्रकाशित करवाने में समुचित योगदान मिला है। मुझे यह पूर्ण आशा तथा विश्वास है कि पाठकगण विभिन्न प्रकार की रुचियों से भरे इस कहानी संग्रह को पढ़कर पूर्ण आनन्द प्राप्त करेंगे।

लेखक :- संसार चन्द 'प्रभाकर'
गांव व डाकघर फतेहपुर
तह० नूरपुर (कांगड़ा) हि० प्र०
पिन :- 176 053

जीवन परिचय

श्री संसार चन्द 'प्रभाकर' हिमाचल प्रदेश के जिला कांगड़ा की तहसील नूरपुर के एक गांव फतेहपुर के निवासी हैं। इनका जन्म 16 जून 1935 ई० को फतेहपुर गांव में श्री मंगत राम पुरोहित के घर हुआ। इनके पिता बड़े दानी और साधारण प्रकृति के व्यक्ति थे। इनकी माता का नाम श्रीमती तारो देवी है। इनके दो भाई और दो बहनें हैं। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा फतेहपुर पाठशाला में हुई। ज्वाली स्कूल से आठवीं तक शिक्षा प्राप्त करके आपने हाई स्कूल नूरपुर से दसवीं की परीक्षा पास की और अठारह वर्ष की अवस्था में अध्यापन कार्य में रत हो गए। इनका विवाह तहसील देहरा (कांगड़ा) के नगर हरीपुर में श्री बृजनाथ अवस्थी की पुत्री श्रीमती पुष्पा देवी से 1956 में हुआ। 1964 में अपने पिता के देहान्त पर सारे परिवार का दायित्व इन्हीं पर आ गया। परिवारिक समस्याओं का सामना करते हुए इन्होंने अध्यापन कार्य में अपनी रुचि दिखलाई है कि इनके पास पढ़े हुए विद्यार्थी इनको आजकल के युग का वास्तविक गुरू मानते हैं। 1970 में इन्होंने प्रभाकर की परीक्षा पंजाब विश्वविद्यालय से प्राप्त की तथा 1974 में कला स्नातक की उपाधी हिमाचल प्रदेश विश्व विद्यालय से प्राप्त कर इन्होंने अपना साहित्य लेखन का कार्य आरम्भ कर दिया।

इनका एक उपन्यास 'निरपराध अपराधी' फरवरी, 1982 में ग्राम्य जीवन की ज्वलंत समस्याओं का अद्भुत चित्रण है। इस उपन्यास की पाठकों द्वारा भूरी भूरी सराहना हुई है। इनकी यह कृति मुन्शी प्रेम चन्द के गोदान उपन्यास से मिलती जुलती है। इसी सफल प्रयास के उपरान्त इनकी यह दूसरी कृति मानव मन प्रकाशित हुई है। इस कृति की कहानियों में भी ग्रामों में बसे लोगों

की समस्याओं और नारी जाति के उदात्त गुणों और विखलता का साकार चित्रण हैं। 'भर्तृ हरि लोक गाथा' पुस्तक जो 1984 में हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी द्वारा प्रकाशित हुई है में आप द्वारा जुटाया गया अंश बड़ा मनमोहक बन पड़ा है। श्री संसार चन्द 'प्रभाकर' हिमाचल प्रदेश के एक मूर्धन्य साहित्यकार हैं। एक उपन्यासकार, कहानीकार, कवि एवं निबन्ध लेखक के रूप में इनका साहित्यक कार्य सराहनीय है। इनकी कविताएं प्रसारित होती रहती हैं। पहाड़ी भाषा, हिन्दी भाषा, उर्दू भाषा के साथ साथ व्रज भाषा में भी इन्होंने काव्य साहित्य की रचना की है। इनका लिखा साहित्य बड़ा मनमोहक और समाज का जीता-जागता चित्र है। आप 'कांगड़ा कला संगम' साहित्यक संस्था के सचिव तथा 'कांगड़ा साहित्य कला मंच' के सक्रीय सदस्य होने के साथ साथ एक सफल भाषा सर्वेक्षण भी हैं। आपका व्यक्तित्व बड़ा महान है। ईश्वर पर इनको अगाध विश्वास है। इनके दो लड़के तथा तीन लड़कियां हैं। इनकी लेखनी में बड़ी शक्ति तथा बात करने का ढंग निराला है। हमें इनसे बड़ी आशाएं हैं, ईश्वर इनको दीर्घायु प्रदान करे।

'प्रकाशक'

"इतिहास-प्रसिद्ध लुटेरे सुलतान महमूद ग़ज़नवी के चरित्र की संवेदनशील गाथा, जिसे लेखक ने कल्पना पुट देकर भारतीय नारी के उदात्त गुणों एव मध्यकालीन सामाजिक व आर्थिक परिवेष की उद्घाटिका के रूप में प्रस्तुत किया है।" "विश्व-ज्योति"

महमूद की चिट्ठी

राजस्थान का एक ब्राह्मण 'हीरामन' नौकरी की तलाश में घूमता घूमता काठियावाड़ के एक सेठ कौडू के पास दो दीनार माहवार पर नौकर हो गया था। जब वह घर से नौकरी के लिए निकला था, तो उस की लड़की 'देवला' की आयु केवल दो वर्ष की थी। अपनी पत्नी कमला के आग्रह पर ही वह घर से निकला था। कौडू उर्फ कौडेशाह उस समय का काठियावाड़ का माना हुआ सेठ था। उसके नाम की हुंडियां उस समय गुजरात काठियावाड़ नगरों में चलती थीं। लेन-देन का काम करता था। बड़े-बड़े व्यापारी उसी के आश्रित थे। उसी के खज़ाने की देख रेख तथा दीनारों, मोहरों तथा अशर्फियों की थैलियों को गिन कर रखना और धन की संभाल करना, सब ब्राह्मण हीरामन के ही सुपुर्द था। हीरामन के नाम से भी उस समय के गुजरात काठियावाड़ के बड़े-बड़े व्यापारी परिचित थे। ब्राह्मण हीरामन सुबह चार बजे उठ कर अपनी नौकरी पर उपस्थित हो जाता और शाम दस बजे सेठ कौडू के साथ घर वापस आता। उसे वर्ष में केवल एक मास की ही छुट्टी मिलती, जिसके लिए उसकी एक मास की आधी तनखवाह काट ली जाती थी। सेठ कौडू तथा उसकी पत्नी ब्राह्मण हीरामन को बहुत चाहते थे। कई बार सेठ कौडू तथा उसकी पत्नी में झगड़ा हो चुका था कि हीरामन की तनखवाह छुट्टी के समय की न काटी

जाए, पर सेठ कौडू ने अपनी पत्नी की एक न मानी थी। ब्राह्मण हीरामन ने भी सेठ से कभी भी आधी तनख्वाह काटे जाने की तकरार न की थी, क्यों कि उसे सेठ की कंजूस वृत्ति का पता था। दूसरे, उस समय राजस्थान जैसे ऊसर प्रदेश में कोई उपज न थी, जिससे वह अपना व अपनी पत्नी तथा बच्चों का पेट पाल सकता। महीने के दो दीनार लेकर भी वह प्रसन्न था। इसी प्रकार दिन बीतते गये। सोलह वर्ष नौकरी करने के उपरान्त जब एक महीने की छुट्टी लेकर ब्राह्मण हीरामन फिर घर आया, तो उसे अपनी लड़की देवला को देख कर चिन्ता हुई। उस समय 'अरबों' के आक्रमण सिंध प्रदेश पर लगातार हो रहे थे। वे तुर्क आक्रमणकारी कभी-कभी राजस्थान की उज्जवल भूमि पर भी अपना प्रकोप फैला देते थे। वे आक्रमणकारी तुर्क भेड़िये; हिन्दुओं के धन माल, जान तथा उनकी बहू-बेटियों की इज्जत लूटने में बड़ा आनन्द अनुभव करते थे। अब हीरामन की पत्नी ने भी लड़की की शादी करने पर बल दिया। हीरामन की छुट्टी जब दो ही दिन शेष रह गई, तो दोनों पति-पत्नी बड़े उदास थे। जो धन उनको सेठ कौडू से वेतन के रूप में मिलता, वह तो मुशकिल से पेट पालने में ही खर्च हो जाता। अब शादी के लिए धन कहां से इक्ट्ठा हो? ब्राह्मण हीरामन की पत्नी ने हीरामन से कहा, "आप सेठ से लड़की की शादी बारे बात करना, शायद वह हमारे पर दया करें और लड़की की शादी स्वयं ही कर दें, तो हम इस झंझट से छूट जायेंगे और यदि वह ऐसा करता हुआ न दीखे, तो उससे एक सौ दीनार उधार मांग लेना, जिनको वह धीरे-धीरे आपकी तनख्वाह से काट लें।" अपनी पत्नी की बात सुन, हीरामन कुछ देर तो चुप रहा। उसे यह पता था कि सेठ न तो उधार देगा और न ही शादी के लिए सहयोग

देगा। हाँ, एक बात थी कि यदि सेठ की पत्नी उसे मजबूर करे, तो काम हो सकता था। सेठ की अपनी सन्तान तो कोई न थी, पर वह दूसरों के बच्चों से भी प्यार न करता था। अब कुछ देर सोचकर हीरामन ने कहा, "कमला! यह धनवान दिखावे के ही हुआ करते हैं। हम लोग चाहे इनके लिए सिर भी कटवा दें पर ये लोग हमारे कटे हुए सिरों पर जूते पहनकर चलना अपना अधिकार समझते हैं, जब कि हम लोग इनकी अर्थियों को नंगे पांव श्मशान घाट तक पहुंचाते हैं। इनकी अर्थी को चिता पर रखने के उपरान्त भी नमस्कार करते हैं अर्थात मौत के उपरान्त भी हम इनका सम्मान करते हैं और इनसे कुछ आशाएं रखते हैं, पर ये लोग हमारे द्वारा कमाये हुए धन में से भी हमें पूरी मज़दूरी देने में सकोच करते हैं।" अपने पति की यह बात सुनकर भी कमला ने अपनी ज़िद न छोड़ी और अपनी कही हुई बात को सेठ से मनवाने के लिए अपने पति को विवश कर दिया। उसे पूर्ण विश्वास था कि सेठ लड़की का विवाह कर ही देगा। कमला को सेठ से वास्ता न पड़ा था, पहचान न थी, इसलिए वह सोचती थी कि इतना बड़ा सेठ, जिसका कारोबार बड़े-बड़े नगरों में है, अवश्य ही उसको लड़की के विवाह में उसकी पूरी सहायता करेगा। उसको क्या पता था कि कई लोग केवल धन के पहरेदार ही हुआ करते हैं। खर्च करने की उनको ईश्वर की ओर से कोई अनुमति नहीं होती। खैर, हीरामन ने अपनी पत्नी की बात मान ली और दो दिन बाद वह घर से पुनः काठियावाड़ की ओर चल दिया।

काठियावाड़ पहुँच कर एक दिन उसने खाना खाने के उपरान्त सेठ कौड़ू से बात की, बोला, "सेठ जी, मेरी लड़की अब यौवन-सम्पन्न है। समय भीषण है। यदि आप कुछ सहायता करें, तो उसका विवाह कर दिया जाये, अन्यथा आप जो कुछ वेतन

देते हैं, वह तो घर के खान-पान में ही लग जाता है। इसलिए अब लड़की का विवाह आप की सहायता से ही हो सकता है। सेठ कौड़ू ने जब हीरामन की यह बात सुनी तो उसके तेवर बदल गये बोला, "हीरामन! कैसी सहायता? जो आप हमारे पास काम करते हैं, उसकी तनख्वाह आपको प्रतिमास दे दी जाती है। विवाह आपके बच्चों का है, मेरे बच्चों का नहीं। यह आपका ही कर्त्तव्य है मेरा नहीं। इसका यह मतलब नहीं कि हम आप के बच्चों के लिए अपना खज़ाना खाली कर दें। यदि मैं ऐसा करने लगूं, तो शाम को सारा कारोबार ही ठप्प हो जाए। यह कभी नहीं होगा। जो काम आपका है, वह आपको ही करना है।" सेठ का यह भाषण सुनकर हीरामन चुप हो गया। सेठ की पत्नी ने अब बड़ा ज़ोर डाला, बोली, "देखो! हमारा तो कुछ है ही नहीं, हीरामन ने हमारी बड़ी सेवा की है। इसी की लड़की का दान कर लेंगे।" अब सेठ ने मुस्करा कर अपनी पत्नी की ओर देख कर कहा, "यदि औरतों की बात हम मानने लगें तो खजाना खाली कर बैठें। मेरे जीते जी व्यर्थ में एक पाई नहीं जा सकती, हां, एक वर्ष का वेतन पेशगी राशि के रूप में दे सकता हूँ, जो कि अगले साल के वेतन से काट लिया जावेगा। इससे अधिक इमदाद करना मेरे लिए कठिन है।" अब हीरामन तथा सेठ की पत्नी दोनों चुप थे। उनको सेठ की आदत का पता था। यदि और बोलते तो तकरार हो जाने का भय था। ज्यों-त्यों करके हीरामन ने समय काटा। मन करता था कि नौकरी छोड़ दे, पर करे भी क्या? अब तो उस की आयु भी लगभग पैंतालीस वर्ष की हो रही थी। सारी आयु और कोई काम ही नहीं किया था। वर्ष बीतने वाला था। छुट्टी का समय समीप आ रहा था। हीरामन को चिन्ता थी कि घर जाकर अपनी पत्नी को क्या उत्तर देगा। पहले तो जब वह घर जाता, तब बड़ी बड़ी

डोगे मारता था। सेठ की अमीरी के पुल बांधता था, पर सेठ की कंजूसी का केवल उसी को ही पता था, उसकी पत्नी को नहीं। ज्यों २ हीरामन की छुट्टी का समय समीप आ रहा था, हीरामन की पत्नी खुशियां मना रही थी। उसे पूर्ण विश्वास था कि सेठ उसकी लड़की देवला का विवाह करना मान ही गया होगा। ज्यों-त्यों दिन बीते, हीरामन घर आया। जैसे पहले खुशी-खुशी घर आता था, इस वर्ष ऐसा न था। हीरामन उदास था। पहले ही दिन हीरामन की पत्नी ने पूछा 'अजी! आपने बताया ही नहीं कि सेठ ने क्या उत्तर दिया? मुझे तो उम्मीद है कि वह देवला का विवाह करना मान ही गया होगा।' कमला की बात सुन कर हीरामन को बड़ा दुःख हुआ। उदास मुद्रा में बोला, 'कमला! कैसी बातें करती है तू? लड़की हमारी है या सेठ की, जो वह विवाह कर दे। यह सब कुछ हमें ही करना पड़ेगा।' 'आखिर उसने कुछ कहा भी या अपने मुंह से जो कुछ दिल में आए, कहे जा रहे हो? कमला ने पुनः पूछा "हां, उसने यही तो कहा, जो कह रहा हूं कि लड़की हीरामन की और शादी करे कौड़ूशाह! यह कभी न होगा। हां एक बात कही है कि एक वर्ष का वेतन चौबीस दीनार पहले दे देगा और फिर हमारी तनख्वाह से काटेगा। हीरामन ने कमला की ओर देख कर कहा, 'चौबीस दीनारों से क्या करेंगे? और वह भी हमारे ही वेतन से काटे जावेंगे, ऐसा नहीं होगा।' कमला ने आंखें खोल कर हीरामन की ओर देखकर कहा मानो वह सेठ की इस ग़लत नीति पर कुपित हो उठी हो और सेठ के धन पर अपना अधिकार रखती हो— 'अच्छा! तो फिर वह सीधे ढंग से धन नहीं देगा।' कमला ने फिर कहा। 'तो उल्टा ढंग तेरे पास कौनसा है? जो तू अपनाएगी? कैसी बातें करती है? भला बड़े आदमी से टक्कर कैसे ले सकते हैं?' हीरामन ने खीझकर कहा। कुछ क्षण दोनों चुप रहे। कमला—

'तो फिर ऐसे करें कि जब अगले वर्ष छुट्टी आना हो, तो खजाने से पांच सौ दीनारों की थैली चोरी उठा कर रख लेना। आखिर हमें भी तो काम करना है।' अब ज्यों-त्यों करके हीरामन ने यह छुट्टी भी काट ली। दोनों पति-पत्नी को यह बात सारी छुट्टी चलती रही। हीरामन पहले तो चोरी करने को नहीं माना, पर बाद में मान ही गया। अब हीरामन ने सोच लिया कि अगले वर्ष छुट्टी आने से पूर्व पांच सौ दीनारों की थैली बाहर रख छोड़ेगा और घर को आती बार उसे उठा लाएगा। सेठ को तो पता लग ही न सकेगा। सेठ तो स्वयं न थैलियों को गिनता था, न उठाकर इधर-उधर रखता था।

छुट्टी समाप्त हुई। हीरामन घर से चल दिया, पर उसका मन धड़क रहा था, चोरी कैसे करेगा? हीरामन काठियावाड़ पहुँचा, काम में व्यस्त हो गया। उसने अपने मन की बात किसी को न बतलाई। कभी स्वप्न में थैली उठाता। कभी स्वप्न में थैली उठाता पकड़ा जाता, तो बिदक उठता, गहरी निद्रा टूट जाती। ज्यों-त्यों करके वर्ष बीतने पर आया। छुट्टी के दिन समीप आये तो हीरामन का मन धड़कने लगा। हीरामन को दो दिन चोरी की फिक्र में नींद भी नहीं आई।

छुट्टी जाने को दो दिन शेष थे। अब रात के दस बज रहे थे। सेठ ने हीरामन को ख़ज़ाने को बन्द करने का हुक्म दिया। हीरामन ख़ज़ाने की ओर बढ़ा। उसने पांच सौ दीनारों की थैली को उठाने के लिए हाथ बढ़ाया, पर क्या देखता है कि एक बड़ा सांप थैली के साथ ही लिपटा पड़ा था। सांप ज़ोर से फुंकारा। हीरामन का पसीना छूट गया। वह भय से कांपने लगा। उस ने फिर दिल कड़ा करके एक दूसरी पांच सौ दीनारों की थैली की ओर हाथ बढ़ाया। सांप फिर उसकी ओर लपका। सेठ अब घर

जा चुका था, पर हीरामन खज़ाने में खड़ा अपनी किस्मत को कोस रहा था। हीरामन इस दृश्य को देखकर बड़ा भयभीत हुआ। हीरामन अब उस दहाने पर खड़ा था कि इस ओर गिरे तो कुआं उस ओर गिरे तो खाई। यदि आज थैली न उठाता तो फिर समय ही नहीं था। छुट्टी की तिथि बढ़ाता तो शक हो जाता। अब हीरामन ने पुन: मन को कड़ा करके तीसरी थैली का ओर हाथ बढ़ाया। सांप उस थैली की ओर लपका। अब हीरामन इतना भयभीत हुआ कि उसे अपने तन की भी सुध न रही। तब खज़ाने के एक कोने से आवाज आई। 'अरे ब्राह्मण ! हमें पता है तुझे धन की बड़ी आवश्यकता है, पर यह सारा धन गज़नी में रहन वाल 'महमूद गजनवी' का है। यह सेठ 'कौड़ू' इस धन का पहरेदार है। इसे एक कौड़ी खर्च करने या किसी को दे देने का अधिकार नहीं। यदि तू अधिक कोशिश करेगा तो मारा जाएगा, चौथी बार यदि थैली उठाने की चेष्टा की, तो हम तुझे बाहर नहीं जाने देंगे। यदि तुझे धन की आवश्यकता है, तो गज़नी चला जा और महमूद, जो अभी लड़का है, उसकी आयु अभी तेरह वर्ष की है। उससे कोई चिट्ठी लेकर इस खज़ाने में रख दे, जितना धन तुझे चाहिए, उससे लिखवा ला, फिर हम तुझे उठाने देंगे। अब तू अधिक चेष्टा मत कर' हीरामन खजाने के अन्दर से आई आवाज़ को सुन कर सचेत हुआ। उसने झट खज़ाना बन्द किया और चल दिया। अब हीरामन घर को छुट्टी जा रहा था, पर अब पिछले वर्ष की अपेक्षा प्रसन्न था। आशा की किरण उसे दिखाई दे रही थी। हीरामन घर पहुँचा। उसकी पत्नी इस बार बड़ी प्रसन्न थी कि हीरामन चोरी करके पांच सौ दीनार ले आया होगा। अब लड़की देवला का विवाह बड़ी धूमधाम से होगा, पर यहां बात ही और

थी। पहले ही दिन हीरामन की पत्नी ने बात चला दी। हीरामन ने एक लम्बी सांस छोड़ी, कहा 'धन तो भाग्य की बात है। जब भाग्य में ही न हो, तो धन कैसे आए ?' कमला हीरामन की बात को न समझ सकी। अब हीरामन ने अपने साथ घटी सारी घटना कमला से कह सुनाई। कमला बड़ी प्रसन्न थी। उसने हीरामन को दसरे ही दिन गजनी जाने को कहा। हीरामन पहले ही दस दिन पैदल चल कर आया था, थका हुआ था। तीसरे दिन गज़नी जाने को पत्नी-हठ पर मानना ही पड़ा। अब हीरामन धन के चक्कर में फंस चुका था।

तीसरे दिन हीरामन गजनी के लिए चल दिया। भूलता भटकता कुछ समय बाद वह गज़नी पहुंचा। वहां महमूद का पता पूछा, तो उसे पता चला कि महमूद अपनी मां के साथ गज़नी के दूसरे भाग में रहता है। हीरामन नगर के दूसरे भाग में गया। शाम हो चुकी थी। महमूद कुछ लड़कों के साथ एक मैदान में खेल रहा था। हीरामन ने महमूद से मिलने के लिए एक लड़के से कहा। महमूद, जो पास ही खड़ा था, झट आगे आ गया 'मैं हूं महमूद कहिए क्या काम है?' तब हीरामन ने गिड़गिड़ाते हुए महमूद से अपनी लड़की के विवाह की बात की और धन लेने की बात चलाई। महमूद बोला 'भाई जान! आप बहुत दूर से आए हो, पर मैं आपकी क्या सहायता कर सकता हूं। खैर एक बात है मुझे दो दीनार रोज के खर्च करने को मिलते हैं, यदि आप 10 दिन यहां रहें, तो मैं आपको दस दिन के बीस दीनार दे सकता हूं।' महमूद से यह बात सुनकर हीरामन उदास हुआ। फिर जब उसने महमूद को मुलक हिन्दोस्तान के नगर काठियावाड़ में पड़े धन के बारे और कौडूशाह के बारे तथा अपने साथ घटी घटना वाली बात कह सुनाई, तो महमूद मुस्कराया, बोला—'भाई जान, इन सब बातों को तो मैं

नहीं जानता, पर यदि ऐसा है, तो जितना आप चाहो, दे सकता हूं। कहिए कैसे दूं?' महमूद की इस बात को सुन हीरामन बहुत प्रसन्न हुआ, बोला 'आप धन्य हैं! यदि आप दे सकते हैं तो चिट्ठी लिख दें, जैसा कि खज़ाने के पहरेदार 'साँप' का आदेश है।' अब महमूद हीरामन को घर ले गया। रात को हीरामन महमूद के पास रहा और दूसरे दिन उसने हीरामन को पांच सौ की बजाय पांच हज़ार दीनार ले लेने की चिट्ठी लिख दी। चिट्ठी के नीचे अपने हस्ताक्षर तथा तिथि लिख दी।

अब हीरामन प्रसन्न था। चिट्ठी को लेकर वह घर की ओर बढ़ा। कई दिन पैदल चलने के उपरान्त घर पहुचा। उधर महमूद भी प्रसन्न था कि उसका धन हिन्दोस्तान में पड़ा है। उन दिनों महमूद अपनी मां के साथ अपने बाप सुबुक्तगीन से अलग रहता था, क्योंकि उन दिनों सुबुक्तगीन से उसकी मां तथा महमूद के सम्बन्ध अच्छे नहीं थे। ये सम्बन्ध बिगड़ते ही गये। तभी तो 997 ई० में सुबुक्तगीन की मृत्यु के बाद महमूद के भाई इस्माईल को गज़नी की गद्दी पर बैठाया गया था। महमूद का मन अब हिन्दोस्तान में पड़े अपने धन के ले लेने को उतावला हो रहा था।

उधर हीरामन भी बड़ा प्रसन्न था, हीरामन की पत्नी भी महमूद का पत्र बार २ देखती। छुट्टी समाप्त हो रही थी। अब दो दिन ही शेष थे। हीरामन की पत्नी ने कहा 'अब की बार पांच हज़ार की थैली उठाना, पर देखना कहीं चिट्ठी गुम न हो जाए।' पत्नी की बात सुनकर हीरामन हंसा, बोला— मैं कोई मूर्ख हूं कि कम उठाऊँ।' हीरामन की छुट्टी अब समाप्त हो चुकी थी। वह अब खुशी २ काठियावाड़ की ओर चल दिया। महमूद द्वारा दिया गया पत्र उसने सम्भाल कर अपने थैले में रख लिया था। काठियावाड़ पहुँच कर उस ने पत्र को अपने बिस्तर के तकिए में रख दिया

और पहले की भांति काम में व्यस्त हो गया। उधर उसने अपनी लड़की देवला के रिश्ते की बात सोमनाथ के मन्दिर के पुजारी के पुत्र सूर्यभानु से कर देने की पक्की कर ली। सूर्यभानु बड़ा होनहार युवक था। अब अपने पिता के साथ सोमनाथ के मन्दिर में पूजा आदि का काम करता था। हीरामन ने अब अपनी पत्नी को देवला के रिश्ते के बारे सूचना दे भेजी। दिन बीतते गये। अब हीरामन की छुट्टी का समय समीप आ रहा था। इसी छुट्टी मे उसने देवला का विवाह करने की सोच रखी थी।

एक दिन उसने देवला की शादी की बात कौड़ूशाह से फिर चलाई तो कौड़ूशाह कहने लगा, "क्या धन का बन्दोबस्त हो गया है ?" हीरामन ने अब थोड़ी देर चुप रहकर कहा "हां ! बन्दोबस्त हो गया है, किसी ने उधार देने का वायदा कर ही लिया है।" अब कौड़ूशाह ने दोबारा नहीं पूछा, क्योंकि उसे आशंका थी कि कहीं हीरामन धन न मांग बैठे। दिन बीतते गए। हीरामन पहले की भांति व्यस्त था।

अब हीरामन की छुट्टी को दो दिन शेष थे। आज हीरामन ने महमूद का दिया वह पत्र अपनी जेब में डाल लिया था। सारा दिन काम करने के उपरान्त हीरामन ने रात को वह पत्र खज़ाने की एक अलमारी में रख दिया। अरबी भाषा में लिखा महमूद का वह पत्र ज्यों ही अलमारी में हीरामन ने रखा, त्यों ही जादू की भांति पाँच हज़ार दीनारों की एक थैली अकस्मात् अलमारी से नीचे गिरी, जिस में बंधे दीनारों की खनखनाहट की आवाज़ को केवल हीरामन ही सुन सका था। सेठ के कानों में वह आवाज़ न पड़ी। हीरामन इस दृश्य को देख कर चकित रह गया। हीरामन ने अब वह दीनारों की थैली उठाई और चल दिया। ज्योंहि उसने कदम आगे रखा त्योंहि खज़ाने से आवाज़ आई 'घबराओ नहीं, हीरामन !

अब यह धन आपको दे दिया है। आप अब निश्चित होकर जाओ। हीरामन ने एक बार खजाने की ओर देखा और फिर आगे चल दिया। खजाने का ताला बन्द करके वह अब सीधा अपने कमरे को गया। दीनारों की थैली अब उसने कमरे के कोने में रख दी थी। भोजन करने के उपरान्त वह लेट गया।

सवेरा होने पर हीरामन अपने गांव की ओर चल दिया। सेठ ने उसे लड़की की शादी के लिए अपनी ओर से केवल पांच दीनार दिए थे। हीरामन कई दिन का पैदल सफर करने के उपरांत अपने गांव पहुचा। पांच हजार दीनारों की थैली को देख हीरामन की पत्नी कमला बड़ी प्रसन्न थी। अब क्या था, विवाह की तैयारियां बड़ी धुमधाम से होने लगीं। हीरामन ने अब अपनी छुट्टी में ही अपनी लड़की देवला का विवाह उदयभानु के पुत्र सूर्यभानु से कर दिया था।

समय बीतते देर नहीं लगती। उधर ग़ज़नी में 997 ई० में सुबुक्तगीन की मृत्यु पर उसके बड़े लड़के इस्माईल को गद्दी पर बिठाया गया था। महमूद यह सहन नहीं कर सका। वह शीघ्र ही अपने भाई को पराजित करके ग़जनी के सिंहासन पर बैठ गया। सिंहासन पर बैठने से कुछ समय बाद उसने भारत विजय की योजना बनाई। एक तो उसने पहले से ही भारत के धन-वैभव के बारे में सुन रखा था। दूसरे अब से तेरह वर्ष पूर्व, जो पत्र उसने हिन्दोस्तान से आए व्यक्ति को दिया था, वह बात भी वह भूला न था। इसलिए उसने भारत पर आक्रमण करने की योजना बनाई तथा सबसे पहला आक्रमण 1001 ई० में राजा जयपाल पर कर दिया। दूसरा आक्रमण 1008 ई० में जयपाल के लड़के अनंगपाल पर किया। तीसरा 1009 ई० में कांगड़ा मन्दिर पर किया। चौथा 1014 ई० में थानेश्वर के मन्दिर पर किया। 1018,1019 ई० में

मथुरा तथा कन्नौज को लूटा। अब उसके उपरान्त महमूद ने 1021 ई० में कालिंजर पर आक्रमण कर दिया। इस आक्रमण में विजय के उपरान्त उसने सोमनाथ के हिन्दुओं के प्रसिद्ध मन्दिर को लूटने की योजना बनाई। सोमनाथ के मन्दिर के विषय में उसने बहुत सी कहानियां सुन रखी थीं। उसने सुन रखा था कि यदि कोई व्यक्ति नमस्कार करने हेतु शिवलिंग के पास पहुंचता था तो भगवान् शिव जिस व्यक्ति पर प्रसन्न होते थे, उसे स्वयं अपने हाथ से साक्षात् आशीर्वाद देते थे। इस बात को सुनकर पहले तो महमूद सोमनाथ के इस प्रसिद्ध मन्दिर पर आक्रमण करने से झिझकता रहा। फिर उसने ग़ज़नी से दो विश्वस्त सरदार सोमनाथ भेजे, ताकि वह इस बात का पता कर सकें। वह दोनों सरदार यात्रियों के हिन्दु वेष में सोमनाथ पहुंचे। उन्होंने इस बात की पूरी छानबोन की। कुछ समय वहां रहने के उपरांत उन्होंने ग़ज़नी जाकर महमूद को यह सारी बात झूठी बतलाई। साथ ही उन्होंने सोमनाथ मन्दिर पर आक्रमण करने के ढंगों से भी परिचित करवा दिया तथा मन्दिर की भव्यता और पाषाण-निर्मित शिवलिंग का बिना सहारे खड़ा रहना तथा मन्दिर की छत पर जड़े हीरे-मोतियों की बाबत बतलाया। मन्दिर में पड़ी हिन्दुओं की इस अतुल धन सम्पदा को हथियाने के लिए महमूद लालायित हो उठा। भारी सेना तैयार की गई। दिसम्बर मास 1025 ई० में महमूद ग़ज़नी से चल कर मुलतान-अजमेर से होता हुआ राजपूताने के मरूस्थल को पार करके सोमनाथ पहुंचा। राजपूतों ने महमूद की सेना का सामना किया। तीन दिन तक घमासान युद्ध होता रहा। आशा थी कि इस आक्रमण में महमूद की हार होगी, पर महमूद को उन दोनों सरदारों ने बतलाया कि जब तक मन्दिर की चोटी पर हिन्दुओं का भगवा ध्वज लहराता रहेगा, तब तक इनको पराजित कर पाना कठिन होगा। महमूद ने उस

ध्वज को उखाड़ने के लिए रात को उन सरदारों को भेज दिया। ध्वज की रक्षा का दायित्व उदयभानु के पुत्र सूर्यभानु पर था। रात को वे दोनों सरदार जब झण्डे के पास पहुंचे, तो सूर्यभानु ने उन पर कृपाण का प्रहार कर दिया। सूर्यभानु कुछ क्षण लड़ता रहा, पर महमूद के भेजे हुए कुछ और सैनिक वहां पहुंच गये। सूर्यभानु को अब इन सब सैनिकों ने बन्दी बना लिया तथा झंडा वहां से उखाड़ दिया। सूर्यभानु को बन्दी बनाकर महमूद के सामने पेश कर दिया गया। महमूद ने उसका वध करना उचित न समझा, क्योंकि उसे यह आशा थी कि सूर्यभानु द्वारा और भी जानकारी ली जा सकती थी। सूर्यभानु ने कुछ भी बतलाने से इन्कार कर दिया। तब महमूद के आदेश से उसे जंजीरों से जकड़ कर वहीं बांध दिया गया। चौथे दिन प्रात:काल ही महमूद की सेना 'अल्ला हू अकबर' के नारे लगाती हुई मन्दिर की दीवारों पर चढ़ गई। राजपूत बड़ी वीरता से लड़ रहे थे पर सूर्योदय होने पर जब राजपूतों ने मन्दिर पर ध्वज न देखा, तो उनका विश्वास टूट गया। मन्दिर की ओर बढ़ती हुई राजपूतों की सेनाएं रास्ते से मुड़ गईं। महमूद की जीत हुई। इस युद्ध में लगभग 5000 हिन्दू काम आए। महमूद ने मूर्ति को तोड़ डाला। महमूद को इस लूट में कोई दो करोड़ दीनारों का माल हाथ लगा।

अब वह गुजरात को लूटता हुआ काठियावाड़ पहुंचा। काठियावाड़ के एक-एक सेठ को लूट लिया गया। अब महमूद की सेना के सिपाही कौड़ूशाह के खज़ाने पर लपक पड़े। कौड़ूशाह सामने खड़ा कुछ न बोल सका। ब्राह्मण हीरामन ने कौड़ूशाह के आदेश पर सारा खजाना निकालकर महमूद की सेना के आगे रख दिया। अब महमूद भी कुछ सैनिकों के साथ कौड़ू सेठ की अतुल सम्पदा को देखने आगे बढ़ा। सफेद दाढ़ी वाला ब्राह्मण हीरामन

महमूद को पहचान न सका, क्योंकि उस समय महमूद की आयु चौव्वन वर्ष की थी और जब ब्राह्मण हीरामन महमूद से गज़नी म मिला था, तो उसकी आयु केवल तेरह वर्ष की था। महमूद ने हीरामन को देखकर कहा--'अरे बूढ़े सब कुछ निकाल दे, अन्यथा जान की खर नहीं' महमूद के मुह से यह शब्द निकले ही थे कि नेजां वाल चार नौजवान सैनिक हीरामन के चारों ओर नेजे तान कर खड़े हा गए। हीरामन थर २ कांपने लगा, बोला, "महाराज! इसमें केवल पांच हजार दीनार कम हैं," "वह भी निकाल कर रख दे, अन्यथा जान से हाथ धोने पड़ेंगे" एक सिपाही ने हीरामन की छाती पर नेजा रखते हुए कहा। "महाराज! वह धन मैंने गज़नी के एक युवक "महमूद" की चिट्ठी द्वारा अपनी लड़की के विवाह पर खर्च कर लिया था। यह घटना आज से चालीस वष पहले की है। अब कहां से निकालूं?" हीरामन हाथ बांधे थर २ कांप रहा था। हीरामन की इस बात को सुन कर सभी सिपाही महमूद की ओर देखने लगे। महमूद आगे बढ़ा, बोला 'कहां है वह चिट्ठी महमूद की?" हीरामन अब लड़खड़ाता हुआ खजाने के दरवाजे की ओर बढ़ा। महमूद भी अब चालीस वर्ष पूर्व की उस घटना को याद करने लगा। कुछ क्षण बाद हीरामन ने लड़खड़ाते कांपते हाथों से महमूद की वह चिट्ठी जो चालीस वर्ष पूर्व गज़नी से लाया था, महमूद की ओर बढ़ा दी। महमूद ने चिट्ठी खोली, साफ लिखा था "पांच हजार दीनार हीरामन को उठाने दिये जाएं-महमूद-गज़नी——दिनांक——।"

महमूद ने जब वह अपने हस्ताक्षरों वाली 'चिट्ठी' पढ़ी, तो वह दंग रह गया। फिर हीरामन अपने साथ घटी सारी घटना कह सुनाई। सभी सैनिक तथा सेनापति दंग रह गये। 'हीरामन!

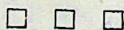
आपका दामाद कहां है ? हम उससे मिलना चाहते हैं' महमूद ने हीरामन से पूछा। 'महाराज ! वह तो सोमनाथ के मन्दिर में पूजा का काम करता है। सुना है सोमनाथ के मन्दिर पर आपके आक्रमण में कुछ पुजारी भी मारे गये हैं। भगवान् खैर' अन्तिम शब्द बोलते हीरामन का गला रुंध गया, आंखें आंसुओं से भर आईं। 'हीरामन ! आपकी वह लड़की कहां है ?' महमूद ने अब और प्रश्न किया। हीरामन अब खामोश था। हीरामन देवला के बारे में कुछ भी बताना नहीं चाहता था क्योंकि उसने बहुत से मुसलमान आक्रमणकारियों द्वारा हिन्दुओं की बहु-बेटियों पर ढाए गये अत्याचारों की कहानियां सुन रखी थीं। हीरामन को खामोश देखकर महमद सब कुछ भांप कर बोला— 'हीरामन घबराओ नहीं. आपकी बेटी अब मेरी बेटी है,' महमूद के इन शब्दों को सुनकर हीरामन की जान में जान आई, बोला "महाराज ! सोमनाथ पर आपके आक्रमण की बात सुनकर मैं आपकी लड़की को काठियावाड़ ले आया था। वह मेरे पास ही है" अब महमूद देवला से मिलने हीरामन के साथ गया। देवला ने अपने पति को कैद होने का समाचार पहले ही सुन रखा था। वह महमूद को अपने सामने देखकर घबराई, पर महमूद ने कहा 'बेटी ! तू हीरामन की बेटी ही नहीं, मेरी भी बेटी है।' महमूद की यह बात सुन कर देवला ने अपने पति के कैद होने की दास्तान कह सुनाई। अब महमूद, देवला तथा हीरामन वहां आए, जहां कैदियों को सैनिकों के घेरों में खड़ा किया था। देवला ने अपने पति सूर्यभानु को पहचान लिया, पर चुप खड़ी रही, कुछ न बोली। "बेटी ! बोल तेरा पति कौन है, ताकि उसे छोड़ दिया जावे।" देवला चुप खड़ी रही। अब सब कैदी देवला की ओर कातर दृष्टि से देखने लगे।

महमूद को पहचान न सका, क्योंकि उस समय महमूद की आयु चौव्वन वर्ष की थी और जब ब्राह्मण हीरामन महमूद से गजनी में मिला था, तो उसकी आयु केवल तेरह वर्ष की था। महमूद ने हीरामन को देखकर कहा —'अरे बूढ़े सब कुछ निकाल दे, अन्यथा जान की खैर नहीं' महमूद के मुंह से यह शब्द निकले ही थे कि नेजां वाले चार नौजवान सैनिक हीरामन के चारों ओर नेजे तान कर खड़े हो गए। हीरामन थर २ कांपने लगा, बोला, "महाराज! इसमें केवल पांच हजार दीनार कम हैं," "वह भी निकाल कर रख दे, अन्यथा जान से हाथ धोने पड़ेंगे" एक सिपाही ने हीरामन की छाती पर नेजा रखते हुए कहा। "महाराज! वह धन मैंने ग़ज़नी के एक युवक "महमूद" की चिट्ठी द्वारा अपनी लड़की के विवाह पर खर्च कर लिया था। यह घटना आज से चालीस वर्ष पहले की है। अब कहां से निकालूं?" हीरामन हाथ बांधे थर २ कांप रहा था। हीरामन की इस बात को सुन कर सभी सिपाही महमूद की ओर देखने लगे। महमूद आगे बढ़ा, बोला 'कहां है वह चिट्ठी महमूद की?" हीरामन अब लड़खड़ाता हुआ खजाने के दरवाजे की ओर बढ़ा। महमूद भी अब चालीस वर्ष पूर्व की उस घटना को याद करने लगा। कुछ क्षण बाद हीरामन ने लड़खड़ाते कांपते हाथों से महमूद की वह चिट्ठी जो चालीस वर्ष पूर्व ग़ज़नी से लाया था, महमूद की ओर बढ़ा दी। महमूद ने चिट्ठी खोली, साफ लिखा था "पांच हजार दीनार हीरामन को उठाने दिये जाएं-महमूद-ग़ज़नी——दिनांक——।"

महमूद ने जब वह अपने हस्ताक्षरों वाली 'चिट्ठी' पढ़ी, तो वह दंग रह गया। फिर हीरामन अपने साथ घटी सारी घटना कह सुनाई। सभी सैनिक तथा सेनापति दंग रह गये। 'हीरामन!

आपका दामाद कहां है ? हम उससे मिलना चाहते हैं' महमूद ने हीरामन से पूछा। 'महाराज ! वह तो सोमनाथ के मन्दिर में पूजा का काम करता है। सुना है सोमनाथ के मन्दिर पर आपके आक्रमण में कुछ पुजारो भी मारे गये हैं। भगवान् खैर' अन्तिम शब्द बोलते हीरामन का गला रुंध गया, आंखें आंसुओं से भर आईं। 'हीरामन ! आपकी वह लड़को कहां है ?' महमूद ने अब और प्रश्न किया। हीरामन अब खामोश था। हीरामन देवला के बारे में कुछ भी बताना नहीं चाहता था क्योंकि उसने बहुत से मुसलमान आक्रमण-कारियों द्वारा हिन्दुओं की बहु-बेटियों पर ढाए गये अत्याचारों की कहानियां सुन रखी थीं। हीरामन को खामोश देखकर महमद सब कुछ भांप कर बोला— 'हीरामन घबराओ नहीं. आपकी बेटी अब मेरी बेटो है,' महमूद के इन शब्दों को सुनकर हीरामन की जान में जान आई, बोला "महाराज ! सोमनाथ पर आपके आक्रमण की बात सुनकर मैं आपकी लड़की को काठियावाड़ ले आया था। वह मेरे पास ही है" अब महमूद देवला से मिलने हारामन के साथ गया। देवला ने अपने पति को कैद हाने का समाचार पहले ही सुन रखा था। वह महमूद को अपने सामने देखकर घबराई, पर महमूद ने कहा 'बेटी ! तू हीरामन की बेटी हो नहीं, मेरो भो बेटी है।' महमूद की यह बात सुन कर देवला ने अपने पति के कैद होने की दास्तान कह सुनाई। अब महमूद, देवला तथा हीरामन वहां आए, जहां कैदियों को सैनिकों के घेरों में खड़ा किया था। देवला ने अपने पति सूयभानु को पहचान लिया, पर चुप खड़ो रही, कुछ न बोली। "बेटी ! बोल तेरा पति कौन है, ताकि उसे छोड़ दिया जावे।" देवला चुप खड़ी रही। अब सब कैदी देवला की ओर कातर दृष्टि से देखने लगे।

देवला खामोश थी। अब महमूद ने पुनः कहा 'बेटी ! जल्दी कहो, तुम क्या चाहती हो ?' देवला महमूद की इस बात को सुनकर बोली 'महाराज ! यदि आप मुझे पूछते हैं तो मैं यह कहती हूं कि मेरे पति को भी इन्हीं के साथ रखा जावे। मैं वैधव्य-जीवन व्यतीत कर सकती हूं, पर एक को मुक्त करवा कर दूसरों को बन्दी नहीं देख सकती।' महमूद ने देवला की इस बात को सुन कर कुछ क्षण सोचा, फिर वह बोलने लगा 'बेटी ! भारत की नारियों के बारे में जैसा सुना था, आज साक्षात् देख रहा हूं। अब तुझे कह दिया है, तुम जो चाहती हो, वही होगा। अब महमूद ने अपने सैनिकों की ओर देखकर कहा 'सभी बन्दियों को मुक्त कर दो।' दूसरे ही क्षण सभी बन्दी मुक्त थें। अब महमूद ने पांच हजार दीनारों की एक थैली उठाकर हीरामन को देते हुए कहा 'ले हीरामन, पहले वाला पांच हजार दीनार आपको मेरे ग़ज़नी वाले आदेश से मिला था और अब यह पांच हजार दीनार मेरे भारत के धन से आपको और दिया जाता है। महमूद ने यह शब्द कह कर सेना को चलने का आदेश दे दिया। अब महमूद भारत की इस अतुल सम्पदा को लेकर ग़ज़नी की ओर बढ़ा।



"पेड़ कभी धोखा नहीं देते"

बसन्त ऋतु की सांझ, गांव का खुला वातावरण, कहीं कोयल की कूक तो कहीं कुत्तों के भौंकने की आवाज आ रही थी। पूर्णमाशी का पूरा चांद अपनी चांदनी को धरा पर बिखेर कर चांदी का सा प्रकाश दे रहा था। दूर दूर कहीं ग्वालों की बांसुरी की आवाज हृदय की वीणा को झंकृत कर रही थी। ग्वाले अपने गोधन को लेकर गांव की ओर बढ़े आ रहे थे। बछड़े गऊओं के पीछे उछल उछल कर अपना अद्भुत नृत्य दिखा रहे थे। उनके गले की घंटियों की टन टन की आवाज से वातावरण में और रौनक बढ़ रही थी। दूर दूर बने मकानों में अब कहीं कहीं उजाला हो रहा था। लोग रोटी पकाने के लिए आग जला रहे थे। जिसका धुंआ आकाश की ओर चढ़ रहा था। प्रत्येक घर के पीछे आम के एक दो पेड़ थे जिन पर कभी कभी कोयल की आवाज होती थी।

तभी दो नन्हे चचरे भाई गोपाल और मदन चांदनी में किलकारियां मारते हुए अपने पिछवाड़े की ओर भागे जा रहे थे। गोपाल की आयु सात वर्ष और मदन की आयु छः वर्ष की थी। वह किलकारियां मारते हुए भाग रहे थे। भागते २ वे दोनों उन आमों के पेड़ों के नीचे चले गये जो गोपाल के बाप ने लगाए थे। गोपाल झट एक आम के वृक्ष से लिपट गया और मदन दूसरे वृक्ष से वह दोनों बच्चे एक दूसरे से आंख मिचौनी खेलने लगे। गोपाल बोला "ये आम के वृक्ष मेरे पिता ने लगाये हैं।" मदन कहने लगा "ये आम के वृक्ष मेरे ताया ने लगाए हैं।" फिर वह दोनों एक एक वृक्ष पर चढ़ गए। बृक्ष छोटे २ थे दशहरी आमों के वृक्ष थे। वे दोनों वृक्ष गोपाल के बाप ने उसी वर्ष लगाए थे, जिस वर्ष गोपाल पैदा हुआ था। जब वे वृक्ष एक वर्ष के हुए थे तो उनको बूर पड़ा

था जोकि गोपाल के बाप ने तोड़ दिया था। तब गोपाल की मां ने फिर कहा था "बूर नहीं तोड़ना चाहिए था। हम देख तो लेते कि आम दशहरी हैं या किसी और नसल के" पर गोपाल के पिता बोले थे, "जिस नसल का पौधा लगाओगे उसी नसल के फल लगेंगे पर समय से पहले फलों के भार से पौधों को दबा देने से उनकी आयु घट जाती है इसलिए मैंने इनका बूर तोड़ा है" उसी वर्ष गोपाल के पिता को मलेरिया बुखार ने आ घेरा था। गांव में कोई औषधालय न होने के कारण गोपाल के पिता उस मलेरिया बुखार से न उठ पाये थे। जिस दिन वह अपनी अन्तिम सांस ले रहे थे तो उन्होंने गोपाल की मां को पास बुलाकर कहा था, "लच्छमी! यह मेरे लगाये हुए दशहरी आमों के पेड़ एक दिन रंग लायेंगे यही मेरी पैन्शन होगी जो मेरे मरने के उपरान्त तुझे पूरी उमर लगी रहेगी। इनकी देखभाल गोपाल से भी बढ़कर करना। बेटा धोखा दे जाता है, पर पेड़ कभी धोखा नहीं देते। यह हर वर्ष अपना फल अपने मालिक को देने से इन्कार नहीं करते" यह सब बात कह कर गोपाल के पिता ने अपनी अन्तिम सांसें पूरी की थीं। घर में कोहराम मचा था और सभी बिलख उठे थे।

गोपाल का चाचा जो फौज में हवालदार था। अपने भाई की मृत्यु की खबर पाकर घर आया था। कुछ दिन रहा और चला गया था। अब घर में गोपाल और गोपाल की मां अकेले रहते थे। गोपाल की चाची जुदा मकान में रहती थी। गोपाल के चाचा और बाप घर से तो जुदा हो चुके थे मकान भी जुदा जुदा थे, पर भूमि इकट्ठी थी। गोपाल का बाप ही भमि को जोतता था जो कुछ भूमि की उपज होती थी वे दोनों परिवार आधा आधा बांट लेते थे। अब गोपाल के पिता की मृत्यु के उपरान्त फसल की बिजाई और कटाई के समय गोपाल का चाचा आता और फसल का काम

करता फसल निकलने पर वे दोनों परिवार पहले की भान्ति आधा आधा बांटने लगे थे पर यह बात अब बहुत देर न चल सकी थी। पहले जब फसल की बिजाई या कटाई होती थी तो भी गोपाल का चाचा अपने भाई की मदद के लिए छुट्टी लेकर आता था पर अब उसे सारा काम अकेले ही करना पड़ रहा था।

इसी ढंग से पांच बीतने के उपरान्त अब पुनः वर्ष की दो महीने की छुट्टी फसल की कटाई के समय गोप ल का चाचा आया तो उसने आंगन में खड़े हो कर अपनी भावज को बुला कर कहा, "भावी ! अब गोपाल थोड़ा काम करने के योग्य हो गया है। मेरा विचार है कि हम भूमि बांट लें फिर अपनी मर्जी से जो फसल बीजना चाहो बीज सकती हो और मैं अपनी मर्जी से बीज सकता हूं जो जितनी मेहनत करेगा उतनी फसल पैदा कर लेगा। अब देवर की इन बातों का गोपाल की मां के पास कोई उत्तर न था और न ही उसे यह पता लग सका था कि यह बातें उसके देवर ने क्यों की थीं। बेचारी ने उसकी हां में हां मिला दी थी उधर गोपाल के चाचा ने सोच रखा था कि भूमि के बंटवारे में दशहरी आमों के पेड़ों को वह पटवारी से मिल मिला कर अपनी ओर करवा लेगा। अगले वर्ष वह नौकरी पूरी करके घर पैन्शन आ रहा था। अब गोपाल का चाचा पटवारी के पास गया और भूमि के पर्चे लेकर उसने तहसील में जाकर भूमि के बंटवारे के कागज भर दिये।

दूसरे वर्ष जब गोपाल का चाचा पुनः छुट्टी आया तो एक दिन पटवारी कानूनगो तथा चौकीदार भी उनके घर आये। भूमि मापी गई और उसके दो भाग कर दिये गए। दशहरी आमों वाला भाग गोपाल के चाचा को और दूसरा भाग गोपाल की मां को बांट दिया गया। गोपाल की मां पटवारी और कानूनगो के पास

बहुतेरी गिड़गिड़ाई पर उसकी एक न सुनी गई उसे यह कहकर ही तसल्ली दी गई कि उसे वृक्षों की कीमत मिल जावेगी। गोपाल की मां को वृक्षों की कीमत से कोई सरोकार नहीं था। वह वृक्षों को बेचना नहीं चाहती थी। जब पटवारी और कानूनगो चले गये तो उस के कानों में अपने पति की आवाज गूंजने लगी, "लच्छमी! पेड़ कभी धोखा नहीं देते" पर लच्छमी को अपने पति की बात पर तसल्ली नहीं आ रही थी वह उसी दिन गांव के सरपंच के पास गई। पंचायत के सभी पंचों से मिली। सबने उसे दूसरे दिन गांव की पंचायत इकट्ठी करने का और उसकी भूमि के बंटवारे का ठीक फैसला करवा देने का आश्वासन दिया। दूसरे दिन लगभग दस बजे गांव के चौकीदार ने पीपल के वृक्ष के नीचे एक बड़ी दरी बिछा दी। धीरे धीरे गांव के सभी लोग उस दरी पर आकर बैठने लगे कोई कह रहा था, "यह रांड बड़ी बदमाश है, यह गोपाल के चाचा ने बड़ा अच्छा किया है, पता नहीं यह भूमि को बेचकर कब दूसरा घर कर ले।"

कोई कह रहा था "नहीं भाई, मरे हुए को ही सब लोग मारते हैं। भला गोपाल का बाप जिन्दा होता तो देखते पटवारी उन आमों के पेड़ों को गोपाल के चाचा को कैसे दे देता" कोई हुक्के कश खेंचता हुआ बोल रहा था "अरे! यह पटवारी और कानूनगो तो उसी की गाते हैं जो उनको पैसे दे। भला बेचारी लच्छमी उनको पैसे कहां से देती।" तो कोई कह रहा था "हमें क्या अब हम सरपंच का फैसला देखेंगे कि सरपंच क्या फैसला देता है।" अब एक और बोला, "सरपंच को भी यदि कोई रिश्वत मिल गई तो उस बेचारी की कौन सुनेगा?" तब एक बूढ़ा बोला, "ग़रीब का फैसला तो ईश्वर के हाथ होता है। ग़रीब का फैसला तो वही करता है। दूध का दूध पानी का पानी। उस के घर में देर है,

अन्धेर नहीं" अब सरपंच भी आ चुके थे सभी पंच भी आकर बैठ गये थे। गोपाल की मां और गोपाल का चाचा भी दरी से दूर आकर बैठ गये थे। अब सरपंच बोला, "खड़कसिह ! क्यों अपनी भावज को तंग करता है ? आम के पेड़ इसके पति ने लगाए थे इन आमों के पेड़ों को क्यों नहीं इसे दे देता ?" अब गोपाल का चाचा खड़कसिंह बोला, "प्रधान जी ! यदि आप बुरा न मनायें तो मैं आपको एक बात पूछ सकता हूं ?" अब सभी लोग खड़कसिह की ओर देखने लगे। सरपंच बोला, "एक नहीं दो पूछो, आप लोगों ने ही मुझे सरपच चुना है। मेरा यह कर्त्तव्य है कि आपके झगड़ों को दूर करूं, आप के खून पसीने की कमाई को वकीलों के बंगलों को सजावट पर न लगने दूं।" अब खड़कसिह बोला, "जब पटवारी और कानूनगो ने आमों के वृक्ष मुझे दे दिये हैं और महकमा माल के कागजात में कार्यवाही हो चुकी है। मैंने उन पेड़ों का मूल्य भावज को देना भी मान लिया है तो पंचायत इक्ट्ठी करने का क्या तात्पर्य है ?" खड़कसिह की बात को सुनकर सरपंच थोड़ी देर चुप रहा और फिर बोला, "यहां बात भूमि के बंटवारे की नहीं भाईचारे की है यहां पटवारी, कानूनगो या तहसीलदार का कानून नहीं अगर यहां कोई कानून है तो असलियत और हक का है। पटवारी, कानूनगो और तहसीलदार क्या जाने कि पेड़ किसने लगाए, किसने उन्हें सींचा, कौन खरीद लाया, किसने उनकी हिफाजत की और किसने उन्हें बच्चों की तरह पाला पोसा। वे तो बेचारे सरकारी कर्मचारी हैं। केवल कानून ही जानते हैं गांव की असलीयत का पता तो गांव के आदमियों को ही हुआ करता है खड़कसिह।"

"तो क्या इन सभी सरकारी कर्मचारियों को सरकार मुफ्त में वेतन दे रही है तो फिर सारे काम गांव के आदमी ही क्यों नहीं कर लेते वह ही भूमि बांट दिया करें।" "बात यह नहीं है खड़क-

सिंह कि भूमियों के बंटवारे में यहां झगड़ा होने का शक हो वहां पटवारी और कानूनगो को चाहिए कि वह गांव के सुलझे हुए व्यक्तियों को साथ ले जावें। यदि हम भूमि के बंटवारे में साथ होते तो यह अन्याय कभी न होने देते। एक विधवा स्त्री की रोटी कभी न छीनने देते" सरपंच ने गरज कर कहा, "यदि यह अन्याय है तो न्याय क्या है? सरपंच साहिब।" खड़कसिंह की भवें तन गई "न्याय यही है कि लच्छमी के पति के लगाये हुए दशहरी आमों के पेड़ उसे मिलने चाहिएं यह मेरा ही नहीं बल्कि सारी पंचायत का फैसला है, तुझे यह मानना पड़ेगा" सरपंच ने गुस्से से कहा। "मैं इस फैसले को कदापि नहीं मानूंगा सरपंच साहिब। चाहे मेरा सब कुछ बिक जावे पर मैं आखरी दम तक लड़ूंगा।" खड़कसिंह ने जोरदार शब्दों में कहा "रहने दीजिए सरपंच साहिब अब मेरी फरियाद ईश्वर से है अब मैं उसकी अदालत में फैसला मागूंगी। जब मनुष्य सब की बात को ठुकरा दे और इन्साफ को भूल जाये तो ईश्वर स्वयं उसे इन्साफ की याद दिलाता है। समय बीत जाने पर मनुष्य को ईश्वर के इन्साफ के आगे झुकना पड़ता है" यह बात कहकर लच्छमी ने गांव के लोगों की ओर सज्जल नेत्रों से देखा और चल दी। खड़कसिंह पहले ही जा चुका था। अब गोपाल भी अपनी मां के पीछे हो लिया। वह भी अपने चाचा की बातों को सुन रहा था रास्ते में बोला "अम्मा! क्या अब आमों के पेड़ों को चाचा हमें नहीं देंगे?" अब लच्छमी ने अपनी आंखों को चादर के पल्ले से ढांपते हुए अपने छोटे गोपाल के सिर पर हाथ फेरा और बोली "बेटा हम और पेड़ लगायेंगे" अब गोपाल बिलख उठा "नहीं अम्मा मैं तो इन्हीं पेड़ों के आमों के आम खाया करूंगा, पिता जी कहते थे कि जब मेरा गोपाल बड़ा होगा तो पेड़ भी बड़े होंगे। गोपाल इन्हीं पेड़ों के आम चूसकर मुझे याद किया करेगा" "बेटा!

वे झूठ कहते थे सब झूठ ! उनकी कही हुई बातें सब झूठ निकलीं" "क्या झूठ निकला मां ?" गोपाल ने बिलख कर मां की ओर देख कर कहा "यही कि पेड़ कभी धोखा देते" "नहीं पिता जी की सभी बातें सच्ची थीं । वे कहते थे आम बड़े मीठे होंगे अभी पिछले ही वर्ष इन्हें फल आया था कितने मीठे थे आम ।"

यह बातें कहते हुए मां-बेटा घर की ओर बढ़ रहे थे और इधर सभी पंच और गांव वाले खड़कसिंह की धूर्तता पर पश्चाताप कर रहे थे कोई कह रहा था "कितना उजड्ड है अपनी ही भावज और भतीजे पर दया नहीं" तो कोई कह रहा था "कलियुग है भाई, अब अपना ही अपने को खायेगा ।" तब एक बूढ़ा बोला "इस बात का इन्साफ ईश्वर करेगा जो भाई-चारे की और सारे गांव की बात को नहीं मानता । ईश्वर उसको अवश्य दण्ड देता है" तब सरपंच बोला, "अच्छा भाईयो ! मैंने आपको कष्ट दिया है, वेचारी विधवा की फरियाद को हम पूरी नहीं कर सके और न ही हम उसे न्याय दे सके मुझे खेद है । पर एक बात है सब को समझ आये तो कहूं ।" अब सभी एक स्वर बोले 'कहिए सरपंच साहिब' अब सरपंच बोला, "भाई-चारे के डण्डे के आगे सरकार का कोई भी कानून काम नहीं करता यह बात निश्चित है । अब मेरा फैसला यह है कि हम सभी आज यह प्रण करलें कि जब तक खड़क सिंह हमारे किये निर्णय को नहीं मान लेता तब तक गांव का लोहार उसके खेती के औजार नहीं बनायेगा । तेली उसके बीजों से तेल नहीं निकालेगा । नाई उसकी हज़ामत नहीं बनायेगा । कुम्हार उसके लिए मिट्टी के बर्तन नहीं बनायेगा । चमार उसके जूते नहीं बनायेगा । बात यह है कि गांव के सभी कारीगर उसके लिए काम करना बन्द कर देंगे तब उसको पता लगेगा कि गांव का फैसला सबसे बड़ा फैसला है याकि न्यायालय का । सरपंच की इस बात को

सिंह कि भूमियों के बंटवारे में यहां झगड़ा होने का शक हो वहां पटवारी और कानूनगो को चाहिए कि वह गांव के सुलझे हुए व्यक्तियों को साथ ले जावें। यदि हम भूमि के बंटवारे में साथ होते तो यह अन्याय कभी न होने देते। एक विधवा स्त्री की रोटी कभी न छीनने देते" सरपंच ने गरज कर कहा, "यदि यह अन्याय है तो न्याय क्या है? सरपंच साहिब।" खड़कसिंह की भवें तन गई "न्याय यही है कि लच्छमी के पति के लगाये हुए दशहरी आमों के पेड़ उसे मिलने चाहिएं यह मेरा ही नहीं बल्कि सारी पंचायत का फैसला है, तुझे यह मानना पड़ेगा" सरपंच ने गुस्से से कहा। "मैं इस फैसले को कदापि नहीं मानूंगा सरपंच साहिब। चाहे मेरा सब कुछ बिक जावे पर मैं आखरी दम तक लड़ूंगा।" खड़कसिंह ने जोरदार शब्दों में कहा "रहने दीजिए सरपंच साहिब अब मेरी फरियाद ईश्वर से है अब मैं उसकी अदालत में फैसला मांगूंगी। जब मनुष्य सब की बात को ठुकरा दे और इन्साफ को भूल जाये तो ईश्वर स्वयं उसे इन्साफ की याद दिलाता है। समय बीत जाने पर मनुष्य को ईश्वर के इन्साफ के आगे झुकना पड़ता है" यह बात कहकर लच्छमी ने गांव के लोगों की ओर सज्जल नेत्रों से देखा और चल दी। खड़कसिंह पहले ही जा चुका था। अब गोपाल भी अपनी मां के पीछे हो लिया। वह भी अपने चाचा की बातों को सुन रहा था रास्ते में बोला "अम्मा! क्या अब आमों के पेड़ों को चाचा हमें नहीं देंगे?" अब लच्छमी ने अपनी आंखों को चादर के पल्ले से ढांपते हुए अपने छोटे गोपाल के सिर पर हाथ फेरा और बोली "बेटा हम और पेड़ लगायेंगे" अब गोपाल बिलख उठा "नहीं अम्मा मैं तो इन्हीं पेड़ों के आमों के आम खाया करूंगा, पिता जी कहते थे कि जब मेरा गोपाल बड़ा होगा तो पेड़ भी बड़े होंगे। गोपाल इन्हीं पेड़ों के आम चूसकर मुझे याद किया करेगा""बेटा!

वे झूठ कहते थे सब झूठ ! उनकी कही हुई बातें सब झूठ निकलीं" "क्या झूठ निकला मां ?" गोपाल ने बिलख कर मां की ओर देख कर कहा "यही कि पेड़ कभी धोखा देते" "नहीं पिता जी की सभी बातें सच्ची थीं। वे कहते थे आम बड़े मीठे होंगे अभी पिछले ही वर्ष इन्हें फल आया था कितने मीठे थे आम।"

यह बातें कहते हुए मां-बेटा घर की ओर बढ़ रहे थे और इधर सभी पंच और गांव वाले खड़कसिंह की धूर्तता पर पश्चाताप कर रहे थे कोई कह रहा था "कितना उजड्ड है अपनी ही भावज और भतीजे पर दया नहीं" तो कोई कह रहा था "कलियुग है भाई, अब अपना ही अपने को खायेगा।" तब एक बूढ़ा बोला "इस बात का इन्साफ ईश्वर करेगा जो भाई-चारे की और सारे गांव की बात को नहीं मानता। ईश्वर उसको अवश्य दण्ड देता है" तब सरपंच बोला, "अच्छा भाईयो ! मैंने आपको कष्ट दिया है, बेचारी विधवा की फरियाद को हम पूरी नहीं कर सके और न ही हम उसे न्याय दे सके मुझे खेद है। पर एक बात है सब को समझ आये तो कहूं।" अब सभी एक स्वर बोले 'कहिए सरपच साहिब' अब सरपंच बोला, "भाई-चारे के डण्डे के आगे सरकार का कोई भी कानून काम नहीं करता यह बात निश्चित है। अब मेरा फैसला यह है कि हम सभी आज यह प्रण करलें कि जब तक खड़क सिंह हमारे किये निर्णय को नहीं मान लेता तब तक गांव का लोहार उसके खेती के औजार नहीं बनायेगा। तेली उसके बीजों से तेल नहीं निकालेगा। नाई उसकी हजा़मत नहीं बनायेगा। कुम्हार उसके लिए मिट्टी के बर्तन नहीं बनायेगा। चमार उसके जूते नहीं बनायेगा। बात यह है कि गांव के सभी कारीगर उसके लिए काम करना बन्द कर देंगे तब उसको पता लगेगा कि गांव का फैसला सबसे बड़ा फैसला है याकि न्यायालय का। सरपंच की इस बात को

सभी मान गये। गांव के सभी लोग खड़कसिह पर नाराज थे। अब सब लोगों ने उसी पीपल के वृक्ष के नीचे कसम खाकर सरपंच की सब बातों को मान लिया और अपने अपने घरों की ओर चल दिये।

खड़कसिह भी अपने घर पहुंचा तो खड़कसिह की पत्नी ने पूछा "क्या फैसला हुआ ?" तब खड़कसिह बोला, "गांव के लोग भला हमारी चाल को क्या समझेंगे,फैसला वही है जो पटवारी और कानूनगों करके गये हैं।"

"तो क्या आम के पेड़ हमें मिलेंगे ?"

"हां"

"गोपाल की मां तो सारे गांव में घूम रही थी"

"सारा गांव छोड़कर सारे देश में घूमे खड़कसिह का मुकाबला करना कोई आसान काम नहीं।"

"आप एक आम का पेड़ उसे क्यों नहीं दे देते" "कैसी बातें करती है ? बेवकूफ औरत अब ज्यादा बात की तो सिर फड़वा बैठेगी तू औरत है अपना काम कर तुझे बाहर की बातों से कोई सरोकार नहीं अब मैं पैन्शन आ गया हूं। सबसे निपट लूंगा।" अब खड़क सिह की औरत चुप थी। इस बात को हुए कुछ ही समय बीता था। अब वर्षा ऋतु का समय था। आसमान पर काले बादल घिर आये थे। मोर बादलों को देखकर प्रसन्नता से झूम रहे और बोल रहे थे। कोयल आमों के वृक्षों पर कूक रही थी। अब एक पपीहा आकाश पर पी-पी करता हुआ आया और चला गया। लच्छमी ने अब अपने मस्तक का पसीना साफ किया और एक बार आकाश की ओर देखा तथा पुनः मक्की के पौधे को निलाई करने लगी छोटा गोपाल लच्छमी के पास बैठा अपने बाप के लगाए हुए आमों के पेड़ों को लाल लाल दशहरी आमों से लदा हुआ देख कर प्रसन्न

हो रहा था। कभी वह आमों की तरफ देखता और कभी अपनी मां की ओर। उधर पास ही खेत में गोपाल के चाचा निलाई कर रहे थे। उनका लड़का मदन उनके पास खड़ा कुछ बात कर रहा था। अब अचानक दो आम टप-टप की आवाज से एक आम के वृक्ष से भूमि पर गिरे। मदन झट पेड़ों के नीचे की ओर दौड़ा। अब गोपाल से भी नहीं रहा गया वह भी अपनी मां की नज़र बचाकर झट उन आमों के पेड़ों की ओर आम लेने के लिए दौड़ पड़ा। मदन और गोपाल दोनों एक साथ पेड़ों के नीचे पहुंच गये। अब मदन ने दोनों आम उठा लिए तथा उसने एक आम गोपाल की तरफ बढ़ा दिया दोनों एक एक आम खाने लग गये।

गोपाल को पेड़ के नीचे आम खाता देख खड़कसिंह एकदम गरजा, "हराम जादा! तेरे बाप का है पेड़ क्या?" अब दूसरे ही क्षण खड़कसिंह पेड़ के नीचे पहुंच चुका था जब गोपाल की मां ने देखा तो खड़कसिंह ने गोपाल को भुजा से पकड़ कर ज़मीन पर पटक दिया था। वह दौड़ी। बच्चे की एक चीख दोपहर के सन्नाटे को चीरती हुई निकल गई थी। अब खड़कसिंह गोपाल को लातें मार रहा था। लच्छमी चिल्लाई "दौड़ो! दौड़ो! मार दिया मेरा गोपाल।" उसकी चीख पुकार सुनकर गांव के लोग दौड़े। खड़कसिंह अभी भी गोपाल को पीट रहा था। अब कुछ लोगों ने आगे बढ़कर बच्चे को उठाया कारण पूछा तो खड़कसिंह हांफता हुआ बोला, "यह हरामजादी अब अपने लड़के से चोरी आम तुड़वाती है।" अब गोपाल बेहोश था। लच्छमी उसे गोदी में उठा कर घर की ओर बढ़ रही थी। गोपाल के मुंह से आम का रस साफ किया और छिलका अभी फंसा था। लच्छमी ने छिलका उसके मुंह से बाहर निकालना चाहा तो देखा गोपाल के दांत मिले हुए थे। उसके दोनों जबड़े जोर से मिचे हुए थे। गोपाल की मां की चीख

निकल गई "हाय ! मेरा गोपाल" अब एक व्यक्ति दौड़कर गांव के वैद्य के पास गया । वैद्य आया और बच्चे का उपचार आरम्भ हुआ । गोपाल के नाक से जो रुधिर की धारा बह रही थी कुछ बन्द हुई उसने आंखें खोलीं और मां की ओर देखकर बोला "अम्मा ! पिता का लगाया आम बड़ा मीठा था, चाचा ने मुझे मारा अम्मा । आम ता मुझे मदन भैय्या ने दिया था मैंने चोरी नहीं लिया था अम्मा"

"बाप के लगाए हुए पेड़ से आम खाकर तू चोर नहीं हो सकता बेटा, चोर तो वे लोग हैं जो तेरे बाप की लगाई हुई वस्तु को तेरे से चोरी चोरी खाते हैं ।"

अब गोपाल को बड़े जोर का ज्वर चढ़ आया था । उसे अब प्रतिदिन ज्वर हो आता । गोपाल का स्वास्थ्य अब अत्यन्त खराब हो चुका था । गांव के सभी लोग उसकी खबर लेने आते पर खड़क सिंह और उसकी पत्नी एक बार भी देखने नहीं आये थे । मदन कभी गोपाल के पास आता तो उसकी मां उसे डांटती जब वह कहता "मैं गोपाल भैय्या के पास जाऊंगा" तो वह कहती "बेटा गोपाल तेरा भाई नहीं, शरीक है वह तुझे मारेगा" पर जब से गोपाल को खड़कसिंह ने मारा था तब से मदन भी सहम गया था । अब आम गिरते तो उसकी मां कहती "मदन बेटा ! आम उठा लो" तो मदन कहता "नहीं उठाऊंगा आम, पिता मारता है, देखा नहीं तूने, गोपाल भैय्या को उसने कैसे पीटा था मैं पीट नहीं खाऊंगा ।" तब उसकी मां उसे गोदी में उठाकर आमों के पेड़ों के नीचे ले जाती स्वयं आम तोड़ कर उसके मुंह के पास ले आती पर मदन आम न चूसता हाथ से आम को परे हटा देता और रोने लगता । जब से गोपाल को खड़कसिंह ने पीटा था तब से मदन ने भी आम नहीं चूसे थे । बच्चे के इस रहस्य को उसके मां-बाप भी नहीं समझ सके थे । कभी वह उसको चेले के पास ले जाती तो कभी अपने देवी

देवताओं को मनाती, कहते कि इसको किसी की नजर लग गई है। मदन कभी रोटी खाता और कभी भूखा ही सोया रहता और कभी स्वप्न में चिल्लाता "गोपाल भैय्या ! चलो आम खायें, कितना मीठा है यह आम" मदन की मां थपकी देकर उसे सुलाती। अन्त में एक बार उसकी मां ने उसे बड़े प्यार से पूछा "बेटा तू आम क्यों नहीं खाता ?" तो मदन बोला "मां ! पहले गोपाल भैय्या को आम खिलाऊंगा फिर खाऊंगा। पिता ने उसे क्यों मारा था मां ? बेचारे भैय्या का खून निकाल दिया था। आम तो उसको मैंने दिया था। वह तो सिर हिला कर आम लेने से इन्कार कर रहा था मैंने ही जबरदस्ती उसके मुंह में डाला था आम" अब मदन की मां समझ गई थी कि मदन को चेले की बीमारी नहीं है और न ही किसी देवी देवते की बीमारी है। यदि इसे बीमारी है तो गोपाल की मारपीट की है। वह अब जान गई थी कि बच्चे का कोमल मन गोपाल की मार-पीट को सहन नहीं कर सका था और मदन समझता था कि गोपाल के साथ अन्याय हुआ है। क्योंकि आम तो उसे उसने ही जबरदस्ती दिया था।

इधर एक दिन शाम को गोपाल का ज्वर पुनः बढ़ गया वह बड़बड़ाया "मदन भैय्या तेरा आम बड़ा मीठा है, मेरे पिता ने लगाया है यह पेड़। बड़े मीठे आम हैं इसके।" यह कहकर गोपाल एक टक छत की ओर देखने लगा। गोपाल की मां घबरा गई। बच्चे की मुट्ठियां एकदम मिच गईं। वह फिर बड़बड़ाया "ये दोनों आम के पेड़ मेरे हैं, मेरे पिता ने लगाए हैं, मैं इनके मीठे आम खाऊंगा मां" कहकर गोपाल बे-सुध हो गया। अब लच्छमी बिलख उठी पास बैठी स्त्री से रोती हुई बोली, "बहन ! वैद्य को बुलाओ मेरा गोपाल ! हाय मेरा गोपाल ! बहन बचा लो।" अब पास बैठी स्त्री झट दौड़ कर वैद्य को बुला लाई। गोपाल की नबज़ देखी।

नबज़ एक हाथ की चल रही थी। अब वैद्य ने दवाई दी। कुछ क्षण बाद गोपाल ने आंख खोली और इधर उधर देखकर बोला, "अम्मा मैं आम खाऊंगा" अब किसी बच्चे के छुप कर आने की आवाज आई सबने कोने की ओर देखा तो कोने में मदन खड़ा था वह अपने हाथों में लाल लाल दो दशहरी आम लिए हुए था। "आगे आ जाओ बेटा मदन" गोपाल की मां ने मदन की ओर देख कर कहा। अब मदन ने किसी की बात नहीं सुनी और न किसी की ओर देखा वह गोपाल की चारपाई पर चढ़ गया और गोपाल के मुंह के पास जाकर बोला, "गोपाल भैय्या ! मैं तेरे लिए आम लाया हूं मीठे आम।" अब गोपाल ने आंखें खोलीं और मदन की ओर देखा होंठ मुस्कराए और हाथ आम लेने के लिए आगे बढ़े। दोनों की आंखें मिली; सब ने देखा दोनों बच्चों की आंखों में आंसू थे।

अब मदन गोपाल को आम देकर चला गया। गोपाल के मुंह में बैद्य ने आम के रस से दवाई दी। एक बार, दो बार, तीन बार दवाई आम के रस से खाने से गोपाल का ज्वर हल्का होने लगा। दूसरे दिन गोपाल का ज्वर उतर चुका था। अब कुछ ही दिनों में गोपाल ठीक हो गया।

अब गोपाल की मां ने यह निश्चय कर लिया कि वह गांव छोड़ देगी और गोपाल के मामों के घर चली जावेगी। एक दिन सुबह गोपाल की मां और गोपाल गांव छोड़ कर चल दिये। उन आम के पेड़ों को अब एक बार गोपाल की मां और गोपाल ने सजल नेत्रों से देखा और आगे बढ़े। गोपाल बोला "अम्मा पिता के लगाए दशहरी आमों के पेड़ों के आम क्या अब चाचा हमें नहीं देगा ?" अपने आंसुओं को पोंछती हुई लच्छमी बोली, "बेटा ! वे 'पेड़ कभी धोखा नहीं देते'

कहते थे पेड़ कभी धोखा नहीं देते।" अब दूसरे ही क्षण बड़े ज़ोर की बिजली चमकी और बादलों ने अट्टहास किया।

सभी ने देखा उन आमों के पेड़ों से धुआं निकल रहा था। पेड़ों के पत्ते जल चुके थे टहनियां झुलस चुकी थीं।



"शहीद"

अगस्त मास की अठारह तारीख थी। आकाश पर काले मेघ घिर आये थे। कभी कभी सूर्यदेव बादलों के बीच से झांक कर पृथ्वी को देख लेते थे। सुबह के आठ बज रहे थे सलीमा ने अब अपने आंगन में झाड़ू दिया और आकाश की ओर देखने लगी। वह स्वयं ही गुनगुनाई "आज जैसा ही वह मनहूस दिन था जिस दिन असगर का बाप मुझे छोड़कर गया था। आकाश पर बादल छाये थे, चारों ओर शोर था। झोंपड़े धक धक करके जल रहे थे वह मुझे अकेला छोड़ गये थे बूढ़े जिमींदार के हवाले, आप चले गये, वापस न आये" अपनी मां को अकेले गुनगुनाते सुन कर पास ही झोंपड़े के बरामदे में खड़ा असगर अपनी तुतली जुबान में बोला "क्या बोलती हो अम्मी? तुम तो कहती थो अब्बा जान बरसात में आयेंगे, कब आयेंगे मेरे अब्बा जान अम्मी ?" पांच वर्ष का असगर बात करता हुआ सलीमा से लिपट गया "आयेंगे बेटा तेरे अब्बा जान" यह कहकर सलीमा अन्दर की ओर चली गई और अपनी चद्दर के आंचल से अपने आंसुओं को साफ किया और एक बार अपने पति की फोटो की ओर देखा जो सामने दीवार पर शीशे में मढ़ा हुआ लटक रहा था। रहमत अली की बड़ी बड़ी आंखं गोल चेहरा फौजी वर्दी में अब भी ऐसे लग रहा था मानों वह किसी पर नाराज हो। "अम्मी अब्बा जान कहां गये हैं ?" असगर ने अपना माँ पर पुनः प्रश्न किया "कहीं नहीं बेटा, वह फौज में भरती हैं न, उनको अभी छुट्टी नहीं मिलती जब छुट्टी मिलेगी तो अवश्य घर आवेंगे देखा न तुमने उनका फोटो कैसे तेवर चढ़े हैं। मानों वह किसी पर नाराज़ हैं। साहब से छुट्टी मांगी होगी, छुट्टी न मिलने पर वह साहब से नाराज़ हो गये हैं" चादर के

पल्ले से आंसू पोंछते हुए सलीमा ने असगर की ओर देखा "रो नहीं, अम्मी मैं बड़ा होकर उस साहब को पूछूगा कि छुट्टी क्यों नहीं देता।" असगर ने मां से लिपटते हुए कहा। अब सलीमा ने चूमकर असगर को गोदी में उठा लिया और नारियल के खोपे में शीशी से तेल उडेलती हुई बोली "बेटा! आ तुझे मालिश कर दूं। भरती होने के लिए ऋष्ट पुष्ट शरीर की आवश्यकता है" यह कह कर सलीमा मालिश करने लगी। मालिश करते करते वह कभी बाहर की ओर देख लेती थी "आज जैसा ही मनहूस दिन था वह" सलीमा फिर गुनगुनाई असगर ने फिर मां की ओर देखा और वह भी बाहर को ओर देखने लगा। "कैसी हो सलीमा। असगर तो ठीक है न? निहाल सिंह सुबेदार ने सलीमा के झोंपड़े के आंगन में प्रवेश करते हुए सलीमा की ओर देख कर कहा। अब सलीमा ने अपना आंचल सिर पर लिया और छोटा सा घूंघट निकालकर बोली "ठीक हूं मालिक, असगर भी ठीक है, आप कब आये?" सलीमा ने अपनी दृष्टि भूमि पर गाड़ कर कहा "अभी आ रहा हूं आप देखती नहीं फौज की वर्दी पहनी है सोचा सलीमा के पास से होता हुआ जाऊं। मैं सूबेदार बन गया हूं इसलिए तेरे असगर के लिए यह कपड़ लाया हूं इन्हें ले ले" सूबेदार निहाल सिंह ने अब अपना थैला खोला और एक पैकेट कपड़ों का निकाला उस पर बिस्कुट का एक पैकेट रखकर सलीमा की ओर बढ़ा दिया। सलीमा ने दोनों पैकेट लेकर अपने मस्तक से छुए और बोली "अल्लाह आपकी लम्बी उमर करे मालिक। आपके रुतबे को दिन रात बढ़ा हुआ देखना चाहती हूं मालिक, आपके पिता ने मेरी जान बचाई और आप मेरी और मेरे बच्चे की परवरिश कर रहे हो, अल्लाह आपको इससे दुगुनी दौलत और तिगुना जलाल दे" सूबेदार निहाल सिंह ने अब अपना बैग बन्द कर लिया। असगर अपनी मां और

निहालसिंह की बातों को बड़े ध्यान से सुन रहा था। वह सूबेदार के फौजी कपड़ों और कपड़ों पर लगे पीतल के चमकदार चिन्हों को तथा सूबेदार के सिर पर लगी सुन्दर टोपी को देख कर बड़ा प्रसन्न हो रहा था'मैं फिर मिलूंगा सलीमा अभी सामान गाड़ी के स्टेशन पर पड़ा है उसे लाने का प्रबन्ध करना है' यह बात कहकर निहाल सिंह अपने घर की ओर बढ़ा "मैं फौज में भरती हूंगा अम्मी और वर्दी पहन कर तेरे पास आऊंगा" असगर ने अपनी मां की ओर देखकर कहा। अब सलीमा असगर की मालिश करने लगी। मालिश करके उसे नहलाया, कपड़े पहनाए और असगर के लिए खाना तैयार करने लगी।

सलीमा की आंखों के आगे अब एकदम 18 अगस्त 1947 का दृष्य घूम गया उस समय सलीमा का निकाह हुए केवल दो ही महीने हुए थे। असगर केवल छ: मास का था रात को एकदम शोर मचा सलीमा ने बाहर निकलकर देखा तो चारों ओर आग की लपटें दिखाई दीं। उस ने पास सोए रहमत को जगाया था रहमत ने एक बार बाहर की ओर देखा था और झट अन्दर की ओर दौड़ा था "क्या है?" सलीमा ने सहमी आवाज में अपने पति से पूछा "कुछ नहीं सलीमा! भाग चलो नहीं तो बचना मुश्किल है। आज शाम को जब मैं शहर गया था तो वहां अफजल चाचा ने बताया था कि हिन्दोस्तान के दो हिस्से कर दिये गये हैं और यह हमारा जिला कांगड़ा हिन्दोस्तान में आया है। हिन्दोस्तान और पाकिस्तान में बड़े ज़ोर की मारकाट हो रही है। पाकिस्तान में हिन्दुओं का और हिन्दोस्तान में मुसलमानों का जीवित रहना कठिन है। जान की रक्षा नहीं इसलिए हम सब को लाहौर चलना चाहिए।" तब सलीमा ने कहा था "लाहौर पहुंचना कोई आसान काम नहीं यह नन्हा असगर लाहौर कैसे पहुंचेगा और इसको लेकर मैं कैसे भागूंगी" जब सलीमा ने इतनी बात कही तो रात के अन्धेरे

में उनके झोंपड़े से थोड़ी दूर कुछ बातें सुनाई दी थीं। "रहमत के झोंपड़े को जला दो साथ में रहमत और उसके परिवार को भी जला दो, लूट लो सब कुछ उनका" अब कुछ आदमी उनके झोंपड़े की ओर आ रहे थे। तब रहमत ने चुपके से सलीमा का बाज़ू पकड़ कर उसे झौंपड़े के बाहर निकाल लिया था। सलीमा सहमी हुई असगर को गोदी में लेकर रमत के पीछे पीछे मक्की के खेत में चली गई थी। तभी उसने अपने झौंपड़े की लपटें अपने सामने निकलती देखी थीं। उनकी एक बकरी जो झौंपड़े के बरामदे में बंधी थी उसकी 'मैं, मैं' की आवाज उसके कानों में दोबारा नहीं पड़ी थी। सलीमा डर के मारे बेबोश सी हो गई थी तभी रहमत ने रात के अन्धेरे में सलीमा का बाज़ू पकड़ कर उसे चलने को कहा था क्योंकि उसे भय था कि आग लगाने वाले लुटेरे उन्हें खेत में न ढूड लें। उनके झौंपड़े से कुछ दूर दो चार खेत लांघने पर फतेहसिह जिमीदार की हवेली थी अब रहमत ने सलीमा को फतेहसिह की हवेली की ओर बढ़ने का संकेत किया था। सलीमा अब अपने पति के साथ जिमीदार फतेहसिह की हवेली की ओर बढ़ी जा रही थी। अब कुछ ही क्षणों में वे दोनों फतेहसिह की हवेली के पास पहुंच चुके थे। आहट सुन कर फतेह सिह का कुत्ता भौंका था। कुत्ते के भौंकने की आवाज सुन कर फतेह सिह ने हवेली की डयोडी का दरवाजा खोला था। वह एकदम उसकी ओर बढ़ता चला आया था। मानों उसको उनके आने का पहले ही आभास हो चुका था। बिजली की चमक में सलीमा ने फतेहसिह के हाथ दोनाली बन्दूक चमकती हुई देखी थी। सलीमा और रहमत फतेह सिह के पास एक झाड़ी में छुपे बैठे थे सलीमा अपने बच्चे के मुंह पर अपनी हथेली रखे थी कि कहीं बच्चे के रोने की आवाज न निकल आए और उनके छुपकर बैठने का पता किसी को न लग

पाए। जब फतेहसिंह का कुत्ता सलीमा पर लपका था तो दूसरे ही क्षण फतेहसिंह ने अपने हाथ की टार्च की रोशनी सलीमा पर फैंकी थी सलीमा की चीख निकलकर रह गई थी, वह चिल्लाई थी "अब्बा जान बचा लो हमें" यह कहकर सलीमा बेहोश हो गई थी उसकी गोदी से असगर गिरकर खेत में लुड़क गया था। अब रहमत फतेहसिंह के पाओं से लिपट कर रह गया था। फतेहसिंह जो साठ वर्ष का बूढ़ा जिमींदार था उसके हृदय को बच्चे के रोने की आवाज ने पसीज दिया था। उसका अपना लड़का जो छः मास का ही स्वर्गवास हो गया था उसी स्थान पर गाड़ा था जिस स्थान पर वह झाड़ी थी। उसे ऐसा लगा था मानो उसी का लड़का रो रहा हो। उसने झट आगे बढ़कर लड़के असगर को खेत से उठा लिया था और उसे प्यार करने लगा था। जब सलीमा को होश आया तो वह असगर को ढूंडने लगी थी। उधर रहमत फतेहसिंह के पांव पकड़े विनती कर रहा था "चाचा हमें बचा लो, चाचा हमें बचा लो। मेरे बाप दादा आपकी चाकरी करते थे। हम भी आपकी गुलामी करेंगे। चाचा हमें बचा लो" फतेहसिंह कह रहा था। आप घबराओ नहीं मेरे रहते आपका बाल बांका न होगा। हम राजपूत हैं जो हमारी शरण में आ जाता है हम जीवन देकर भी उसकी रक्षा करते हैं। आप जल्दी मेरे साथ घर चलो यह लुटेरे आपको मेरे से छीन लेंगे। हवेली में आप लोग सुरक्षित रहेंगे" सलीमा और रहमत बूढ़े फतेहसिंह की बातें सुनकर उसके पीछे हो लिए थे।

अब बूढ़े फतेह सिंह ने उन्हें एक कमरे में दो चारपाईयां देकर सुला दिया था और कमरे को बाहर से ताला लगाकर बन्द कर दिया था। सलीमा और रहमत ने इसी ढंग से दो दिन फतेह सिंह के मकान में काटे थे। फतेहसिंह ने उन्हें रोटी आदि देने के लिए अपने लड़के निहालसिंह को कहा और साथ यह भी संकेत

कर दिया कि गांव में किसी को भी सलीमा और रहमत के वहां रहने की खबर न दे। पर औरतों के पेट में बात कहां ठहरती है। फतेहसिंह की पत्नी ने एक पड़ोसिन के साथ बात कर ही दी थी। बस फिर क्या था फतेहसिह की हवेली में दूसरे दिन कोई दो सौ लोगों का जत्था आ गया था। किसी के हाथ में नंगी कृपाण तो किसी के हाथ में बरछा था, पर अकेले फतेहसिह ने किसी की न चलने दी थी। वह बन्दूक लेकर खड़ा हो गया था और बोला था, "इस शर्त पर घर की तलाशी लेने दूंगा कि यदि रहमत और उसके बच्चे घर में न निकले तो तलाशी लेने वाले लोगों को गोली से उड़ा दिया जावेगा अब जिसकी मर्जी हो तलाशी ले ले" फतेहसिह की इस बात को सुनकर सभी लोग जो रहमत के परिवार के जानलेवा बने हुए थे एक दूसरे की ओर देखने लगे थे और एक-२ करके हवेली के बाहर चले गये थे।

उसी रात रहमत ने फतेहसिह को कहा था "चाचा जान! मैं आप सब को खतरे में नहीं डालना चाहता यदि आप मानों तो मैं लाहौर के लिए रवाना हो जाता हूं। यह सलीमा और असगर मेरी इमानत आपके पास रहेंगे यदि जिन्दगी रही तो आकर ले लूंगा, नहीं तो यह आपकी बेटी और असगर आपका पोता आपकी खिदमत करेंगे। हम आपके इस एहसान को कभी नहीं भूलेंगे। आपने हमारी जान बचाई है, हम अपनी जान देकर भी आपके ईमान तथा खानदान की हिफाजत करेंगे। रहमत के ये शब्द सुन कर फतेहसिह ने कहा था "बेटा रहमत! यह चन्द दिन का शोर शराबा है। आप यहीं रहो, आप लाहौर कैसे पहुंच पाओगे, वैसे तो हम आपके कहने के बगैर ही आपकी बीवी तथा बच्चे की हिफाजत करेंगे" यह बात कहकर फतेहसिह ने एक बार रहमत की ओर देखा था। पर रहमत जाने के लिए बजिद था उसने फ़तेहसिह

की एक न मानी थी उसने एक बार अपने इकलौते बच्चे असगर को चूमा था और सलीमा को सलाम करके हवेली के बाहर चल दिया था। वह सही सलामत लाहौर पहुंच गया था। शान्ति हो जाने के उपरान्त उसके दो पत्र सलीमा को लाहौर से आये थे। सलीमा का भाई भी लाहौर रहता था। अनारकली बाजार में उसकी सब्जी की दुकान थी। उसी दुकान पर रहमत काम करने लगा था। रहमत का अब तीसरा खत सलीमा को आया था लिखा था "एक दो माह में हिन्दोस्तान आऊंगा और सबको लाहौर ले आऊंगा" पर कुछ दिन बाद रहमत का एक पठान के साथ लेन देन का झगड़ा हो गया था। पठान ने चाकू रहमत के पेट में मारा था जिससे रहमत की मृत्यु हो गई थी। अब सलीमा के भाई का पत्र आया था जिसमें रहमत की मृत्यु के बारे में पढ़कर सलीमा चीख उठी थी। अब सलीमा और असगर अकेले थे।

शान्ति के उपरान्त फतेहसिंह ने उनके झोंपड़े के स्थान पर सलीमा को नया झोंपड़ा डाल दिया था सलीमा अब उसी झोंपड़े में रहती थी। सुबह शाम वह फतेहसिंह के घर काम करती थी और रात को अपने झोंपड़े में पड़ी रहती थी। दिन बीतते गये। फतेह सिंह को एक बार मलेरिया ज्वर आया और उसका शरीर इतना दुर्बल हो गया कि उसे एक के बाद एक रोग लगने लगा अन्त में वह इतना क्षीण हो गया कि सभी हकीमों ने उसका बचना असम्भव बतलाया तभी फतेहसिह ने अपने लड़के निहालसिह जो उसी वर्ष सेना में भरती हुआ था, को पास बुला कर कहा था "सलीमा की हिफाज़त करना, यह मेरी बेटी है।" अपनी पत्नी को भी उसने सलीमा की रक्षा करने को कहा था उस दिन के उपरान्त फतेहसिंह चारपाई से न उठ सका था। एक दिन हवेली में कोहराम मचा, फतेहसिंह स्वर्गवास हुआ तो सलीमा के आंसू न थमते थे। अपने

बाप की मौत पर भी वह इतनी नहीं रोई थी जितनी वह फतेह सिंह की मृत्यु पर रोई थी। उसने कई दिन रोटी तक न खाई थी। अन्त में गांव की कुछ स्त्रियों ने उसे भोजन कर लेने पर विवश किया था।

दिन बीतते देर नहीं लगती अब असगर अठारह वर्ष का हो चुका था। उसने आठवीं की परीक्षा पास कर ली थी। सूबेदार निहालसिंह अब कैप्टन बन चुका था। बरसात के दिन थे कैप्टन निहालसिंह पुनः छुट्टी आया और पहले की भान्ति सलीमा के झौंपड़े की ओर बढ़ा। दिन के दस बज रहे थे। कैप्टन निहालसिंह ज्योंहि सलीमा के झौंपड़े के आंगन में खड़ा हुआ त्योंहि असगर ने आगे बढ़कर निहालसिंह के पांव छुए, सलाम की। कैप्टन निहाल सिंह ने असगर को छाती से लगा लिया और बोला, "सलीमा! देख अब असगर कितना समझदार हो गया है। अब मैं जाती बार इसे अपने साथ ले जाऊंगा और इसे सूबेदार बनाऊंगा सलीमा।" सूबेदार का नाम सुनकर सलीमा का मुख खिल उठा बोली "हमारे भाग्य मे इतनी बड़ी अफसरी कहां लिखी है मालिक! असगर तो बदनसीब है, जिसने पैदा होकर अपने बाप का मुंह तक नहीं देखा इतनी बड़ी अफसरी कहां ले सकेगा मालिक!" सलीमा ने असगर के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा। अब निहालसिंह की सारी छुट्टी में असगर निहालसिंह के साथ ही रहा। जब निहालसिंह की छुट्टी पूरी हुई तो एक दिन फिर निहाल सिंह ने सलीमा से आकर कहा, "सलीमा! कल मैं और असगर उधमपुर चले जायेंगे तू फिकर मत करना। अब असगर अगले वर्ष फौजी वर्दी पहने तेरे पास आयेगा। सलीमा असगर के चले जाने की खबर सुन कर एक दम सहम गई बोली "अभी मेरा असगर छोटा है मालिक" अपनी मां की बात सुनकर अब असगर एक दम बोल उठा "अम्मी! तू खुद ही कह

रही थी कि अब तू भरती के काबिल हो चुका है। अब मैं चाचाजान के साथ उधमपुर चला जाऊंगा।" अब असगर की बात का सलीमा के पास कोई उत्तर न था। दूसरे दिन असगर निहालसिह के साथ चला गया था। एक सप्ताह के उपरान्त असगर का पत्र सलीमा को आया था "मैं भरती हो गया हूं, मां मेरी रेजिमैंट नाईंथ जे० एण्ड के० है, मैं इनफैंटरी में भरती हुआ हूं मां! अब मैं शीघ्र ही घर आऊंगा" पत्र मिलने पर सलीमा आज बड़ी खुश थी। गांव के सभी पढ़े लिखे लोगों से वह बार बार पत्र पढ़ा रही थी। अब दूसरे दिन सलीमा पास ही बने पीर बादशाह के मकबरे पर झण्डा चढ़ाने गई थी और पीर बादशाह से असगर के लिए दुआएँ मांगीं थीं। छः मास बीतने पर असगर पहली बार घर आया था तो उसने आते ही सौ-सौ के पांच नोट अपनी मां की ओर बढ़ा दिये थे। सलीमा ने सौ-सौ के इक्ट्ठे पांच नोट पहली बार ही देखे थे उसका मन आज बड़ा प्रसन्न था। उसने अपने भाई को लाहौर को खत लिखा था कि असगर सेना में भरती हो गया है। गांव के सभी लोग असगर को देखने आते। जिन लोगों ने असगर का झौंपड़ा जलाया था और असगर के बाप को मारने के लिए तैयार हुए थे, वह असगर से घृणा करते थे पर कैप्टन निहालसिह के आगे किसी की पेश न चलती थी। असगर अपनी मां को कभी २ जंगे आज़ादी की कहानी सुनाता, "मां! बाबर जैसे बहादुर मुगलों ने हिन्दोस्तान को अपनी जन्म भूमि माना तथा अकबर महान् ने तो हिन्दुओं से रिश्ते भी कर लिए थे। अकबर के राजमहल में तो भगवान शिव तथा दुर्गा की पूजा होती थी।" हां बेटा, ईश्वर के घर में कोई हिन्दू तथा मुसलमान नहीं, कोई पारसी और ईसाई नहीं। यह सब बातें इन्सान की मनघड़न्त और अपने लाभ की हैं। ईश्वर ने सभी मनुष्य एक जैसे पैदा किये हैं। किसी के मस्तक पर जन्म से

मज़हब नहीं लिखा होता।" सलीमा असगर को उत्तर देती, तब असगर कहता "एक बात और बताऊं मां, मैंने आठवीं के इतिहास में पढ़ा था कि बहादुर शाह जफर ही तो 1857 की जंगे आज़ादी के सबसे बड़े नेता थे और उन्होंने हिन्दोस्तान की आज़ादी के लिए अपने चारों बेटों का बलिदान तक दे दिया था। जब हुमायूं के मकबरे में उनके चारों बेटों के सिर काटकर 'हड़सन' ने एक थाल में उनके आगे पेश किये थे तो बहादुर शाह ने कहा था "अमीर तैमूर की औलाद अपने फर्ज से सुर्खरू होकर इसी तरह अपने बाप के सामने पेश हुआ करती है, हड़सन। तब हड़सन बूढ़े बहादुर शाह की इस बात को सुनकर भौंचक्का रह गया था।" "हां बेटा पुराना इतिहास यही बताता है कि मुल्क हिन्दोस्तान एक था और इस पर रहने वाले क्या हिन्दू क्या मुसलमान क्या और मजहबों के लोग सभी इसे अपनी जन्म भूमि मानते थे।" सलीमा ने असगर की ओर देख कर कहा। "तो मां, सन 1947 में ऐसा क्यों हुआ था?" असगर ने सलीमा की ओर देखकर कहा। "बेटा, अंग्रेज जब भारत छोड़कर जा रहे थे उन्होंने दो भाईयों को आपस में लड़ाया था क्या हिन्दू क्या मुसलमान उनकी चाल को न समझ सके थे। भाई भाई के खून का प्यासा हो उठा था। पर बेटा हमें तो आपके चाचा निहालसिह के पिता ने ही जीवनदान दिया था। यदि आपके पिता लाहौर 'पाकिस्तान' जाने के लिए वज़िद न होते तो वह भी बच जाते।" यह बात कहकर सलीमा चुप हो गई थी। सलीमा को चुप देखकर असगर बोला था "मां यह देश हमारा है हमने इसका जल तथा अन्न ग्रहण किया है इस देश पर आपत्ति आने पर रक्षा करना हमारा फज है फौज में हमें यही सिखाया जाता है।" इसी प्रकार की बातें करते असगर का 28 दिन की छुट्टी बीत गई। असगर दूसरे वर्ष दो मास की छुट्टी घर आया

और चला गया। अब असगर जब छुट्टी काटकर चला जाता तो सलीमा असगर के दिन गिनती। इसीप्रकार असगर तीन छुट्टीयां काट चुका था। चौथी छुट्टी जब असगर घर आया तो असगर हवालदार बन चुका था। अब तो सलीमा फूली न समाती थी। अब की बार कैप्टन निहालसिह भी छुट्टी आया था। 18 अगस्त 1964 का दिन था। दिन के दस बज रहे थे। अब पहले की भान्ति कैप्टन निहाल सिंह ने सलीमा के झौंपड़े के आंगन में आकर कहा, "सलीमा ! अब असगर खां हवालदार बन गया है। ला जरा कुछ मुंह मीठा तो करवा दे। हवालदारी ऐसे फीके मुंह थोड़ी मिलती है।" अब सलीमा झट अन्दर गई और लड्डुओं से भरी थाली निहाल सिह के आगे रख कर अपने घूंघट को सरका कर बोली, "मालिक ! यह आपका ही तो सब कुछ है। पर आज असगर का बाप होता तो........." "सलीमा जिन्दगी और मौत, खुशी और गमी यह सब ईश्वर के हाथ है। हमें ही देख हम फौज में भरती है कल लड़ाई छिड़ जाए तो परसों का पता नहीं" निहालसिह ने एक लड्डू मुंह में डालते हुए कहा "लड़ाई में मर कर वहिशत मिलती है मालिक ! पर ऐसे ही मारा जाना जहन्नुम में जाना होता है।" "यह सब ईश्वर की इच्छा पर ही हुआ करता है सलीमा" कैप्टन निहाल सिंह ने सलीमा की ओर देखकर कहा "पर सलीमा एक बात सुन, अब तेरा असगर शादी के काबिल हो चुका है उसके निकाह की भी फिकर कर" कैप्टन निहाल सिंह ने मुस्करा कर सलीमा की ओर देखते हुए कहा। निकाह की बात सुन सलीमा खिल उठी और बोली "जब मेरा असगर सूबेदार बन कर आयेगा तभी निकाह करुंगी, मालिक।" सलीमा की बात सुन कर कैप्टन निहालसिंह कुछ देर चुप रहा। उसको पाकिस्तान के बदलते हुए तेवरों का पता था उसे यह पूर्ण विश्वास था कि अगले वर्ष

पाकिस्तान हिन्दोस्तान पर अवश्य आक्रमण करेगा पर सेना का उच्च अधिकारी होने के नाते वह यह बात सलीमा को नहीं बताना चाहता था। अब कैप्टन निहाल सिह यह कह कर चल दिया कि अगले वर्ष छुट्टी आने पर सब बात सोच लेंगे।

समय बदलते देर नहीं लगती। दूसरे वर्ष पाकिस्तान नें बहुत सी सेना, बार्डरों पर लगा दी। युद्ध की तैयारियां होने लगीं। यह देख कर भारत की सेनाओं को भी बार्डरों पर चलने के आदेश मिल गये थे। नाईंथ जे० एण्ड के० की सेना को स्यालकोट बार्डर पर चलने के आदेश मिले। कैप्टन निहाल सिह ने युद्ध का समय देख कर नाइब सूबेदार असगर खाँ को एक शाम बुला कर कहा, "असगर खाँ अब युद्ध का समय नजदीक है। आप कल ही दो दिन की छुट्टी घर चले जाओ और मेरी बीवी तथा बच्चों को घर छोड़ आओ।" नाईब सूबेदार असगर खाँ भला कैसे अपने मालिक, निहालसिह की बात को टाल सकता था, उसने सैल्यूट देकर कहा, "अच्छा सर ! कल चला जाऊंगा।" यह बात कहकर असगर खाँ फौजी शिष्टाचार से एकदम घूमकर अपनी बैरक की ओर चल दिया। असगर खाँ को अभी नाईब सूबेदार बने चार ही दिन हुए थे। अभी तीन दिन पहले ही तो उसने सलीमा को पत्र लिखा था कि वह नाईब सूबेदार हो गया है।

दूसरे दिन सुबह असगर खाँ निहाल सिह के बीवी तथा बच्चों को लेकर गांव की ओर चल दिया। शाम को वे सब लोग घर पहुंचे। सलीमा को असगर का पत्र आज ही मिला था। वह समीप ही दूसरे दिन गांव में पीर बादशाह के मकबरे पर प्रार्थना करने को गई थी। असगर जब घर पहुंचा तो घर के किवाड़ बन्द देखकर बाहर बरामदे में रखी चारपाई पर बैठ गया था। सलीमा को रास्ते में ही असगर के आने की खबर मिल चुकी थीं। वह

शीघ्र ही घर को चली आ रही थी। असगर को चारपाई पर फौजी वर्दी में बैठा देख सलीमा ने आगे बढ़कर उसे भुजाओं में लपेट लिया। पास ही रखी स्टेनगन की ओर देखकर सलीमा बोली, "यह बन्दूक किस लिए लेकर आए हो ? बेटा ! कहीं फौज से भाग कर तो नहीं चले आये" "फौज से भागना तो कायरों का काम है अम्मी" सलीमा की ओर देखकर असगर ने कहा। "हां बेटा कभी ऐसा न करना नहीं तो हमारी सातों पुशतें जहन्नुम में डूब जायेंगी। यह भारत हमारा है इसकी रक्षा के लिए खून की अन्तिम बूंद तक बहाकर भी रक्षा करना, देखना कहीं बाप दादा के नाम को बट्टा न लगने पाये" सलीमा ने असगर की स्टेनगन और असगर की ओर देखकर कहा। "ऐसा ही होगा अम्मी अब मैं युद्ध में जा रहा हूं। यदि अल्ला ने चाहा तो आपका तथा अपने बाप दादा का नाम उजागर करूंगा" असगर ने अपनी मां की ओर देखकर कहा। युद्ध का नाम सुनकर सलीमा घबरा गई। एक ही तो उसकी धरोहर थी, असगर। उसी का तो सहारा था। युद्ध का नाम सुनकर वह कुछ क्षण चुप रहकर बोली "तो क्या पाकिस्तान ने युद्ध की घोषणा कर दी है ?" सलीमा ने उदास मन से असगर की ओर देखकर कहा। "अभी नहीं अम्मी, पर ऐसा लग रहा है कि एक दो दिन में युद्ध छिड़ जावेगा तभी तो मुझे कैप्टन साहिब ने अपनी बीवी तथा बच्चों को लेकर घर भेजा है।" सलीमा असगर की बात बड़े ध्यान से सुन रही थी बोली "और क्या कहा था कैप्टन साहिब ने?" 'कुछ नहीं केवल यही कहा था कि अपनी मां से भी मिलकर आना' अब सलीमा बिल्कुल खामोश थी थोड़ा अन्धेरा हो रहा था। सलीमा अन्दर गई और दीपक जलाया। असगर के लिए खाना तैयार किया और असगर के पास एक चारपाई पर लेट गई। "तुम बोलती नहीं अम्मी" असगर ने खामोशी को तोड़ते हुए सलीमा से

पूछा पर सलीमा कुछ न बोल सकी। उसके मन में कई भाव आने लगे 1947 का पूरा चित्र उसकी आंखों के आगे घूमने लगा। अब असगर भी थका हुआ था उसको भी नींद आ गई। असगर दो दिन घर ठहरा। सलीमा असगर को लेकर पीर बादशाह के मकबरे पर दुआ मांगने गई। पीर बादशाह पर कपड़ा चढ़ाया और अपने पुत्र के युद्ध के उपरान्त सुरक्षित आने की दुआ मांगी। अब सलीमा बड़ी उदास थी वह असगर से बड़ी बातें नहीं कर रही थी क्योंकि जब भी वह असगर से बात करने लगती तो उसकी आंखें छलक उठतीं, न जानें क्यों?

दूसरे दिन असगर ने वापस जाना था। सलीमा असगर के पास चारपाई पर लेटी स्वप्न ले रही थी स्वप्न में उसे पीर बादशाह के दर्शन हुए बादशाह बोले "तू बड़ी खुश किस्मत है सलीमा। तेरा लड़का असगर इस युद्ध में बड़ी बहादुरी पायेगा" स्वप्न में सलीमा खिलखिलाकर हंसी। उसकी जब आंख खुली तो उसने देखा कि पीर बादशाह गायब हैं। अब सलीमा को नींद न आ सकी। पौ-फटी सवेरा हुआ। असगर ने जाने की तैयारी कर ली। असगर अपने कैप्टन साहिब के बीवी बच्चों को सलाम करने उनके घर गया। सलीमा भी साथ थी। असगर ने निहालसिंह की बीवी को सलाम किया और चलने लगा। तब निहाल सिंह की बीवी बोली, "असगर, युद्ध में ज़रा अपने कैप्टन साहिब का भी ध्यान रखना।" "आप फिकर न करो चाची, मैं जीते जी उन पर आंच न आने दूंगा।" अब असगर ने अपनी मां के पैर छुए और सलाम करके चल दिया। सलीमा असगर को जाते तब तक देखती रही थी जब तक वह उसकी नज़रों से ओझल न हो गया था।

स्यालकोट सैक्टर में असगर की सेना मोर्चा बना रही थी। सुबह के पांच बज गये थे। अचानक पीछे से वायरलैस आया

"एडवांस मार्च" अब असगर की सेना पुनः आगे बढ़ी। युद्ध आरम्भ हुए कुछ दिन बीत चुके थे। ज्योंहि वह आगे बढ़े त्योंहि उस स्थान पर जहां वह मोर्चा बना रहे थे हवाई सेना ने बम बरसाने शुरू कर दिये और आगे से टैंकों की धर्र धर्र की आवाज सुनाई दी। अब कैप्टन निहालसिंह ने भी आगे बढ़कर कुछ जवानों की मदद से टैंकों पर आक्रमण कर दिया। असगर की सेना के जवानों के दायें और बायें कतारें लगती चली गईं। अब कैप्टन निहालसिंह टैंकों के घेरे में आ चके थे। एक के बाद दूसरा टैंक आगे बढ़ रहा था। अब असगर ने अपने पांच बचे हुए साथियों को जान पर खेल जाने को कहा और टैंकों पर हाथ से बम (हैंडग्रिनेड) फैंकने को कहा। वह स्वयं अपनो स्टेनगन को कन्धे पर लटका कर हाथ में दो हैंडग्रिनेड लेकर आगे बढ़ा और सीधा एक टैंक पर चढ़ गया। टैंक के ऊपर के सुराख का ढक्कन खुला था असगर ने उस सुराख से टैंक में हैंडग्रिनेड फैंक दिया। धमाका हुआ बोच बैठे व्यक्ति मारे गये टैंक से धुआँ बड़ी तेजी से निकलने लगा। टैंक तबाह हो गया था, इसी प्रकार बड़ी तेजी से असगर ने शत्रुओं के तीन टैंक तबाह कर डाले अब ज्योंहि वह चौथे टैंक पर चढ़ रहा था त्योंहि एक गोली उसकी छाती पर लगी और असगर लुढ़क कर भूमि पर आ गिरा। टैंकों का तेजी से बढ़ना अब रुक चुका था। टैंकों के ऊपर भारतीय वायुसेना ने आक्रमण कर दिया था। घमासान युद्ध छिड़ गया। कुछ ही क्षणों में पाकिस्तान के पांच टैंक तबाह हो चुके थे। अब थोड़ी देर के लिए गोलाबारी बन्द हुई।

दूसरे दिन आठ बजे युद्ध विराम हो चुका था फौज में गुम हुए सिपाहियों तथा मारे गये सिपाहियों की गिनती हो रही थी। अब कैप्टन निहालसिंह ने असगर खां का नाम दोहराया तो उन्हें पता चला कि उनके युद्ध में कूद पड़ने के उपरान्त असगर खां ने अकेले

ीन टैंक तबाह कर डाले थे ज्योंहि वह चौथे टैंक पर चढ़ा था
्योंहि वह लुढ़क गया था उसका मृत शरीर भी किसी ने नहीं देखा
ा सम्भवत: उसे पाकिस्तान के फौजी जवान उठा ले गये थे।

दूसरे दिन असगर खां के घर तार भेज दिया गया था, "असगर मिसिंग इन स्यालकोट सैक्टर" सलीमा को ज्योंहि तार मला था त्योंहि वह उसे पढ़ाने गांव में निकली थी पर उसका ाफ अर्थ कोई न बता रहा था। कभी सलीमा तार को खोलती ीर देखती उसके आंसू उस तार के कागज पर गिरते। बार बार ांसुओं के कागज पर गिरने से उसके लड़के असगर का नाम पढ़ना ी कठिन हो गया था। सलीमा प्रतिदिन निहालसिंह की बीवी के ास जाती पर उनके घर भी निहाल सिंह का कोई पत्र न आता ा। सलीमा ने तीन दिन तक न कुछ खाया और न कुछ पिया ा। गांव के हर व्यक्ति ने उसे भोजन करवाने की चेष्टा की थी र सलीमा उस कागज के टुकड़े को लेकर ही आंसू बहाती रहती ा।

तार आने के पांचवें दिन कैप्टन निहालसिंह का पत्र घर आया ा। उसने और कुछ न लिखा केवल यही लिखा था "हम कल मृतसर पहुंच रहे हैं युद्ध विराम हो गया है और शीघ्र ही घर आ वेंगे यदि पत्र डालना हो तो इस पते पर डालना साथ में अपना मृतसर का अड्रैस दिया था।

अब सलीमा पहले की भान्ति पुन: कैप्टन निहाल सिंह के : आई तो निहालसिंह के पत्र के बारे उसे पता लगा, पर सलीमा असगर के बारे कोई जानकारी न मिली वह बिलख उठी। अब ाने वह पत्र निहाल सिंह की पत्नी से ले लिया। वह गांव के पंच के पास गई और बिलख कर बोली "अल्ला के लिए मुझे : असगर के पास पहुंचा दो" साथ में सलीमा ने निहालसिंह का

पत्र सरपंच की ओर बढ़ाया। सरपंच ने पत्र पढ़ा। तार जो सलीमा साथ ही ले आई थी वह भी उसने सरपंच को दे दिया।

सरपंच को सलीमा की दशा पर दया आ गई और वह उसी क्षण अमृतसर चलने को उद्यत हो गये। अब सलीमा झट घर गई और असगर का फोटो और सौ-सौ के दो नोट अपने रूमाल में बांध कर अपनी जेब में डाल लिए और सरपंच के साथ अमृतसर के लिए रवाना हो गई।

रात के आठ बजे सलीमा सरपंच के साथ अमृतसर की छावनी के गेट पर पहुंच गई। गेट पर खड़े सिपाही ने उन्हें अन्दर जाने से रोका तो सरपंच ने सिपाही को कैप्टन निहालसिह का पत्र बताते हुए कहा "हम कैप्टन निहालसिह से मिलने आए हैं। यह असगर खाँ सूबेदार की मां, सलीमा है" "असगर खाँ सूबेदार की मां!" सिपाही ने बड़ अचम्भे से सलीमा की ओर देखा।

"क्यों मेरा असगर तो ठीक है न? बेटा" सलीमा ने सिपाही को आंसू भरी नजरों से देखा। "कुछ नहीं मां! ईश्वर सब ठीक करेंगे" "चलो बेटा जल्दी मुझे असगर से मिला दो" सलीमा ने सिपाही को कातर दृष्टि से देखते हुए कहा अब गेट पर खड़े सिपाही ने सलीमा और सरपंच को थोड़ा विश्राम करने को कहा। उसकी डयूटी का समय समाप्त हो रहा था उसने सोचा कि यदि दूसरा सिपाही डयूटी पर आ जावे तो वह स्वयं उन्हें छोड़ आवेगा।

उधर कैप्टन निहालसिंह अपने कमरे के आगे टहल रहे थे। उन्हें असगर खां का युद्ध भूमि में गुम होने का बड़ा ही दुःख था। वह इन्हीं विचारों में डूबे इधर से उधर टहल रहे थे। अचानक अपने आगे बूटों की एकदम खड़ाक की आवाज से वह सावधान हो गये "सलाम कैप्टन साहिब" असगर ने कैप्टन निहालसिह की ओर

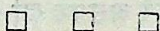
देखकर कहा। "तुम आ गये असगर।" कैप्टन निहाल सिंह ने असगर की ओर अचम्भे से देखा। "हां कैप्टन साहिब मेरी मां आपसे मिलने के लिए छावनी के गेट पर खड़ी है आप चलिए" यह बात कहकर असगर खां एकदम फौज के शिष्टाचार से घूमा और चल दिया। अब कैप्टन निहाल सिंह भी असगर के पीछे इस प्रकार से चल रहे थे मानों असगर उनका कोई बड़ा अफसर हो। अब कैप्टन निहाल सिंह को अपने मन की सुधि न थी। न जाने कौनसी शक्ति उन्हें गेट की ओर बढ़ाए जा रही थी।

उधर दूसरा सिपाही गेट पर आ चुका था। सलीमा ने दूसरे सिपाही से पूछा "बेटा! मेरा असगर खैरियत है न?" तब सिपाही ने कहा था "सूबेदार असगर खां के बारे अभी अभी टैलीग्राम आया है कि वह तीन टैंकों को तबाह करके शहीद हो गये हैं। उन्हें परमवीर चक्र की उपाधि दी जावेगी" दूसरे सिपाही के मुंह से असगर के शहीद होने की खबर सुनकर सलीमा भूमि पर लुढ़क पड़ी। सरपंच तथा सिपाही ने बहुतेरा सम्भाला पर वह बेहोश हो गई थी।

"आगे चलो कैप्टन साहिब! मेरी मां आगे मेरा इन्तजार कर रही है। वह देखो सामने गेट पर लेटी है, बेहोश मेरी मां।।" यह शब्द कहकर असगर का शरीर गायब हो गया। कैप्टन निहाल सिंह ने इधर उधर देखा तो असगर नहीं था। वह सीधे गेट की ओर बढ़े। गेट पर सलीमा अचेत लेटी थी। कैप्टन निहालसिंह को देख सिपाही विदक पड़ा सल्यूट किया, बोला "साहब! ग़जब हो गया।" "जल्दी गाड़ी लाओ" कैप्टन निहालसिंह ने शीघ्रता में कहा। अब दूसरे ही क्षण सलीमा को गाड़ी में बैठाकर सेना के औषाद्यालय में लाया गया। उपचार करने पर सलीमा ने एक बार आंखें खोलीं और कैप्टन निहालसिंह की ओर देखकर कहा "मेरा

बेटा सूबेदार असगर खां मुलक के लिए शहीद हो गया है मालिक, मैं उसको मुबारकबाद देने जा रहो हूं" वह फिर न बोल सकी थी। कैप्टन निहालसिंह की आंखों ने जल की झड़ी बांध दो थी। दूसरे दिन लोगों ने समाचार पत्रों में पढ़ा था—

नाईब सूबेदार असगर खां नम्बर 48965 नाईंथ जे० ऐण्ड के०, पाकिस्तान के साथ युद्ध में स्यालकोट सैक्टर में तोन टैंकों को तबाह करके शहीद हो गये।



'सती'

जयेष्ठ मास की मध्याह्न थी। सूर्यदेव अग्नि शालाकाओं से पृथ्वी के हृदय को दग्ध किये जा रहे थे। सभी पशु-पक्षी वृक्षों की घनी छाया का आश्रय ले रहे थे। तभी सावित्री के घर की छत पर चीं चीं की आवाज ने सोई हुई सावित्री को जगा दिया। सावित्री ने अपनी आंखें मलीं, अंगड़ाई ली और छत की ओर देखा। छत पर चिड़ियों के घोंसले की ओर एक काला अजगर बढ़ा चला आ रहा था। ज्योंहि वह फुंकारा मारता त्योंहि चिड़िया चीं चीं की आवाज करती और अपने पर फैला देती। उसके दो नन्हें बच्चे भी अपने सिरों को घोंसले के बाहर निकालते और चीं चीं बोलते। यह चिड़िया का घोंसला सावित्री के पति रघुवीर सिह ने एक बार उखाड़ दिया था तो सावित्री उससे लड़ पड़ी थी उसने कहा था, "क्यों किसी का घर उजाड़ते हो?" उसके उपरान्त चिड़िया ने पुनः छत पर अपना घोंसला लगा दिया था अब की बार रघुवीरसिह ने घौंसला तोड़ने की चेष्टा नहीं की थी। रघुवीर सिह पास ही दूसरे कमरे में सोया था और उसके उसी कमरे में उनके दोनों बच्चे धन्नू जिसकी आयु दो वर्ष और चम्पा जिसकी आयु पांच वर्ष की थी लेटे थे। जब सावित्री ने सांप को उस घौंसले की ओर बढ़ते हुए देखा तो उसकी चीख निकल गई "बच्चे खा. . . खा लिए—चिड़िया के बच्चे। घर उजड़ गया चिड़िया का।" और दूसरे ही क्षण उसने पास ही कमरे के कोने में रखे बांस के डण्डे को उठाकर सांप पर पटक दिया। खड़ाक की आवाज सुनकर उसके पति की आंख खुली वह उठा, आवाज दी 'क्या है?' अब साँप चिड़िया के घौंसले की ओर बढ़ने की बजाए सावित्री की ओर लपक चुका था। सांप ने ज्योंहि

सावित्री पर फन का प्रहार किया त्योंहि सावित्री ने अपने हाथ से साँप को हटाने की चेष्टा की और साथ ही चिल्लाई "खा लिया, खा लिया" रघुवीर सिह के कमरे के अन्दर प्रवेश करने तक सांप सावित्री की अंगुली को काट चुका था। अब सांप सावित्री के पास ही फन फैला कर बैठा था। रघुवीर सिंह ने खड़ाक से कमरे का दरवाजा खोला। ज्योंहि उसकी नजर काले सांप पर पड़ी तो वह एक क्षण के लिए सहम गया। साँप उस स्थान से एक इंच न हिला था। अब रघुवीर ने वहीं पास पड़े बांस के डण्डे से सांप को मार दिया। सावित्री कुछ न बोली उसकी आंखों से आसू टप-टप करके भूमि पर गिर रहे थे। अब रघुवीर सिंह ने सावित्री की ओर देखा उसकी स्थिति गम्भीर थी। अंगुली से रुधिर बह रहा था। पास ही मरी हुई चिड़िया पड़ी थी। चिड़िया के वे दोनों नन्हें २ बच्चे अभी भी अपने घौसले से अपने सिर निकाल कर चीं चीं बोल रहे थे। सावित्री ने अब एक बार छत की ओर देखा और भूमि पर लेट गई, बोली "अब मेरा शरीर नहीं रहेगा पर मेरे मरने के उपरान्त चिड़िया के नन्हें बच्चों को घर से न निकालना और यदि आपने दूसरी शादी करनी चाही तो मेरे धन्नू और चम्पा को इनके मामों के घर छोड़ देना। कहीं ऐसा न हो कि मां के बिना मेरे चिड़िया के बच्चे तथा धन्नू और चम्पा इस घर में रहकर किसी द्वारा सताये जावें" यह कहकर सावित्री ने अपनी नजर छत की ओर गाड़ दी। रघुवीर सिंह कुछ न बोल सका इस शोर शराबे में चम्पा की आंख भी खुल गई थी। धन्नू भी जाग पड़ा था वह रोने लगा तो चम्पा उसे गोदी में उठा कर उसी कमरे में ले आई जहां उसकी मां अपनी अन्तिम सांसें ले रही थी। धन्नू टुप टुप करता अपनी मां के पास जा बैठा पर चम्पा सांप को देख कर बिदक उठी बोली "हाय रे सांप।" उसकी चीख सुन कर सावित्री

की आंखें खुली थीं उसने एक बार चम्पा की ओर और एक बार धन्नू की ओर देखा था। हाथ के संकेत से उसने चम्पा को अपने पास बुलाया था। हाथ धन्नू और चम्पा के सिरों की ओर प्यार देने के लिए बढ़े होंठ फड़फड़ाये अब दूसरे ही क्षण सावित्री की आंखें बन्द हो चुकी थीं। रघुवीर सिंह बिलख उठा। चम्पा चीख पड़ी धन्नू भी उसको देखकर जोर जोर से रोने लगा। पड़ोस के सभी स्त्री पुरुष इक्ट्ठे हुए। एक ने कहा "अब क्या देखते हो रघुवीर। सावित्री ठण्डी हो चुकी है कोई दान करवा दो" अब सावित्री से दान इत्यादि करवाया गया। धन्नू और चम्पा सब कुछ देखते रहे। सावित्री का अन्तिम संस्कार किया गया। रघुवीर उस समय छोटी सी रियासत के राजा का दीवान था। उस समय मनुष्यों को दो-दो तीन-तीन विवाह करने की समाज ने छूट दे रखी थी पर स्त्री को पति की मृत्यु पर अवश्य सती करवाया जाता था। अभी सावित्री को मरे केवल दो मास ही बीते थे कि रघुवीर सिंह के रिश्तेदार उसको दूसरे विवाह के लिए तैयार करने लगे पहले तो रघुवीर नहीं माना पर जब वहां की रियासत के राजा ने भी उसे दूसरा विवाह करवाने पर बल दिया तो वह मान गया। सावित्री की सभी बातें उसे भूलती गईं।

आज रघुवीर सिंह की शादी थी। चम्पा और धन्नू को पड़ोस के घर में ले जाया गया था। क्योंकि लोगों के मन में यह धारणा थी कि वह दोनों बच्चे अपने बाप को सेहरा बांधते नहीं देखेंगे। धन्नू चम्पा को पूछ रहा "बहनां, आज पिताजी अम्मा को लेने जायेंगे ?" चम्पा की आंखों में आंसू थे। उसके पास धन्नू की बातों का कोई उत्तर न था। धन्नू को सावित्री की मृत्यु पर भी यह बताया गया था कि उसकी मां कहीं दूर चली गई है। अब धन्नू को चूमती हुई चम्पा बोली "भैय्या अम्मा की बहन को लेने

जा रहे हैं पिताजी। अम्मा तो बहुत दूर चली गई है" यह बात कहकर चम्पा ने छोटे धन्नू को गोदी में उठा लिया अब धन्नू फिर बोला "बहना ! कहीं तू भी न चले जाना" छोटे धन्नू की इस बात को सुनकर चम्पा की आंखें आंसुओं से भर गईं और उसने अपने छोटे भाई धन्नू को गले से लगा लिया और बोली "भैय्या मैं आप को अकेले छोड़कर दूर न जा सकूंगी" अब धन्नू चम्पा की इस बात को सुनकर चम्पा के गले से लिपट गया उधर पास ही उनके घर में विवाह के बाजे जोर जोर से बजने लगे। रघुवीर सिंह बारात लेकर अपने दूसरे ससुराल चल दिया।

अब रघुवीर की दूसरी शादी समीप के एक गांव के जिमींदार की लड़की से सम्पन्न हो चुकी थी। धन्नू की सौतेली मां गोबिन्दी जब से घर आई थी तब से ही वह धन्नू और चम्पा के लिए एक आफत बन चुकी थी। जरा जरा सी बात पर वह दोनों बच्चों को पीटने लगती। रघुवीर सिंह पास खड़ा रहता। एक दिन रघुवीर सिंह बाहर बरामदे में बैठा तम्बाकू पी रहा था तो छोटा धन्नू आकर उसकी टांगों से आकर लिपट गया बोला "पिता ! दूसरी अम्मा मुझे और बहना को बहुत मारती है। तुम क्यों नहीं बोलते पिता ?" धन्नू ने रघुवीर सिंह की टांगों को अपने छोटे २ कोमल हाथों से पकड़कर पूछा। रघुवीर सिंह के पास छोटे धन्नू की बातों का कोई उत्तर न था। उसने धन्नू को उठाया और गले से लगा लिया अब क्या था गोबिन्दी सांपनी की भान्ति अन्दर से फुंकारी और बाहर छोटे धन्नू को भुजाओं से पकड़ कर आंगन में पटक दिया बोली "कितना झूठ बोलता है ? अभी दो अढ़ाई वर्ष का ही है। जब बड़ा होगा तब तो मुझे यहां से निकाल ही देगा। हाय ! मैं क्या करूं यदि ये आपके बच्चे ऐसे सांप थे तो आपने दूसरी शादी क्यों की थी ?" धन्नू आंगन में बिलख रहा था, रघुवीर सिंह

ारामदे में चुपचाप बैठा था उसकी इतनी हिम्मत न थी कि वह ोबिन्दी के सामने बोल सके। और बच्चे को वहां आंगन से उठा र चुप करा सके। अब चम्पा ने आगे बढ़कर धन्नू को उठाने की ोशिश की तो गोबिन्दी उस पर लपक पड़ी बोली "रांड कहीं की रा ठहर तेरा भी मुंह काला करती हूं" यह बात कहकर गोबिन्दी आगे बढ़कर चम्पा के दो तीन लातें जमा दीं। बेचारी चम्पा भी न्नू के पास गिर पड़ी और सिसक २ कर रोने लगी। गोबिन्दी व बड़बड़ाती हुई अन्दर की ओर चली गई। दोनों ही बच्चे ांगन में उगे नीम के पेड़ के नीचे सिसक २ कर रो रहे थे। अब ोनों चिड़िया के बच्चे वृक्ष पर आकर बैठ गये और जोर जोर से ीं चीं करने लगे मानों वह रघुवीरसिंह को नाराज होकर गालियां नकाल रहे हों। अब एक चिड़िया का बच्चा फुर्र से उड़ कर धन्नू ी गोदी में आकर बैठ गया और दूसरा चम्पा के आकर बैठ गया। घुवीर सिंह चुप बैठा उन चिड़िया के बच्चों को देख रहा था। ब धन्नू का ध्यान उन चिड़िया के बच्चों की ओर चला गया वह नसे खेलने लगा। चिड़िया के बच्चे उछल उछल कर कभी उसके ागे और कभी पीछे बैठते कभी उड़कर दूर बैठ जाते। धन्नू अब कलकारियां मारकर उन चिड़िया के बच्चों की तरफ भाग रहा ा। गोबिन्दी ने अब बाहर आकर देखा तो वह चिड़िया के बच्चे ुर्र से उड़कर नीम के वृक्ष पर बैठे मानों वह भी उससे भयभीत ों। जब कभी गोबिन्दी उन बच्चों, धन्नू और चम्पा को पीटती ी वह दोनों चिड़िया के बच्चे धन्नू और चम्पा को इसी ढंग से चुप राते थे। रघुवीर सिंह पास बैठा रहता कुछ न बोलता था। इसी कार दिन बीतते गये अब धन्नू पाँच वर्ष और चम्पा आठ वर्ष की ी चुकी थी। गोबिन्दी को रात दिन उन बच्चों से छुटकारा पाने ी चिन्ता बनी रहती थी। गोबिन्दी के पास के गांव में एक बहुत

बड़ा जागीरदार रहता था। अब घटना इस प्रकार घटी कि उस जागीरदार की पत्नी स्वर्गवास हो गई। उस जागीरदार की आयु पचास वर्ष की थी। उसपर उसे अफीम और शराब की भी आदत थी। वह बिना अफीम खाये और बिना शराब पिए एक कदम भी न चल सकता था। सिर का गंजा, आँख का काना वह जागीरदार अब दूसरा विवाह करना चाहता था। उसने अपने दूसरे विवाह की बात एक दिन गोबिन्दी के बाप से चलाई और कहा "आप गोबिन्दी से बात करना यदि दो तीन हजार रु० लेकर भी लड़की देने के लिए मान जाये तो हम दे देंगे।" दो तीन हजार रुपये की बात सुनकर गोबिन्दी के बाप के मुंह में पानी भर आया, बोला 'जैलदार साहिब ! रुपये की क्या बात है। मैं गोबिन्दी से बात करूंगा। उस की सौंकन (सौत) की लड़की अभी युवा हो रही है यदि वह मान गई तो" गोबिन्दी के बाप की बात अभी पूरी भी नहीं हुई थी कि जैलदार बोला "तो क्या ? तीन हजार उनको और एक हजार आप को दे दूंगा आप कल हो गोबिन्दी को बुलाकर बात पक्की कर लो" यह कहकर जैलदार ने अपनी जेब में हाथ डाला और चांदी के दस रुपये खन-खन की आवाज से एक-एक करके गोबिन्दी के बाप के आगे रख दिये और बोला "यह रास्ते का तथा गोबिन्दी के आने-जाने का खर्चा रहा और अब मैं चलता हूं परसों शाम को पता लूंगा" यह बात कह कर जैलदार ने जेब से अफीम की डिबिया निकाली अफीम की एक गोली को मुंह में डालकर गोबिन्दी के बाप से पानी मांगकर घूंट पानी के पिये और चल दिया।

अब क्या था गोबिन्दी के बाप ने गोबिन्दी को बुलाकर सारी बात पक्की करवा दी। वह तो पहले ही चम्पा और धन्नू से छुटकारा पाने की सोच रही थी। उसके तो पौं-बारह हो गये उसे साथ रूपये मिलने का भी आश्वासन मिल गया था। पंडित को

बुलाकर विवाह की तिथि भी निश्चित करवा दी गई। तीसरे दिन जब जैलदार पुन: गोबिन्दी के पिता से मिलने आया तो वह यह बात जानकर बड़ा प्रसन्न हुआ कि गोबिन्दी ने विवाह की तिथि भी निश्चित कर दी है। वह झट अपने घर वापस गया और एक हजार रुपया थैली में डालकर उसने गोबिन्दी के पिता को दे दिया और तीन हजार रुपया विवाह के समय देने का वायदा किया। गोबिन्दी रुपयों को देखकर बड़ो प्रसन्न थी। अब गोबिन्दी ने भी एक हजार रुपया पहले ले लेने का प्रस्ताव जैलदार के सम्मुख रखा। जैलदार झट इस प्रस्ताव को भी मान गया वह पुन: घर गया और एक हजार रुपया और लाकर उसने गोबिन्दी को भी दे दिया। जब बात पक्की हो चुकी तो जैलदार ने अपनी जेब में से अफीम की डिबिया निकाली और अफोम की एक गोली निकाल कर पानी मांगा अब गोबिन्दी ने जैलदार को पानी लाकर दिया।

पानी का घूंट पीकर जैलदार बोला "देखो गोबिन्दी तूने मेरा घर बसाया है जब कभी कोई आवश्यकता हो तो बिना झिजक मेरे पास आ जाया करो" यह बात कह कर जैलदार अपने घर की ओर बढ़ा।

अब जैलदार के गांव में भी उसकी दूसरी शादी की खबर फैलते देर न लगी। जैलदार सारा दिन अफीम और शराब के नशे में मदहोश रहता उसको अब अपने शरीर को भी सुधो नहीं थो। एक तो वह वैसे ही अधेड़ आयु का दुबला पतला व्यक्ति था और उस पर शराब और अफीम का नशा उसकी हड्डियों को कुरेदता चला गया। शादी को अभी दो मास बाकी थे और जैलदार अपने आपको विवाहित समझ रहा था। अच्छे कपड़े पहनता और खूब पीता। नतीजा यह निकला कि विवाह के एक मास पूर्व ही उसे ज्वर हो गया। वैद्य लोग बुलाये गये। उन्होंने उसे शराब और

अफीम से परहेज करने की राय दी पर सब बेसूद। जैलदार को अफीम और शराब की ऐसी आदत पड़ चुकी थी कि वह उसके बिना एक पल भी नहीं रह सकता था। अब जैलदार को खांसी ने भी आ घेरा। वैद्यों ने उसके रोग को क्षय रोग घोषित कर दिया।

चम्पा के विवाह को अब कुछ ही दिन शेष थे। गोबिन्दी को उसके बाप ने बुलाकर जैलदार की बिमारी के बारे भी सूचित कर दिया पर गोबिन्दी ने अपने पिता की एक न मानी। अब विवाह को कुछ ही दिन शेष थे। जैलदार के घर विवाह की तैयारियां बड़ी धूम-धाम से होने लगीं। जैलदार का बुखार कभी घट जाता और कभी पुन: हो जाता। उधर गोबिन्दी ने भी विवाह की तैयारी कर रखी थी। रघुवीर सिंह को चम्पा के रिश्ते का पता था पर उसकी गोबिन्दी के सामने कोई पेश न चलती थी। गांव के कुछ लोगों ने चम्पा का रिश्ता हटा देने की सलाह भी रघुवीर सिंह को दी थी पर रघुवीर सिंह चुप रहा था।

अब जब चम्पा के विवाह को कुछ ही दिन शेष थे तो गांव की स्त्रीयां गोबिन्दी के घर रात को आ जातीं और गाने गातीं। एक दिन धन्नू ने चम्पा से पूछा था "बहना अब तू चली जायेगी तो मैं अकेला कैसे रहूंगा?" यह बात सुनकर चम्पा ने अपने छोटे भाई धन्नू को प्यार करते हुए कहा था, "भैय्या मैं तुझे अकेले नहीं छोड़ूंगी" यह बात कहकर चम्पा ने अपने छोटे भाई धन्नू को गले लगा लिया था। अब की बार गोबिन्दी ने उन दोनों को आपस में प्यार करते हुए देख कुछ नहीं कहा था पर रघुवीर सिंह ने आगे जाकर धन्नू को उठा कर एक बार चूम लिया था और कहा था "बेटा तुम घबराओ नहीं मेरे साथ रहा करना" पर छोटे धन्नू ने अपने पिता की ओर कातर दृष्टि डाल कर देखा था और कहा था, "नहीं पिता। तुम झूठ बोलते हो" यह बात कहकर धन्नू ने अपने

पिता की ओर से मुंह मोड़ लिया था।

आज रघुवीर के घर बारात आई थी। बाजे बज रहे थे। रघुवीर के आंगन में चार केले के पत्ते चारों कोनों में बांसों के सहारे खड़े किये थे। जिनके बीच विवाह का मण्डप बना था। पंडित लोग बड़े जोर जोर से मन्त्र पढ़कर चम्पा और जैलदार के विवाह की रस्में पूरी कर रहे थे। धन्नू बरामदे में खड़ा यह सब कुछ देख रहा था। आज उसने बड़े उज्जवल कपड़े पहने हुए थे। गोबिन्दी अब एक बड़ा सा घूंघट निकाल कर चम्पा को साथ लिए विवाह की रस्में पूरी करवा रही थी। चम्पा लाल कपड़ों में लिपटी सिसकियाँ भर रही थी कभी कभी वह अपने घूंघट से धन्नू को देख लेती थी।

विवाह हुआ चम्पा की डोली उठी। धन्नू बिलख पड़ा भूमि पर लेट गया उसे ऐसा लगा कि चम्पा को उठाकर यमदूत ही ले जा रहे हैं। और वह दोबारा उसके पास न आवेगी। वह रोता हुआ चुप न हो रहा था रघुवीर ने उसे उठाया पर वह न माना। अन्त में बच्चे की जिद्द के अनुसार उसे भी चम्पा की डोली में डाल कर भेज दिया गया। सभी लोग चले गये दूसरे दिन चम्पा पुनः मायके आई ज्योंहि वह आंगन में बैठी त्योंहि चिड़िया के बच्चे उस नीम के वृक्ष पर आकर बैठ गये जिस पर वह पहले बैठा करते थे। धन्नू भी चम्पा के पास बैठा था। अब खांसता हुआ जैलदार भी रघुवीर के पास जाकर बैठ गया। वह अत्यन्त दुबला हो चुका था उसे आज भी ज्वर था। चारपाई पर बैठते ही उसने अफीम की डिब्बिया निकाली और एक गोली अफीम झट मुंह में डालकर पानी मांगा। गोबिन्दी से पानी का घूंट पीकर उसने अपनी जुबान खोली बोला, "गोबिन्दी तूने अपना वचन पूरा कर ही दिया" यह बात कहकर जैलदार खांसने लगा।

अब उसका ज्वर बढ़ रहा था। चम्पा और धन्नू उन चिड़िया के बच्चों से पहले की भान्ति खेलने लगे। धन्नू अब किलकारियां मार रहा था। वह उन चिड़िया के बच्चों को देखकर बड़ा प्रसन्न था पर चम्पा का मन आज बड़ा उदास था न जाने क्यों? अब जैलदार का ज्वर बढ़ता ही गया। जैलदार को दवाई दी गई बुखार तो हल्का हो गया था पर उस दिन के बुखार से जब दूसरे दिन जैलदार बिस्तर से उठा तो उसमें चलने फिरने की शक्ति शेष नहीं थी। गोबिन्दी ने जैलदार को उसके गांव भिजवाने का प्रबन्ध भी कर दिया।

जैलदार अपने गांव पहुंचकर दोबारा चारपाई से न उठ सका था। अब एक दिन ज्येष्ठ मास की सुबह जबकि चम्पा और धन्नू उसी नीम के वृक्ष के नीचे उन चिड़िया के बच्चों से खेल रहे थे तो एक व्यक्ति ने गोबिन्दी को जैलदार के स्वर्गवास होने की खबर दी। गोबिन्दी यह बात सुनकर चीख उठी। उसकी चीख सुनकर वह चिड़िया के दोनों बच्चे डर के मारे नीम के वृक्ष पर जा बैठे और चम्पा और धन्नू मां की ओर कातर दृष्टि से देखने लगे।

रघुवीर ने कमरे के बाहर आकर पूछा तो उसे पता लगा कि जैलदार स्वर्गवास हो गया है। रघुवीर चम्पा के विधवा होने की खबर से बिलख उठा। अपने बाप को बिलखता देख चम्पा और धन्नू भी बिलख उठे। चम्पा और धन्नू को रोता देखकर अब चिड़िया के दोनों बच्चे उनके पास आये और फुर्र से उड़ गये मानों वह भी सब कुछ जान गये हों। वे चिड़िया के बच्चे अब चुप होकर नीम के वृक्ष पर बैठ गये थे। अब क्या था आन की आन में सारे गांव के लोग भी आ गये। सब बड़े बूढ़े रघुवीर सिंह के घर इक्ट्ठे हो गये। अब सभी चम्पा को सती करवाने की बात सोचने लगे पंडित लोग भी आ गये। गंगा जल मंगवाया गया उस जल से

चम्पा को स्नान करवाया गया। चम्पा को तनिक भी पता न था कि यह सब लोग उससे क्या करवाना चाहते हैं। धन्नू एक बार फिर बिलख उठा। वह सदा चम्पा के साथ ही रहता था। अब कपड़े एक ट्रंक में डाले गये। पुनः डोली तैयार की गई। उसे अच्छे कपड़े पहना कर पुनः एक बार श्रृंगार कर डोली में डाला गया धन्नू पुनः चीखने लगा। अब कुछ लोगों के कहने पर उसे भी उस डोली में डाल दिया गया सोचा कि वहां जाकर उसे अलग कर लेंगे। अब सारे गांव के लोग गोबिन्दी और रघुवीर के साथ उस गांव की ओर बढ़े जिस गांव में जैलदार का मृतक शरीर पड़ा था दोपहर तक सभी लोग वहां पहुंच गये। वहां जाकर चम्पा को पता चला कि उसका पति स्वर्गवास हो चुका है। वह बिलख उठी। अब जैलदार की अर्थी उठी। जैलदार की अर्थी भी शमशान घाट की ओर चम्पा की डोली के साथ बढ़ने लगी। ज्यों-ज्यों लोग शंख ढोल बजाते त्यों-त्यों धन्नू जोर जोर से बिलखता। उसे गांव के एक व्यक्ति ने उठाया हुआ था वह अपनी दोनों भुजायें डोली की ओर करके रो रहा था। अब चम्पा से न रहा गया उसने धन्नू को डोली में बैठने का आग्रह किया तब एक बूढ़े के कहने पर उसे डोली में बैठा दिया गया। शमशान घाट पर जाकर अर्थी रख दी गई। कुछ स्त्रियों ने चम्पा को काजल इत्यादि लगाए। चम्पा इन सब बातों से अनभिज्ञ थी। उसके बालों को पुनः गूंथा गया। टीका लगाया गया। उसकी माँग में गांव की सभी स्त्रियों ने सिन्दूर डाला। पंडितों ने मन्त्र पढ़े और जैलदार की अर्थी को चिता पर रख दिया। अब चम्पा को भी चिता पर बैठा दिया गया। सभी लोगों ने चिता के चार चक्कर लगाये और चिता को आग लगा दी। ज्योंहि चिता को आग लगी त्योंहि धन्नू जोर से चीख पड़ा "बहना! ओ बहना— बहना" अब दूसरे ही क्षण लोगों ने धुएं में

देखा तो चम्पा चिता पर नहीं थी। सब लोगों ने उसे झाड़ियों मैं आसपास ढूंढना आरम्भ कर दिया अब अचानक ही गोबिन्दी की आवाज उस जंगल में गूंज गई वह बोल रही थी "वह छुपी हुई है रांड। उस झाड़ी में है" जिस झाड़ी की ओर गोबिन्दी ने संकेत किया था उसी झाड़ी में चम्पा छिपकर सहमी बैठी थी। अब कुछ लोगों ने उसे उठाकर जलती चिता पर रख दिया। धन्नू अब सहम कर उसी झाड़ी में जाकर छिप गया था। अब वह सहम चुका था कुछ न बोला था।

चिता प्रज्जवलित हुई। अब चिता से एक आवाज बार बार आ रही "भैय्या! ओ भैय्या।" कुछ क्षण यह आवाज चिता की लपटों में गूंजती रही और धीरे धीरे बन्द हो गई। चम्पा सती हो चुकी थी। सभी लोग धीरे धीरे अपने घरों को चल दिये। गोबिन्दी और रघुवीर भी अपने गांव की ओर बढ़े। गोबिन्दी ने आज कई बार रघुवीर को बुलाने की कोशिश की पर वह न बोला। आज उसकी आंखों के आंसू एक क्षण के लिए भी न रुक रहे थे। सभी लोग घरों को जा चुके थे पर धन्नू चिता के पास ही उगे पीपल के वृक्ष के नीचे बैठा सिसकियां भर रहा था। अब अचानक ही दो चिड़िया के बच्चे आये और धन्नू के दोनों कन्धों पर बैठ गये। सांझ हुई चांद चमका पर धन्नू उसी पेड़ के नीचे बैठा चिता को देखता रहा। रात को जंगल में कई जंगली जानवर अपनी अपनी बोलीयां बोल रहे थे पर उस छोटे से धन्नू के हृदय में उनका भी कोई भय नहीं था। ज्यों-ज्यों रात ढलती जाती थी त्यों-त्यों धन्नू की सिसकियां भी घटती जाती थीं।

अब ज्योंहि सूर्य निकला धन्नू के मुंह से जोर की आवाज निकली "बहना-- ओ बहना--" धन्नू की आवाज उस बीयाबान जगल के सन्नाटे को चीरती निकल गई। बड़ी दूर से एक आवाज

उस जंगल में पुनः गूंजी "भैय्या-- ओ- भैय्या" अब रघुवीर चिता की ओर बढ़ रहा था। ज्योंहि उसने चिता के पास वृक्ष के सहारे बैठे धन्नू को देखा तो वह आगे बढ़ा, पर धन्नू की आंखों की दोनों पुतलियाँ बदल चुकी थीं और उसके मृतक शरीर के पास ही दो चिड़िया के बच्चे मरे पड़े थे। उस दिन उपरान्त रघुवीर घर नहीं आया था और न ही उसे किसी ने कहीं देखा था। दूसरे ही दिन रियासत के कई गांवों में आग लग जाने से धन और जन की बड़ी मात्रा में हानि हुई थी। वहां के राजा ने उस सती की समाधि बनवाई साथ ही उसके भाई तथा चिड़िया के बच्चों की समाधियां बनवाई गई पर अभी तक भी उस जगल में दो आवाजें गूँजती हैं एक तरफ से आवाज आती है "बहना— ओ— बहना" उसके उत्तर में दूसरी आवाज गूंजती है
"भैय्या— ओ— भैय्या !

—o—o—o—

"कला और औरंगजेब"

बादशाह औरंगजेब की आयु जब ढलने लगी तो उसे अपने पूर्वजों का ध्यान आया। जिस कला के प्रति उसे घृणा थी उससे प्रेम जागा। शाहजहां के बनाए भवन उसके मस्तिष्क में घूमने लगे। ठीक मृत्यु के कुछ वर्ष पूर्व मनुष्य बुरे काम करना छोड़ देता है और जिन अच्छे कामों के प्रति, भद्र पुरुषों के प्रति उसे जीवन भर घृणा होती रही हो उनसे अनुराग जागता है। ईश्वर का भय प्राणी मात्र के हृदय को झकझोरता है। मृत्यु के कुछ वर्ष पूर्व मनुष्य अपने हृदय को टटोलता है कि उसने आयु भर क्या अच्छा और क्या बुरा किया है। ठीक यही दशा औरंगजेब के मन की थी। वह आयु भर हर प्रकार की कला का विरोध करता चला आया था उसने अपने पिता के समय के सभी दरबारी कवियों, लेखकों और कलाकारों को छुट्टी दे रखी थी। जहां तक कि अपने पिता द्वारा लगाए गये कलाकारों के वजीफे तक बन्द कर दिये थे। दरबार में हसने तक की मनाही थी औरंगज़ेब का दरबार एक मातम गृह था। उसने सारी आयु धर्मांधता के कार्य किए। वह ईश्वर से नहीं, राम से नहीं तो खुदा से अल्ला से अवश्य डरता था। यदि वह खुदा से न डरता होता तो मन्दिरों को गिराकर उनके स्थान पर मसजिदें न बनवाता।

बनारस में विश्वनाथ के मन्दिर को गिराने के दस वर्ष बाद बाद वह पुनः बनारस गया क्योंकि उसे किसी ने सूचना दे रखी थी कि बनारस के विश्वनाथ के मन्दिर बनाने का कार्य हिन्दुओं ने पुनः शुरू कर दिया है। इसी कारण वह पुनः बनारस गया था। पर औरंगजेब के काल में हिन्दू तो क्या शैय्या मुसलमान भी सिर ऊँचा करके नहीं चल सकते थे। जब वह बनारस पहुंचा और उसने

विश्वनाथ मन्दिर के खंडहरों को देखा तो उसे ऐसा लगा कि उसका अल्ला उस पर नाराज हो। आकाश पर घने बादल थे। जिस समय वह विश्वनाथ मन्दिर के खण्डहरों का निरीक्षण कर रहा था तो आसमान पर बड़े जोर से गरज हुई और उसके उपरांत इतने जोर से बिजली चमकी कि हिन्दुओं के मन्दिर की टूटी हुई मूर्तियों से उसे अपने अल्ला के खण्डर दीखने लगे। औरंगजेब जब मन्दिर के खण्डहरों का निरीक्षण करके वापस आया तो उसका शरीर कांपने लगा, चेहरा फीका पड़ चुका था। उस रात औरंगजेब को नींद न आई। रात करवटें बदलते ही बीत गई।

सुबह हुई पौ फटी औरंगजेब ने अपने नित्य कर्म से निवृत्त होकर दरबार लगाया। अपने साथ घटी घटना दरबार में कह सुनाई। तब औरंगजेब के दरबारियों ने उसे मन्दिर के स्थान पर मस्जिद बनवाने की सलाह दी जिससे अल्ला उस पर प्रसन्न हो सके। अब क्या था औरंगजेब ने उसी क्षण मन्दिर के खण्डहरों पर एक सुन्दर मस्जिद के निर्माण की आज्ञा दे दी। कारीगरों को ढूंडा गया। बनारस के सभी कलाकार औरंगजेब के बनारस आने की खबर सुन कर नगर को छोड़कर भाग चुके थे। स्थान स्थान से भवन निर्माण के कारीगरों को ढूंडा गया।

मस्जिद के निर्माण के कार्य को आरम्भ करवाकर औरंगजेब वापस दिल्ली पहुंचा। एक बजीर की देख-रेख में मस्जिद बनने लगी। तीन वर्ष के उपरान्त जब मस्जिद बनकर तैयार हुई तो बादशाह औरंगजेब उस मस्जिद को देखने पुनः एक बार बनारस गया। जब वह मस्जिद के अन्दर खड़ा था तो उसके कानों में आवाज आई, "ए मूर्ख बादशाह तू दूसरे के धर्म के खण्डहरों पर अपने धर्म के भवनों का निर्माण कर रहा है। ये तेरी वस्तुएं, सब कृपायें अस्थाई हैं। एक को मारकर दूसरे को जीवित रखना मेरे

कानून के विरुद्ध है। शक्ति से बनी कोई भी वस्तु स्थाई नहीं रहा करती। शक्ति की समाप्ति के साथ ही वह वस्तु समाप्त हो जाया करती है। उतार चढ़ाव प्रकृति का नियम है। इसे तू नहीं बदल सकता, अपने गुनाहों की क्षमा मांग" औरंगजेब आवाक उस मस्जिद के अन्दर से आई हुई आवाज को सुनता रहा। उसका मस्तिष्क चकराने लगा। लड़खड़ाती हुई आवाज से उसने सभी दरबारियों को वापस चलने का हुक्म दिया। उस मस्जिद के अन्दर से आई आवाज को औरगजेब के सिवाए और कोई न सुन सका था। सभी दरबारी औरंगजेब की इस मनोदशा को देखकर बड़े विस्मित थे। औरंगजेब ने सारी आयु मूर्तिकला का विरोध किया था पर उसके मन में अब यह बात आई कि किसी कारीगर से वह अपनी मूर्ति बनवाये और उस मूर्ति को बनारस के विश्वनाथ के मन्दिर के खण्डहरों पर बनी मस्जिद के प्राँगण में 'खुदा' के आगे हाथ बांधकर खड़ा करवा दे जो सदियों तक अल्ला से उसके गुनाहों की मुआफी मांगती रहे। यह ख्याल आते ही औरगजेब के मुरझाये हुए चेहरे पर कुछ रौनक आई। अब तुरन्त उसने अपने अमीरों को आगरा चलने का आदेश दे दिया कुछ दिन उपरान्त बादशाह औरंगजेब आगरा पहुंचा। उसने सोचा था कि आगरा पहुंच कर कुछ दिन विश्राम करने से स्वास्थ्य लाभ होगा। पर कहां? अपराधी को जब उसके अपराध याद आ जाते हैं तो नींद और आराम उससे कोसों दूर भाग जाया करते हैं। आगरा पहुंचकर भी औरंगजेब को रात घन्टों नींद न आती थी। उसने तब एक दिन बड़े-बड़े मुल्लाओं तथा हकीमों को बुलाकर अपने मन की दशा का वर्णन किया और बात का हल ढूंडने को कहा। अपने मन में आया अपनी मूर्ति बनवाकर मस्जिद के प्रांगण में खड़ा करने का विचार भी उन्हें कह सुनाया। तब मुल्लाओं और हकीमों ने उसे मूर्ति

बनवाने और मस्जिद के प्रांगण में खड़ा करने की सलाह दे दी।

अब क्या था मूर्तिकारों की तलाश के लिए स्थान स्थान पर लोग भेजे गये, पर महानगरों में एक भी मूर्तिकार न मिला। सभी ने अपने अपने पेशे छोड़ दिये थे। तब कुछ लोग औरंगजेब ने हिमाचल की ओर भेजे उसे यह पूर्ण विश्वास था कि हिन्दू राजाओं के आश्रित मूर्तिकार अवश्य हिमाचल प्रदेश में मिल जावेंगे। औरंगजेब के शासन काल में जब से कलाकारों के वजीफे बन्द कर दिये थे तभी से कुछ कलाकार हिमाचल प्रदेश और राजस्थान की ओर चले आये थे। वहां आकर उन्होंने हिन्दू राजाओं के अधीन अपनी मूर्तिकला का निर्माण करना आरम्भ कर दिया था। उन्हीं कलाकारों में से घन्हेय्या लाल एक मूर्तिकार कांगड़ा आकर बस गया था। औरंगजेब के भेजे हुए व्यक्तियों द्वारा पूछताछ करने पर उन्हें घन्हैया नाम के मूर्तिकार का पता लग गया। वे लोग सीधे उसके पास गये। घन्हैया उस समय अपने झोपड़े के आंगन में पत्थर पर एक मूर्ति कुरेद रहा था। जब कुछ लोगों को उसने अपने झोपड़े के आंगन में खड़ा देखा तो उसने अपनी छैनी और हथोड़ी रख दी। झट अपने झोंपड़े के अन्दर आया और बाहर से आये हुए अपरिचित लोगों के लिए बैठने का आसन लाया। दिल्ली से आये हुए वे सभी व्यक्ति उस आसन पर बैठ गए। उन्होंने उस बढ़े कलाकार की ओर देखा और फिर वह उसके द्वारा बनाई जा रही मूर्ति की ओर देखने लगे तब बूढ़ा कलाकार बोला "आईए जरा मेरे द्वारा बनाई गई मूर्तियों को भी देखिये" यह बात कहकर घन्हैया वहां से उठा और झौंपड़े के अन्दर की ओर बढ़ा। झौंपड़े के अन्दर पत्थर पर कुरेदी हुई बीसों मूर्तियां पंक्ति में रखी थीं उन मूर्तियों पर विचित्र प्रकार के रंग किये गये थे। उन्हीं मूर्तियों में बहुत सी मूर्तियां हिमाचल प्रदेश के राजाओं, रानियों तथा राज-

दरबार से सम्बन्धित लोगों की थी । एक मूर्ति कपड़े से ढकी हुई रखी थी । दिल्ली से आये हुए एक व्यक्ति ने उस मूर्ति का आवरण हटाने को कहा । तब मूर्तिकार बोला "देखना ऐसा न करना नहीं तो कहर हो जावेगा । इस मूर्ति के दर्शन करने से शेष सभी मूर्तियां क्रोधित हो उठेंगी ।"

तब औरंगजेब के भेजे हुए एक व्यक्ति ने कहा "आखिर यह तो बताओ कि यह मूर्ति है किसकी ?" "क्या बताऊँ यह मूर्ति हमारे दिल्ली के सम्राट औरंगजेब की है इसलिए मैंने इसे ढांप कर रखा है कि यह मेरी कला को न देख ले । मुझे भय है कि यदि यह मूर्ति मेरी कला को देख लेगी तो मुझे इनाम की बजाए प्राण दण्ड ही न भुगतना पड़े क्योंकि बादशाह को कला से घृणा हो गई है ।" अब कुछ देर रुक कर दिल्ली से आये हुए व्यक्ति ने कहा "तो फिर यह मूर्ति बनाने का आपका क्या तात्पर्य है" अब एक लम्बी आह भरकर कलाकार ने एक बार उस व्यक्ति की ओर देखा और बोला "मूर्ति बनाने का मेरा तात्पर्य ? तात्पर्य बड़ा सीधा है । बादशाह को चाहे कला से और कलाकारों से घृणा ही क्यों न हो कलाकार और कला ने बादशाहों को, बड़े-बड़े लोगों को, अमीरों वजीरों को जो युगों से मर चुके हैं उन्हें पुनः जीवन दान देने का सदा सदा से प्रयत्न किया है । मैंने भी अपने इस कर्त्तव्य को निभाने के लिए अपने बादशाह की मूर्ति बनाकर रखी है । मैंने यह मूर्ति इसलिए बनाई है कि मेरे मरने के बाद, बादशाह के मरने के बाद यह मूर्ति लोगों को बादशाह की और मेरी याद दिलाती रहेगी । यह बात कहकर बूढ़े कलाकार ने एक बार अपनी चमचमाती आंखों से उन अपरिचित व्यक्तियों की ओर देखा और पुनः बोला "यदि आप चाहते ही हैं तो मैं अपने बादशाह की मूर्ति आपको अवश्य दिखाऊँगा यह मेरी कला है । यह सच्चाई है, इसे छुपाकर नहीं

रखूंगा।" यह बात कहकर वूढ़े कलाकार ने औरंगजेब की मूर्ति के ऊपर से कपड़े का आवरण हटा दिया। मूर्ति संगमरमर की थी पर हाथ बांधे ईश्वर से क्षमा मांग रही थी अपने गुनाहों की। दिल्ली से आये सभी व्यक्ति औरंगजेब की उस मूर्ति को देख कर बड़े विस्मित हुए। ऐसा लग रहा था मानों स्वयं बादशाह औरंगजेब उस झौंपड़े में आ गया हो। अब कुछ क्षण वाद उसे बूढ़े कलाकार ने पुनः कपड़े से ढांप दिया। दिल्ली से आये हुए लोग सभी एक दूसरे की ओर देखने लगे। उन्होंने उसकी बड़ी प्रशंसा की। अपनी कला की प्रशंसा सुनकर उस बढ़े कलाकार का बूढ़ा झुरियों वाला चेहरा खिल उठा आंखों में एक अदभुत चमक आ गई।

अब सभी झौंपड़े के बाहर आकर अपने अपने आसन पर बैठ गए। दिल्ली से आये उन औरंगजेब के आदमियों ने बूढ़े घन्हैया से अपने आने का प्रयोजन बताया। औरंगजेब के बुलाने की बात सुन कर बूढ़ा कलाकार क्षण भर के लिए ठिठक गया चेहरे की रंगत उड़ गई, गिड़गिड़ाई आवाज में बोला, "औरंगजेब! सम्राट औरंगजेब ने पुनः बुलाया है मुझे, मूर्ति बनाने के लिए। नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता। कला का विरोधी बादशाह एक कलाकार के हृदय को नहीं समझ सकता। आज से तीन वर्ष पूर्व अपनी कला को जीवित रखने के लिए ही मैं दिल्ली महानगर को छोड़कर हिमाचल प्रदेश के शान्त वातावरण में चला आया था कि बादशाह मुझे यहां नहीं ढूंड सकेगा और मेरी कला जीवित रह सकेगी। पर..........."

अपना अधूरा वाक्य छोड़कर वह बूढ़ा कलाकार उन औरंगजेब के भेजे व्यक्तियों की ओर देखने लगा। "नहीं ऐसा नहीं होगा। हम आपको आश्वासन देते हैं कि बादशाह आपसे ऐसा अन्याय कभी नहीं करगे।" अब कुछ क्षण चुप रहकर घन्हैया पुनः बोला "राजा,

राज्य और राजनीति इन सबकी टेढ़ी चाल हुआ करती है। कला योग है, साधना है, आराधना है, भक्ति है। यह जब तक स्वच्छन्द रहे तभी तक ही फूलती फलती है। बन्धनों में बंधी हुई कला घुट कर रह जाती। मैं कलाकार हूं अपनी कला का गला नहीं घोंटना चाहता मुझे क्षमा कीजिए। हां एक बात है यदि बादशाह को अपनी मूर्ति की आवश्यकता है तो उपहार के रूप में मैं उन्हें यह मूर्ति भेंट करता हूं। उनकी मूर्ति को उनके पास ले जाईए।" यह बात कहकर वह बूढ़ा कलाकार आसमान की ओर देखने लगा। आसमान पर काले बादल घिर आये थे। उसे ऐसा लगा कि उसकी कला पर कोई भीषण आपत्ति आ गई है। अब बूढ़ा कलाकार ज्यों २ दिल्ली जाने से इन्कार करता गया त्यों २ वह अपरिचित व्यक्ति उसे दिल्ली ले जाने पर जोर डालते गये आखिर हारकर घन्हैया पुनः बोला, "दिल्ली जाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं, मेरी वहां जन्म भूमि है, पर मुझे सन्देह है कि जब भी बादशाह औरंगजेब को मेरे धर्म के प्रति पता लगेगा तब ही वह मेरी कला का उपकार चुकाने की बजाए मुझ धर्म विरोधी समझकर अवश्य दण्ड देगा क्योंकि मैं हिन्दू हूं। जिस व्यक्ति ने सारी आयु धर्मांधता के काम किये हों वह मृत्यु की अन्तिम घड़ियों में भी धर्म निर्पेक्ष नहीं हो सकता। धर्मों के प्रति उसे सद्भावना नहीं हो सकती।" बूढ़े कलाकार की यह बात सुनकर उन दिल्ली से आये लोगों ने बादशाह औरंगजेब की मनोदशा का सारा हाल उससे कह सुनाया बनारस के मन्दिर में बादशाह द्वारा बनाई गई मस्जिद की कहानी भी कह सुनाई अब बूढ़ा कलाकार फिर बोला "यदि बादशाह की मनोदशा बदल गई है और उसके मन हिन्दू धर्म के प्रति भी मोह जागृत हो गया है तो उसने विश्वनाथ मन्दिर के खण्हरों पर पुनः मन्दिर का निर्माण क्यों नहीं करवाया? इन सब बातों के होते हुए

भी यदि आप मुझे विवश करते हैं तो आपके साथ दिल्ली चलने और बादशाह की मूर्ति बनाने के लिए मैं इन्कार नहीं करता।" अब बूढ़े कलाकार के अन्तिम वाक्य को सुनकर दिल्ली से आये सभी व्यक्ति प्रसन्न हो उठे।

घन्हैया अब दिल्ली जाने की तैयारी करने लगा। उसने औरंगजेब बादशाह की मूर्ति के सिवाए शेष अपनी सभी मूर्तियां कांगड़ा के राजा के पास धरोहर के रूप में रख दीं। अब दूसरे ही दिन घन्हैया उन दिल्ली से आये व्यक्तियों के साथ राजधानी की ओर बढ़ने लगा। आज से तीस वर्ष पूर्व जब से वह दिल्ली से आया था रास्ते में कई बार उसका मन बिलख उठा था। उसे जितना कष्ट अपनी जन्म भूमि को छोड़ते समय नहीं हुआ था आज उसे उतना ही आनन्द मिल रहा था। यह सब इसलिए था कि अब वह दोबारा अपनी जन्म भूमि की ओर बढ़ रहा था।

कुछ दिन उपरान्त घन्हैया दिल्ली पहुंचा। उसे दरबार में उपस्थित किया गया। अब बूढ़े कलाकार ने वह औरंगजेब की मूर्ति जो वह साथ लाया था बादशाह को उपहार के रूप में भेंट कर दी। घन्हैया द्वारा बनी बादशाह की मूर्ति को जब दिल्ली के दरबारियों ने देखा तो वह दंग रह गये और घन्हैया लाल की कला की प्रशंसा करने लगे। बादशाह औरंगजेब उस अपनी मूर्ति को देख मन ही मन बड़ा प्रसन्न था। अब घन्हैया को बादशाह की एक बड़ी संगमरमर की मूर्ति बनाने के और उसे बनारस की मस्जिद के प्रांगण में खड़ा करने के आदेश मिल गये। साथ ही साथ बादशाह ने मूर्ति बनाने के उपरान्त कलाकार को 2000 मुहरें देने की भी घोषणा कर दी। अब क्या था घन्हैया को बनारस में ठहरने के लिए शाही प्रबन्ध भी किये गये।

संगमरमर का एक बड़ा पत्थर जिस पर बादशाह औरंगजेब

की मूर्ति कुरेदी जानी थी घन्हैया को दे दिया गया। घन्हैया मूर्ति कुरेदने के औजार अपने साथ लाया था। अब क्या था घन्हैया दिन को पत्थर पर काम करता और रात को आराम करता, दिन बीतने लगे। तीन वर्ष उपरान्त बादशाह औरंगजेब की मूर्ति बनकर तैयार हो गई। घन्हैया बड़ा प्रसन्न था कि अब उसे इनाम मिलेगा और वह खुशी २ अपना शेष जीवन हिमाचल प्रदेश के शांत वातावरण में आराम से बिताएगा।

बादशाह की मूर्ति तैयार हो गई। उसके तैयार होने की खबर बादशाह को भिजवा दी गई। बादशाह अपने दरबारियों के साथ मूर्ति को देखने और उसकी स्थापना करवाने हेतु बनारस की ओर चल पड़ा। बादशाह ने जब अपनी मूर्ति को देखा तो वह मन ही मन बड़ा प्रसन्न हुआ। अब उसने मूर्ति को प्रांगण में एक ऊँचे चबूतरे पर स्थापित करने का आदेश दे दिया। चबूतरा पहले ही बनाया जा चुका था। दूसरे दिन मूर्ति को चबूतरे पर स्थापित कर दिया गया जब मूर्ति स्थापित हो गई तो घन्हैया पास हो खड़ा था। बादशाह औरंगजेब ने अब एक बार अपनी मूर्ति और एक बार घन्हैया की ओर देखा। बादशाह औरंगजेब की आंखें जब घन्हैया की आंखों से मिलीं तब घन्हैया को ऐसा लगा मानों एक तेज छुरी उसके कलेजे को बींधती निगल गई हो। उन आंखों में कुछ अजीब घृणा थी। घन्हैया बादशाह की इस नजर का अर्थ नहीं समझ सका था। अब बादशाह बिना कुछ बोले वहां से चला आया। घन्हैया भी अब उस स्थान की ओर बढ़ा जिस स्थान पर उसने रहकर अपने तीन वर्ष काटे थे। संगेमरमर के कुरेदे हुए टुकड़ों का एक ढेर वहां पड़ा था। उसने एक बार उस ढेर की ओर देखा उसे ऐसा लगा मानों वह संगेमरमर के टुकड़े उससे कह रहे हों "अरे कलाकार! तूने यह क्या किया? जिसकी यादगार को हम पत्थर

भी मिटाना चाहते थे तूने उसे पुनः जीवित कर दिया। अब तू उससे इनाम की आशा रखता है ?" संगेमरमर के टुकड़ों से आई आवाज ने घन्हैया को सजग कर दिया। उसने बादशाह औरंगजेब की मूर्ति तैयार करने के लिए अनथक परिश्रम किया था। पूरे तीन वर्ष रात को वह नींद भर न सोया था और न उसने दिन को आराम ही किया था। मूर्ति की स्थापना के समय औरंगजेब की तीखी दृष्टि से वह अब भी परेशान था। बादशाह ने और तो और पर उसकी कला की सराहना तक न की थी। उसे रुपये की तथा इनाम पाने की इतनी भूख नहीं थी वह बादशाह के मुख से अपनी कला की सराहना ही सुनना चाहता था। उधर औरंगजेब के मन में अब पुनः धर्मांधता जाग पड़ी थी। वह उस मूर्ति के कलाकार को इनाम के बजाए सजा देना चाहता। उसे मूर्तियों से पुनः घृणा जागृत हो गई थी। वह तो सब कुछ उसने अल्ला के डर के मारे ही किया था। औरंगजेब के मन में एक बार यह विचार आता कि इस मूर्तिकार को दण्ड दे दिया जावे ताकि यह भी तथा दूसरे मूर्तिकार भी उसके राज्य में मूर्ति बनाना छोड़ दें। क्योंकि मूर्तियां अधिकतर हिन्दुओं के मन्दिरों में ही रखी जाती थीं। मूर्तिकार को सजा न देना औरंगजेब अपने विरोधी धर्म को बढ़ावा देना समझ रहा था। पर दूसरी ओर वह यह सोच रहा था कि लोग उसे क्या कहेंगे उसने स्वयं ही तो उस मूर्तिकार को मूर्ति बनाने के आदेश दिये थे। अब कुछ सोच विचार कर औरंगजेब बादशाह इस निर्णय पर पहुंचा कि मूर्तिकार को उसकी उजरत न दी जावे। यदि उसे पूरी उजरत दी जावेगी तो उसे प्रोत्साहन मिलेगा और वह और मूर्तियाँ बनाने का प्रयत्न करेगा तथा यदि उसे उजरत न मिलेगी तो वह हतोत्साहित हो जावेगा और मूर्ति बनाना छोड़ देवेगा।

उधर घन्हैया बादशाह की मूर्ति बनाकर पछता रहा था।

उसके मन में ख्याल आता कि वह वहां आया ही क्यों था? उसने बेकार के अपने तीन वर्ष समाप्त कर दिये थे। औरंगजेब के व्यवहार से वह बड़ा दुःखी हो चुका था। उसने दो दिन वहीं उधेड़-बुन में काटे और तीसरे दिन अपने घर हिमाचल प्रदेश जाने की तैयारी करने लगा। आती बार तो उसे शाही सम्मान से लाया गया था। लगातार काम और बेआरामी के कारण उसका स्वास्थ्य भी ढीला पड़ गया था और सबसे बड़ी चोट उसके मन पर उस दिन लगी थी जब औरंगजेब ने उसकी कला की प्रशंसा में एक शब्द भी अपने मुंह से न निकाला था। ज्योंहि घन्हैया ने घर जाने की तैयारी की त्योंहि दिल्ली से शाही परवाना लेकर एक व्यक्ति उसके पास आया और दिल्ली के बादशाह औरंगजेब के दरबार में उपस्थित होकर इनाम पाने के लिए उसे कहा। शाही अहलकार से इनाम पाने की बात सुनकर घन्हैया का मुरझाया हुआ चेहरा खिल उठा। उसकी आंखों में आज अद्भुत चमक थी। वह इनाम पाने के लिए उस अहलकार के साथ ही दिल्ली की ओर बढ़ा। दिल्ली पहुंचने पर उसे औरंगजेब के दरबार में हाजिर किया गया। दरबार में सन्नाटा छाया था। औरंगजेब एक ऊंचे सिंहासन पर बैठा था। कलाकार को देखते ही एकदम बोल उठा, "आप की उजरत का कुछ भाग मेरी घोषणा के अनुसार आपको अभी दिया जा रहा है। शेष इनाम मेरी दूसरी घोषणा के अनुसार आपका इसलिए ज़बत कर लिया है ताकि आप और कोई मूर्ति न बना सकें दूसरे आपको यह शाही निर्देश भी दिया जाता है कि यदि ऐसा करने की खबर हमें मिल गई तो आपको दण्ड भुगतना पड़ेगा।" औरंगजेब की यह बात सुनकर घन्हैया काँपने लगा। उसकी सारी बातें मिट्टी में मिल गई काम की सराहना और इनाम के बजाए दण्ड का शब्द सुनकर उसका हृदय कांप उठा। अब एक कर्मचारी

एक थाल में केवल बीस मोहरें डाल कर एक पत्र के साथ उसे ंट कर दीं। पत्र पर केवल आगे मूर्ति न बनाने की औरंगजेब की ाज्ञा भी लिखी थी। अब कांपते हाथों से घन्हैया ने थाल पकड़ लया। एक बार उसने औरंगजेब की ओर देखा और लड़खड़ाते ांवों से दरबार से बाहर निकल गया।

आज घन्हैया का मन बड़ा उदास था। वह अब दिल्ली से पुनः नारस की ओर बढ़ता चला जा रहा था। उसे अब न भूख थी और न प्यास वह रात को भी सफर करता। पैदल सफर से उसके पांव छलनी हो चुके थे। वह शीघ्रता से बनारस से उस मस्जिद की ओर बढ़ रहा था जहां उसने औरंगजेब बादशाह की मूर्ति बना कर स्थापित की थी। कुछ दिन उपरान्त संध्या के समय वह बनारस पहुंच गया। अब वह सीधा उस मन्दिर की ओर बढ़ा जहां बादशाह की मूर्ति स्थापित की गई थी कुछ लोगों ने उसे पहचाना बात करने की कोशिश की पर वह किसी से नहीं बोला।

वह सीधा उस चबूतरे की ओर बढ़ा जहां मूर्ति स्थापित की गई थी उसने अब वह थाल निकाला जो बादशाह ने उसे दिया था। उसमें उसने वह बीस मोहरें रख दी थीं डाल दीं। बादशाह के द्वारा दिये पत्र के साथ मोहरें भी मूर्ति के आगे रख दी। उसने एक बार उस मूर्ति की ओर नजर भरकर देखा और चल दिया। न जाने वह कहां गया उस दिन के बाद उस बूढ़े को किसी ने नहीं देखा।

उसी रात बनारस में भूकम्प आया। जन और धन की बड़ी हानि हुई। सुबह लोगों ने देखा कि वह औरंगजेब की संगेमरमर की मूर्ति टुकड़े-टुकड़े होकर मस्जिद के प्रांगण में पड़ी थी। मोहरें बिखरी पड़ी थीं और साथ ही खाली थाल में औरंगजेब का वह पत्र उलटा पड़ा था।

□ □ □

"मतवन्ना"

गांव का धन्नू कुम्हार दिन रात अब अपने काम में व्यस्त रहता वैसाखी के मेले को अब कुछ ही दिन शेष थे। जब भी वैसाखी का मेला आता तो धन्नू कुम्हार खिलौनों से भरी हुई टोकरी को उठाकर मेले में ले जाता। शाम तक उसके सारे खिलौने बिक जाते और वह अपने घर को चला आता। घर में सारा वक्त वह अपने आंगन में उगे प्योन्दी बेरी के वृक्ष के नीचे मिट्टी के बर्तन बनाता। उसके बने हुए मिट्टी के बर्तन दूर दूर के गांवों के लोग खरीदकर ले जाते। बर्तनों और खिलौनों को बेच कर जो आय होती उसी से वह अपना निर्वाह करता था। उसका एक ही लड़का भीखू था। भीखू की मां के मरने के बाद धन्नू ने भीखू का पालन-पोषण बड़े प्यार से किया था। जब भीखू की मां मरी तो भीखू दो वर्ष का था और जब भीखू बड़ा हुआ तो धन्नू ने उसे गांव की पाठशाला में पढ़ने भेजा पर भीखू ने पन्द्रह वर्ष की आयु तक चौथी पास न की थी। धन्नू के लाड प्यार मे पला भीखू अब बाप की भी परवाह न करता था। उसे बचपन से ही सिगरेट बीड़ी पीने की आदत पड़ गई थी। गांव के हलवाई की दुकान पर उसे एक दो रुपये खर्च करना मामूली बात थी। ज्यों-ज्यों भीखू जवान होने लगा त्यों-त्यों धन्नू को भीखू की शादी की भी चिन्ता होने लगी। जब कहीं भीखू के रिश्ते की बात चलती और लड़की वाले उसे देखने आते तो भीखू कभी भांग के नशे में और कभी शराब के नशे में चूर होता। भीखू की आयु जब बढ़ने लगी तो धन्नू ने कहीं ले-दे कर रिश्ता करना चाहा। अन्त में गांव के पास के एक कुम्हार की लड़की से भीखू का रिश्ता पक्का हो गया। विवाह हो जाने के

उपरांत धन्नू पर अब भीखू की पत्नी का खर्चा भी पड़ने लगा। धन्नू की संचित राशी तो भीखू के पालन-पोषण में खर्च हुई थी और कुछ उसके विवाह पर खर्च हो चुकी थी। भीखू कोई काम न करता सारा दिन या तो बेकार लेटा रहता था, या उठकर गांव में घूम लेता था। जब कोई मेला या त्योहार आता तो भीखू को अपने तन की भी सुधि न होती वह भांग के या शराब के नशे में धुत्त होता। धन्नू उसे कहता "बेटा! अब मैं बूढ़ा हो गया हूं। हम बूढ़ों का क्या आज मरे कल दूसरा दिन पर तू मेरे जीते जी कुछ सीख ले जिससे मेरे मरने के उपरांत रोटी भी कमा सकेगा।" धन्नू की यह बात सुनकर भीखू लाल पीला हो जाता बोलता "बापू यदि आप मेरे से तंग हैं तो कल ही चला जाता हूं। कहीं मेहनत मजदूरी कर लूंगा" धन्नू अपने पुत्र की यह बात सुनकर चुप हो जाता। अब भीखू की पत्नी की गोद हरी होने वाली थी। घर में फूटी कौडी न थी। भीखू को घर में जो धरा धराया मिलता वह उसकी शराब पी लेता। धन्नू बर्तनों की उजरत से जो कुछ अनाज लाता उससे बड़ी मुश्किल से उनकी रोटी का निर्वाह होता। अब धन्नू को चिन्ता लगी कि पुत्र वधू को बच्चा होने के उपरांत वह उसके खाने पीने का सामान कैसे खरीदेगा। किसी से उधार मिलने की भी आशा नहीं थी। क्योंकि धन्नू ने भीखू की शादी पर जो दो चार सौ उधार लिया था वह भी लौटा न सका था। अब एक दिन तंग आकर धन्नू ने भीखू से फिर कहा था, "भीखू! कुछ काम कर तू देखता नहीं कि अब कुछ दिनों के उपरांत तू बच्चे का बाप बन जायेगा। मैं कब तक सब का पालन पोषण करता रहूंगा।" धन्नू की यह बात सुनते ही भीखू ने अकड़कर कहा था "बापू मुझे तो आज पता लगा है कि आप केवल मेरे से ही प्यार करते हैं मेरे बाल-बच्चों से नहीं" भीखू के मुंह से यह शब्द सुनकर धन्नू आवाक

रह गया था। वह अब दादा बनने वाला था। "किस दादा को अपने पोते से प्यार नहीं होता?" धन्नू ने यह शब्द धीरे से कहे थे। "अपने मन से पूछ कर देखो बापू" अब धन्नू कुछ न बोल सका था उस तकरार से घर में उस दिन चूल्हा न जल सका था और दूसरे दिन भीखू अपनी स्त्री से यह कहकर चला गया था कि कुछ कमा-कर आऊंगा तो ही घर आऊंगा।

भीखू घर से सीधा रेल के स्टेशन पर पहुंचा था उसकी जेब में पचास रुपये थे जोकि उसने घर के दो बर्तन बेच कर शराब पीने के लिए रखे हुए थे। उन्हीं रुपयों से वह सीधा लखनऊ पहुँचा वहां जाकर वह रिक्शा चलाने पर सौ रुपये महीना पर नौकर हो गया था। पचास रुपये से वह अपना निर्वाह करता और शेष पचास अपने मालिक को दे देता। अब एक वर्ष के बाद भीखू के पास छः सौ रुपये की राशी इकट्ठी हो गई थी। उधर गांव में भीखू का लड़का भी एक वर्ष का हो गया था। बूढ़ा धन्नू जब गांव से घर आता तो उसे देख भीखू का लड़का शैलु किलकारीयां मारता और धन्नू की गोदी मे सिमट कर बैठ जाता। धन्नू जब भी घर आता तो अपने पोते के लिए पतासे इत्यादि ले आता। वह एक एक करके उसके मुंह में देता। उसके सिर पर हाथ फेरता और प्यार से शैलु पुकारता। शैलु दादा की गोदी में बैठकर महान आनन्द अनुभव करता। कभी अपने दादा की बढ़ी हुई दाढ़ी को पकड़ता कभी कान खेंचता। दोनों ही दादा-पोता आपस में घुल-मिल जाते। अब एक दिन धन्नू जब घर लौटा तो बड़ा प्रसन्न था। आज उसे अपने भीखू का पत्र एक वर्ष उपरान्त आया था। लिखा था, बापू! मैं अब कुछ कमाकर घर आ रहा हूं। आप अब बूढ़े हो चुके हैं अधिक काम न किया करो। मेरी नौकरी यहां लग गई है।" धन्नू उस पत्र को लेकर कभी किसी से पढ़ाता तो कभी किसी से। पत्र आने

के पूरे एक मास बाद भीखू घर आया। वह लखनऊ से एक सौ पान लगवाकर ले आया था। भीखू ने बिल्कुल सफेद कपड़े पहने थे। गांव के लोग उससे मिलने आते। सभी भीखू को इस प्रकार उजला बना देख दंग रह जाते। अब दूसरे ही दिन भीखू ने अपने बापू से कहा था कि शैलु के पैदा होने की खुशी में वह घर में रंग रौनक करेगा। धन्नू इस बात से कब इन्कार करने वाला था। अब धन्नू ने गांव के गवैयों को रात को अपने घर रंग रौनक करने का निमन्त्रण दे दिया।

आंगन में बेरी के वृक्ष के नीचे तीन चार चारपाईयां बिछा दी गई उन पर सफेद चद्दरें डाल दी गई। दस बीस ठर्रे की बोतलें भी बेरी के वृक्ष के नीचे रख दी गई। अब रात को गांव के लोग इकट्ठे होने लगे। भीखू सबको थोड़ा थोड़ा ठर्रा पिलाकर एक २ पान देता गया। मैहफिल जमीं गांव के गवैयों ने गीत गाने आरम्भ किये, भीखू गवैयों को प्रत्येक गाने पर इस प्रकार रुपये बांटता मानों वह लखनऊ का नवाब बना बैठा हो। जब वह अपनी जेब से कोरे कोरे नोट निकालता तो सभी गांव वाले एक दूसरे की तरफ देखकर दंग रह जाते। धन्नू भी आज पीली पगड़ी बांधे शराब के नशे में झूम रहा था। सारी रात महफिल जमीं रही भीखू ने एक ही रात में तीन सौ रुपये उड़ा दिये। अब उसके पास केवल दो सौ रुपया ही शेष था। सौ तो आती बार ही समाप्त हो गया था अब सुबह होते ही धन्नू के पास एक व्यक्ति आया जिससे धन्नू ने भीखू की शादी पर पांच सौ रुपया लिया था। धन्नू ने जब भीखू से रुपये के बारे में पूछा तो उसने कहा कि वह छः सौ रुपये लेकर चला था, तीन सौ रुपया तो जशन पर, सौ रास्ते में खर्च हो गया। अब दो सौ में सौ उस व्यक्ति को दे दिया और वह व्यक्ति कुछ गुनगुनाता हुआ चला गया। दो ही दिन में पांच सौ समाप्त हो

चुका था। घर में पुनः वही हालत थी जो एक वर्ष पहले हुआ करती थी। भीखू आया तो पन्द्रह दिन के लिए था पर उसे आये एक महीने से भी उपर बीत चुका था। उसके सफेद कपड़े अब गदले हो चुके थे। अब जब भीखू शाम को घर आता तो शराब या भांग के नशे में चूर होता। तंग होकर धन्नू ने भीखू से फिर कहा था "भीखू होश कर, तू तो मेरी बनी बनाई इज्जत को बर्बाद कर देगा" इस बात पर भीखू पुनः नाराज हो गया था और दूसरे दिन उसने पुनः लखनऊ जाने की तैयारी कर ली थी इस बार उसकी पत्नी भी उसके साथ जा रही थी। जाती बार छोटे शैलु ने अपनी छोटी छोटी भुजाओं को फैलाकर पास खड़े दादा के पास जाने की कोशिश की थी और ज्योंहि शैलु को दादा ने उठाया था त्योंहि भीखू ने लपककर उसकी गोदी से उसे छीन लिया था और कहा था "बापू यदि तुम्हें मेरे बच्चों से प्यार होता तो आज हम घर से बाहर न निकलते" बूढ़े दादा ने एक बार शैलु की ओर देखा था और अपना मन मारकर झौंपड़े के अन्दर चला गया था। अब भीखू और उसकी पत्नी अपने छोटे बच्चे को लेकर लखनऊ जाने के लिए रेल के स्टेशन की ओर बढ़ते चले जा रहे थे। धन्नू अब घर में अकेला था।

भीखू लखनऊ पहुंचने पर रिक्शा चलाने का काम करने लगा था। सौ रुपया जो उसे एक मास उपरान्त मिलता उससे बड़ी मुश्किल से भीखू के परिवार की गुजर होती। भीखू का छोटा लड़का शैलु सारा दिन "दादा, दादा" की रट लगाए रखता। अब उसके दांत पूरे निकल आए थे। पर शैलु का स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन कमजोर होता चला जा रहा था। भीखू की पत्नी पुनः गर्भवती थी। भीखू को अब चिन्ता होती कि वह बढ़ते हुए परिवार का पोषण थोड़े से धन से कैसे कर सकेगा। भीखू की

पत्नी का स्वास्थ्य भी नगर की घुटन में रहकर गिरता जा रहा था। यदि भीखू डाक्टर से दवाई लाता तो डाक्टर दूध का प्रयोग बतलाता पर वेतन से तो रोटी भी बड़ी मुश्किल से पूरी होती थी। अब भीखू ने एक दिन अपने मालिक से जाकर कहा "महाराज! कुछ पैसा बढ़ा दो नहीं तो हम लोग भूखों मर जावेंगे। पत्नी गर्भवती है और घर में खाने को कुछ नहीं है। लड़के का स्वास्थ्य भी खराब होता जा रहा है।" भीखू की यह बात सुनकर गोपाल ने अपनी तोन्द पर हाथ फेरा और भीखू की ओर देखकर बोला, "कितने लड़के हैं आपके ?" "अभी एक ही है महाराज" भीखू ने गिड़गिड़ा कर अपने मालिक की ओर देखकर कहा था। "तो अब यह दूसरा बच्चा होगा आप के घर ?" भीखू— "हां महाराज" सेठ गोपाल— "तो फिर ऐसे करो बड़े लड़के को हमारे पास छोड़ दो। यदि आपके घर अब दोबारा लड़का होगा तो यह आपका बड़ा लड़का हमारे पास रहेगा। हम इसको मतवन्ना बना लेंगे और साथ में आपको दस हजार रुपया भी देंगे क्यों मन्जूर है?"

दस हजार रुपये की बात सुनकर भीखू की वांछें खिल गई थीं। मुरझाए हुए चेहरे पर रौनक छा गई। एकदम बोल उठा, "महाराज मुझे तो आपकी शर्त मन्जूर है पर घर जाकर पत्नी से मशवरा करलूं।" यह बात कह कर भीखू ज्योंहि मुड़ा त्योंहि सेठ गोपाल ने उसे फिर कहा, "भीखू! औरतों की बुद्धि उल्टी चला करती है तू मर्द है। देखना कहीं अपनी औरत की बात में आकर अपने लड़के का भविष्य न गंवा बैठना हमें आज शाम को ही खबर कर देना।" अब भीखू ने एक बार सेठ गोपाल की ओर एक बार उसकी उस उट्टालिका की ओर देखा जिसके अन्दर वह पहली बार ही गया था। बहुत बड़ा दालान था। फर्श पर संगमरमर लगा था। उसे ऐसा लगा था मानों वह किसी राजा के आंगन में खड़ा हो।

वह आज बड़ा प्रसन्न था कि उसका शैलु इतनी बड़ी सम्पत्ति का मालिक बन जावेगा। सेठ गोपाल निःसन्तान थे। उनकी आयु पचपन वर्ष की हो चुकी थी। वह अब अपनी सम्पत्ति के लिए किसी मतवन्ने की तलाश में थे जोकि उन्हें अनायास ही मिल गया था। कई लोगों से उन्होंने इस बारे में बात भी की थी पर किसी ने भी हाँ नहीं की थी। लखनऊ के नगर में उनकी लाखों की सम्पत्ति थी। रिक्शा वालों, टैम्पों वालों से ही उन्हें प्रतिमास हजारों की आय थी।

अब क्या था भीखू ने घर जाकर अपनी पत्नी से बात की, पहले तो उसकी पत्नी न मानी पर भीखू ने जब दस हजार रुपये देने की सेठ द्वारा कही हुई बात को दोहराया तो वह मान गई मरता क्या न करता। मजबूरी मनुष्य से सब कुछ करवा देती है। अब क्या था भीखू ने शैलु को सेठ गोपाल को दे देने की बात पक्की कर ली। शैलु को सेठ गोपाल को सौंप दिया गया और दस हजार रुपये से सेठ गोपाल ने दो हजार रुपया देकर शेष अगले चार वर्षों में दस हजार पूरा कर देने का वायदा कर दिया था। शैलु अब सेठ गोपाल के घर पलने लगा। सेठ गोपाल के घर में भी कभी कभी वह 'दादा' 'दादा' करता उसे वह आनन्द सेठ के घर में भी न आता जो उसे अपने दादा धन्नू की गोदी में बैठकर आता था। उसका सारा पालन पोषण गोपाल के नौकरों द्वारा होता था। अप्रैल मास के नवरात्रों के दिन थे। सेठ गोपाल की पत्नी ने हिमाचल प्रदेश के ज्वाला जी के मन्दिर में दस वर्ष पूर्व बेनती की थी कि जब भी उनके पुत्र होगा तो वह दोबारा सपरिवार वहां आवेंगे और देवी को सवा तोले का सोने का छत्तर भेंट करेंगे। अब एक दिन उसने अपने पति से ज्वाला जी चलने की बात की। अब क्या था सेठ गोपाल भी वहां चलने को तैयार हो गए। दस अप्रैल

को गोपाल अपनी पत्नी और शैलु को लेकर ज्वाला जी पहुंचे। मन्दिर में उन्होंने भेंट चढ़ाई देवी का प्रशाद और चरणामृत ग्रहण किया। बादशाह अकबर द्वारा चढ़ाए गए उस छत्र को देखा। शैलु मन्दिर की अद्धभुत शोभा को देख कर किलकारियां मारने लगा। एक दिन वहां ठहर कर वे वापस चलने की तैयारी करने लगे। वहां मन्दिर में बैठे कुछ यात्रियों ने जवांवाला शहर (ज्वाली) में लगने वाले मेले के बारे में बातें लगाई हुई थी। कोई कह रहा था कि जब रेल नहीं चलती थी तो लोग उस स्थान को हरिद्वार के नाम से पुकारते थे, तो कोई कह रहा था कि पांचों पांडवों को जब बनवास मिला था तो वह एक दिन वहां ठहरे थे। मन्दिर में यात्रियों की इस प्रकार की बातें सुन कर सेठ गोपाल की पत्नी ने उस स्थान को देखने की इच्छा व्यक्त की। अब दूसरे दिन सेठ गोपाल का परिवार भी उस स्थान की ओर बढ़ा।

पूरे एक घन्टे के उपरांत वे ज्वाली नगर के नीचे उस चशमें पर पहुंचे जो गुलेर के राजा ने बनवाया हुआ था। उसके उपरांत वह मेले में पहुंच गये। मेले का स्थान खचाखच भरा पड़ा था। धन्नू भी मेले के एक कोने में अपने रंग-बिरंगे खिलौनों को लेकर बैठा हुआ था। उसके चारों ओर कुछ लोग जमा थे। कोई किसी खिलौने का मोल पूछ रहा था तो कोई धन्नू को खिलौनों के पैसे दे रहा था "कितना अच्छा कारीगर है, मिट्टी का ?" तो कोई कह रहा था "इसने तो मिट्टी में भी जान डाल दी है" अब सेठ गोपाल तथा उसकी पत्नी भी उसी रास्ते नदी पर स्नान करने के लिए आगे बढ़े जा रहे थे। वे भी कुछ क्षण वहां रुके शैलु ज्योंहि खिलौनों की ओर बढ़ा त्योंहि गोपाल ने उसे गोदी में उठा लिया और वे आगे बढ़ गये। अभी वह कुछ ही कदम आगे बढ़े थे तो लोगों की भीड़ कम हुई और शैलु टप-टप करके नदी की ओर

चलने लगा। उसके पाओं से बंधे घुंघरू छन छन करके बजते जा रहे थे। शैलु बहुत से लोगों को देखकर आज बड़ा प्रसन्न था। अब मेले में एक शोर सा उठा। सभी लोगों ने उस ओर भागना आरम्भ कर दिया जिस ओर गोपाल तथा उसका परिवार बढ़ रहा था। अब कुछ ही क्षण में हजारों की संख्या में लोग उधर बढ़ आये कुछ लाठीयां लिए दौड़ रहे थे। हलवाईयों के थाल ठन-ठन करके गिरते जा रहे। मानों सारा ही मेला उस ओर बढ़ रहा हो जिस ओर गोपाल तथा उसकी पत्नी बढ़ रहे थे। अब इस भाग-दौड़ में शैलु गोपाल की अंगुली से छूट गया था। शैलु भटक गया था। गोपाल तथा उसकी पत्नी उसे खोज रहे थे। शैलु टुप-टुप करता वहीं पहुंच चुका था जहां धन्नू अपने टूटे हुए खिलौनों को देख-देख कर दु:खी हो रहा था। उसके जो खिलौने बचे थे उनको उसने टोकरे में डाला और इधर उधर देखने लगा। लोग अभी इधर उधर दौड़ रहे थे। अब अचानक धन्नू की दृष्टि उस बच्चे पर पड़ी जो बड़ी गौर से उसको देख रहा था। अब धन्नू झट उठा और शैलु को अपनी भुजाओं में लपेट लिया आंखे भर आईं और भर्राई आवाज मे बोला "बेटा ! तू कहां ?" अब शैलु धन्नू के साथ लिपट गया अपनी तुतली जुबान में बोला "दादा आया, दादा आया" अब शैलु धन्नू की गोदी में सिमट गया। कुछ क्षण उपरान्त जोर से आंधी चली धन्नू ने शैलु को कपड़े से ढांप लिया और दोनों ही दादा पोता वहां सिमट कर बैठ गये। गोपाल तथा उसकी पत्नी ने शैलु को शाम तक देखा पर उसका कोई पता न था। वे दो दिन वहाँ रहे पर शैलु का कहीं पता न चला। हार कर वह लखनऊ (उ०प्र०) चले आये।

लखनऊ पहुंचकर गोपाल तथा उसकी पत्नी बड़े उदास थे। उन्होंने समाचार पत्रों में शैलु का फोटो दिया। उसके गुम होने की

कहानी लिखी, पुलिस में रपट दर्ज करवाई। पर एक वर्ष तक उन्हें शैलु का कोई पता न चल सका। उधर शैलु जब धन्नू के आंगन में किलकारियां मारता तो धन्नू का दिल बाग-बाग हो जाता। धन्नू ने शैलु के दूध का प्रबन्ध भी कर रखा था। वह एक गाए खरीद कर ले आया था। गाए का बछड़ा और शैलु आंगन में खेलते रहते। गोपाल ने शैलु के गुम होने की खबर भीखू को न दी थी। उधर धन्नू के गांव के लोग हैरान थे कि बूढ़ा धन्नू अपने पोते को कैसे ले आया। धन्नू ने अपनी बात किसी से न की थी। दिन बीतते गये इसी प्रकार धन्नू और शैलु का एक वर्ष बीत गया। दूसरे वर्ष वैसाखी के मेले को कुछ ही दिन शेष थे। धन्नू पहले की भान्ति खिलौने बनाने में व्यस्त रहता। रात को भी जब शैलु सो जाता तो धन्नू घन्टों काम करता रहता। एक दिन सुबह जब धन्नू खिलौनों पर रंग कर रहा था तो भीखू सेठ गोपाल और पुलिस के चार व्यक्ति धन्नू के आंगन में खड़े हो गए। शैलु आंगन में गाए के बछड़े से खेल रहा था। गोपाल ने आगे बढ़कर शैलु को उठा लिया और धन्नू की ओर इशारा कर के कहा "यह बूढ़ा चोर है, इसको गिरफ्तार कर लो।" अब पुलिस के एक व्यक्ति ने आगे बढ़कर धन्नू को हथकड़ी लगा दी। धन्नू सहमा हुआ कुछ न बोल सका वह डबडबाई आंखों से भीखू को देखता रहा। अब शैलु ने अपने दोनों बाजू फैलाए और बोला "दादा! दादा" शैलु अपने दादा की ओर देखकर चीखने लगा। धन्नू ने एक बार शैलु की ओर देखा और बोला "मैं चोर नहीं हूं, यह बच्चा मेरा पोता है। मेरे बेटे की लापरवाही के कारण ये पिछले वर्ष वैसाखी के मेले में भटक गया था" अब धन्नू की बात काटकर गोपाल बोला "बकवास बन्द कर बढ़े। एक वर्ष से हम परेशान हैं। यह बच्चा मेरा मतवन्ना हैं। मैंने इसे भीखू से दस हजार रुपये देकर खरीदा है" दस हजार

रुपये देकर खरीदने की बात सुन कर धन्नू का मन विलख उठा, बोला"भीखू ! तूने यह क्या किया? भीखू ! सचमुच ही मेरा शैलु बेच डाला है तूने ?" भीखू कुछ न बोल सका। धन्नू ने अब गोपाल की ओर देखा और बोला "धन से मन नहीं खरीदे जाते सेठ साहिब ! बच्चे से पूछो कि वह बिकना चाहता है या नहीं। बाप को बच्चे का सौदा करने का कोई अधिकार नहीं सेठ साहिब।" अब धन्नू के गिरफ्तार होने की खबर सारे गांव में फैल गई थी। गांव के सरपंच ने धन्नू की इमानदारी के बारे में सेठ गोपाल को बताया पर वह एक न माने। अब सरपंच ने धन्नू को थाना में जमानत देकर रिहा करवा लिया था। पर धन्नू बृद्धावस्था में इस झटके को सहन न कर सका। उसे अब प्रतिदिन बुखार हो जाता। अब बैसाखी का मेला आने पर वह खिलौने न बनाता। गांव के लोग फसल निकालने पर कुछ अनाज उसे दे जाते और धन्नू उसी अनाज से अपनी गुजर करता। दिन बीतते गये। दूसरे वर्ष वैसाखी के मेले का दिन आया और बीत गया। रात को धन्नू को अपने पोते की याद आती तो धन्नू अपने पोते के साथ मिलने के लिए लखनऊ जाने की तैयारी करने लगता पर कहां जाता? उसने कोई नगर न देखा था। गाड़ी का लम्बा सफर न किया था। उसने अपनी गाए एक सौ रुपये में बेच डाली और अपने पोते के साथ मिलने के लिए खर्चा लेकर चल ही पड़ा। धन्नू तीन दिन के रेल के सफर के उपरान्त लखनऊ पहुंचा वह सारा दिन लखनऊ के बाजारों में घूमता और रात को आकर लखनऊ के इमाम वाड़े के पास सड़क पर लेटा रहता। उसका ज्वर प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था। एक दिन वह अपने पोते की तलाश में गोमती नदी की ओर चला जा रहा था कि सड़क के किनारे जाते हुए उसके कानों में आवाज पड़ी "दादा ! दादा !" उसने पीछे मुड़कर देखा तो शैलू एक कार में

बैठा उसकी ओर हाथ का संकेत कर रहा था। अब वह कार बढ़ती हुई एक अट्टालिका के दरवाजे के अन्दर चली गई। धन्नू ने अपने पोते को पहचान लिया था। वह उस बड़ी अट्टालिका के बाहर आम के वृक्ष के नीचे बैठ गया था। लोग आए और चले गए पर धन्नू पेड़ के नीचे से नहीं हिला। उसे आज भीषण ज्वर हो गया था। रात को जोर से आंधी चली और वर्षा की बौछाड़ हुई पर धन्नू उसी आम के पेड़ के नीचे बैठा रहा।

पौ फटी सुबह हुई, दिन निकला। अब उस आम के पेड़ के इर्द गिर्द लोग इकट्ठे हो चुके थे। कोई कह रहा था "बेचारा वर्षा की बौछाड़ को सहन न कर सका होगा" कोई कह रहा था "पता नहीं, कितने दिनों से भूखा होगा।" अब एक कार आई लोगों के इकट्ठ को देखकर ड्राईवर ने कार खड़ी कर दी। कार से चार वर्ष का बच्चा उतरा वह भी हजूम की ओर बढ़ा। बच्चा चीखकर उस बूढ़े से लिपट कर बिलख उठा "दादा! मेरा दादा!" ज्योंहि बच्चा धन्नू से लिपटा धन्नू ने एक बार आंखें खोलीं हाथ ऊपर उठे होंठ फूसफुसाए "मेरा पोता शै—लु!"

लोगों ने देखा उस बूढ़े की गोदी में शैलु की मिट्टी की तस्वीर थी।



"प्रार्थना-पत्र"

मार्च मास की 31 तारीख थी। सड़क के निर्माण का कार्य पूरा हो रहा था। धनपत राय ने अब बजरे से भरी हुई टोकरी को सड़क पर उड़ेल कर अपने मस्तक का पसीना पोंछा और उस लम्बी सड़क की ओर देखा जिसके निर्माण में उसने पांच वर्ष बिताये थे। वह अपने गांव से आकर उस सड़क पर पांच वर्ष से मजदूरी का काम कर रहा था। उसने सोच रखा था कि अब वह लोक निर्माण विभाग का पक्का मजदूर बन जावेगा। उसने कई बार प्रार्थनापत्र भी दिये थे पर आज दिन तक उसकी कोई सुनवाई न हो पाई थी। शाम के चार बज रहे थे। अचानक ही उस सड़क पर पैंट कोट पहने हाथ में एक चमड़े का थैला लिए ओवर-सियर साहिब आये। सभी मजदूरों ने उन्हें नमस्कार किया अब ओवर-सियर साहिब धनपत की ओर देखकर बोले, "धनपत ! अब इस सड़क का पूरा काम हो चुका है और सरकार मजदूरों की छंटनी कर रही है क्योंकि बजट की कमी है इसलिए मुझे ऊपर से आदेश मिले हैं कि आपकी गैंग को अगले मास से बन्द कर दिया जावे। जब सरकार को पुन: आवश्यकता होगी तो आप लोगों को बुला लिया जावेगा। आप लोग वेतन लेकर अपने रोजगार का कोई और प्रबन्ध कर लेना।

ओवर-सियर साहिब की इस बात को सुनकर सभी मजदूर सन्न रह गये। वे सभी धनपत राय की ओर देखने लगे। धनपत बहुतेरा गिड़गिड़ाया पर ओवर-सियर साहब ने एक न मानीं वे बोले "भाई ! यह सरकार के काम हैं जब सरकार के पास बजट ही नहीं है तो हम आपको कैसे रख लें ?" अब सभी मजदूर अपने २

गांव की ओर चल दिये थे। सूर्यदेव अब अस्ताचल को ओर प्रस्थान कर रहे थे। धनपतराय ने जेब से बीड़ी निकाली और उसे सुलगाकर धीरे-धीरे वह भी घर की ओर बढ़ने लगा। उसे यह पूर्ण विश्वास था कि जिस व्यक्ति को उसने वोट दिये थे वह उसकी पूरी सहायता करेगा। उसके वोटों से बने एम.एल.ए. अब मन्त्री बन चुके थे। धनपत ने अपने मन में सोचा कि ओवर-सियर से क्या बात करनी है अपने बनाये हुए मन्त्री से बात करेंगे। इन्हीं विचारों में डूबा हुआ धनपत राय घर पहुंच गया। धनपत राय आज बड़ा उदास था। निर्धनता ने धनपत राय के पिता को भी इतना निचोड़ा था कि धनपत के पिता अपने इकलौते पुत्र के लिए अपनी दस कनाल भूमि को नहीं बचा सके थे। धनपत के पिता ने धनपत के विवाह पर सरकारी गांव के बैंक से कुछ धन कर्ज लिया था जिसको वह वापस न दे सका था और उसे अपनी दस कनाल भूमि से पांच कनाल भूमि बैंक की भेंट चढ़ानी पड़ी थी। जिस दिन धनपत के पिता की भूमि की नीलामी हो रही थी उसी दिन धनपत के पिता के प्राण पखेरू उड़े थे। धनपतराय ने एक बार अपने पिता से कहा था कि इतनी बड़ी रकम जिसको हम वापस नहीं कर सकते थे उधार नहीं लेनी चाहिए थी। तब धनपत के पिता ने कहा था, "बेटा एक हजार पर अंगूठा लगाकर मैंने केवल आपके विवाह पर नौ सौ ही तो लिया था। वही बढ़ता २ चार हजार बन चुका है" तब धनपत ने हैरान होकर कहा था "इतना बड़ा व्याज" इस बात पर धनपत के पिता ने एक लम्बी सांस छोड़ी थी और कहा था, "बेटा हमने सुना था कि आजादी के उपरान्त हम खुशहाल हो जावेंगे। गांवों में छोटे २ बैंक बन जावेंगे। उन्हीं बैंकों से जमींदार थोड़े सूद पर कर्ज लेकर अपना काम कर लिया करेंगे पर यह बैंक शाहुकारों से भी बुरे निकले बेटा। हजार लिखवा कर नौ सौ देना

एक सौ हिस्से का रख लेना और सूद एक हजार पर लेना। ब्याज भी बारह-चौदह प्रतिशत उसके उपर भी कुछ खर्चे डालना अर्थात शाहुकारों का हर बात में मुकाबला करना ही बैंकों का काम है। इसी कारण मैं इस छोटी सी राशी को आयु भर पूरा नहीं कर सका।" बाप की इन बातों को सुनकर धनपत का मन तड़प उठा था।

आज धनपत की दशा भी बाप के समान थी। वह भी चन्द बच्चों का बाप था। उसकी बड़ी लड़की की आयु विवाह के योग्य थी। हिन्दू समाज में लड़की का रिश्ता करना और विवाह करना कोई आसान बात नहीं थी। धनपत ने अपनी लड़की के रिश्ते के लिए बात चला रखी थी। वह यह सोचता था कि अब वह सड़क का पक्का मजदूर बन जावेगा तो लड़की का विवाह करना उसके लिए आसान बात हो जावेगी। पर आज ओवर-सियर की बातों से उसके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। उसे ऐसा लगा कि उसके शरीर को बिजली छू गई है। उसकी सभी आशायें पानी में मिल चुकी थीं। यदि वह बैंक से धन कर्ज लेता तो शेष पांच कनाल भूमि से भी हाथ धो बैठने का डर था। इसी उधेड़-बुन में धनपत घर पहुंचा। घर पहुंचने पर उसकी पत्नी ने उसे पूछा "आप आज उदास दीख रहे हो कहीं काम पर दूर तो नहीं जाना पड़ रहा। कई बार कह चुकी हूं कि रोज का पैदल आना जाना ठीक नहीं साईकल तो खरीद लेते। वह हमारे पड़ौस का हरिया जो कल मजदूर बना और आज साईकल खरीद ली है उसने" पत्नी की साईकल खरीदने की बात को सुन कर धनपत का कलेजा धक-धक करने लगा। कुछ न बोला और चारपाई पर बैठ गया अब धनपत की पत्नी गीता फिर धनपत के पास आकर बोली "आप तो चुप होकर बैठ गए और मुझे तो अब और चिन्ता पड़ गई है। वह लड़की के रिश्ते की बात

जो आपने चला रखी है उनका एक सन्देशा आया है कि दहेज में जरसी गाए लेंगे" जरसी गाए का नाम सुन कर धनपत का कलेजा और धड़कने लगा। उसे ऐसा लगा कि उसके कलेजे पर कोई जोर-जोर से प्रहार कर रहा हो कुछ देर चुप रह कर धनपत बोला, "जरसी गाए विवाह के बाद भी दी जा सकती है। लड़कियां मां-बाप से सारी उमर ही लेनदार हुआ करती हैं, गीता" अब गीता कुछ बोलती हुई अन्दर कमरे की ओर चली गई। धनपत के कानों में उसकी यह आवाज पड़ी "कैसी बातें करते हैं? विवाह के बाद जरसी गाए वे क्या करेंगे भला, विवाह में सभी लोग देखेंगे कि हमने दहेज में जरसी गाए दहेज में दी है। विवाह के बाद आप चाहे कुछ भी दे दो कौन देखने आवेगा?" "तो क्या किसी को दिखाकर हमने कोई चीज अपनी लड़की को देनी है।" "हां, हां हमने चोरी का माल तो नहीं देना है। सबके सामने देंगे जिससे लोगों को भी पता लगेगा, समाज में हमारी इज्जत होगी। सभी लोग कहेंगे अच्छा दहेज दिया लड़की को।" अब धनपत ने आज अपने साथ घटी घटना और ओवर सियर की कही बातें तथा सरकार के पास बजट की कमी के बारे गीता को बतलाया। गीता धनपत की बातों को सुनकर सन्न रह गई। मनुष्य सोचता कुछ और, और बनता कुछ है। अब गीता ने कुछ देर सोचकर कहा, "आप जो कहते थे कि रामसिह को वोट देने हैं। वह आपका सहपाठी और बचपन का मित्र है। इलैक्शन के दिनों आप न नींद भर सोए और न पेट भर कर खाना खाया। गांव-गांव में घूम कर राम सिह को कामयाब करवाया। एम. एल. ए. बनवाया अब उन्हीं को जाकर क्यों नहीं कहते? अब तो वह मन्त्री बन गये हैं उनको जाकर क्यों नहीं पूछते कि यह सरकार कैसी है? जिसके पास बजट ही नहीं रहा और दूसरे आप तो पांच वर्ष से सड़क पर काम कर रहे हैं। अब सड़क

पूरी होने को आई तो आपको काम से निकाल देंगे क्या ?" धनपत गीता की बातों को सुनकर बोला "गीता ! राम सिंह मेरे साथ दूसरी श्रेणी में ही तो पढ़ा था वह भी केवल छः मास। उसके पिता वन के अधिकारी थे। छः मास के लिए ही उनका स्थानान्तरण हमारे गांव में हुआ था और फिर पता नहीं वह परिवार कहां चला गया था। उसके उपरान्त पच्चीस साल बाद ही तो इलैक्शन के दिनों राम सिंह हमारे गांव वोट मांगने आये थे एक सहपाठी होने के नाते मैंने सब कुछ किया था। अब वह मन्त्री बन गये हैं पता नहीं उनको वह बातें याद भी हैं या भूल चुकी हैं।" यह बात कह कर धनपत ने एक लम्बी सांस छोड़ी और गीता की ओर देखने लगा। "जैसे द्वापर युग में श्री कृष्ण ने अपने सहपाठी का उद्धार कर दिया था वैसे आपके सहपाठी क्या आपका उद्धार नहीं करेंगे ? दूसरे हमें और तो इच्छा है नहीं। हम तो न्याय चाहते हैं और वह यह है कि पांच वर्ष की हमारी लोक-निर्माण विभाग की सेवाओं को देखते हुए मजदूरी से न हटाया जावे।" "कैसी बातें करती हो तुम ? द्वापर युग की बातों का मेल कलियुग की बातों से कर रही हो। ये कलियुग के कृष्ण हैं गीता। पिछली बार जब वे समीप गांव में दौरे पर आये थे तो मैं उनसे मिलने गया था। पर वहां तो बड़े-बड़े लोगों की बातों को ही वह सुन रहे थे। मैं ज्योंहि उनसे मिलने आगे बढ़ा तो पुलिस वालों ने मुझे पकड़कर पीछे हटा दिया पता नहीं इसलिए कि मेरे कपड़े फटे हुए थे या पाओं में जूता नहीं था सुबह के खड़े-खड़े शाम हो गई। लोगों का जमघट हटा तो जब मैं आगे हुआ तो मन्त्री जी कार में बैठ चुके थे। मैंने हाथ बांधकर नमस्कार किया तब एक बार मन्त्री जी ने मेरी ओर मुड़कर देखा और बोले "क्या हाल है ? भाई आपका" इससे पहले कि मैं कोई बात करता ड्राईवर ने कार चला दी थी। झंडी वाली कार वह उसी सड़क की

ओर तेजी से बढ़ी जा रही थी, जिसको बनाने के लिए मैंने आज पांच वर्ष पूरे किये हैं। मैं कुछ देर वहां खड़ा रहा और घर वापस हो लिया। उस दिन इतनी ठिठुरन में तो घर पहुंचा था।" धनपत ने उदास मन से अपने वाक्यों को पूरा किया।

"तो बात तो कोई न हो सकी थी। इसमें मन्त्री का क्या कसूर था" "मन्त्री का नहीं मेरा ही कसूर था जो दस किलोमीटर पैदल चलकर बिना तनखवाह छुट्टी लिए मैं मिलने चला गया था।" "अच्छा छोड़ो इन बातों को अब तो एक बार उनसे मिलो और अपनी कहानी सुनाओ। मुझे पूरी उम्मीद है कि वह आपकी बातों को नहीं टालेंगे" "उनसे कैसे मिलें गीता? वे लोग तो अब राजधानी शिमला में रहते हैं। कभी कभार ही दौरे पर आते हैं। वह भी नगरों में" धनपत ने बीड़ी सुलगाते हुए कहा। "तो राजधानी कब दूर है। पहले यहां लोक निर्माण अधिकारियों से बात करो और यदि काम न बन सके तो शिमला चले जाना" शिमला जाने की बात सुनकर धनपत ने एक बार गीता की ओर देखा और फिर अपनी झोंपड़ी की ओर। उसके झोंपड़े के कुछ खपरैल भी गिर चुके थे। छत झुक चुकी थी। वर्षा ऋतु का समय समीप था। यदि उसकी मुरम्मत न होती तो गिर जाने का भय था। गीता के कपड़ों पर कई टाकियां थीं। उसके सिर की चद्दर छलनी हो चुकी थी। हर बार वेतन मिलने पर यही सोचता कि अगले मास गीता को कपड़े सिला देगा पर दूसरा मास आता तो कोई न कोई और खर्चा पड़ जाता। मंहगाई इस कदर बढ़ती जा रही थी कि आठ रुपये प्रतिदिन कमाने वाला मजदूर नया मकान तो क्या पर अपने झोंपड़े की मुरम्मत करवा पाने में भी असमर्थ था। धनपत बीड़ी के कश खेंचता और अपने झोंपड़े की ओर देखता। अब उसका छोटा लड़का नत्थू आकर अपनी तोतली जुबान में बोला "पापा! मैं भी

साईकल लूंगा" यह बात कहता कहता नत्थू अपने गदले कपड़ों से ढका हुआ धनपत की गोदी में घुस गया। बालक की बात को सुन कर धनपत ने कोई उत्तर न दिया और उसके घुंगराले बालों पर हाथ फेरने लगा। अब गीता फिर आंगन में आकर बोली "देखो नत्थू आज सुबह से साईकल की रट लगाए है। आज इसने हरिया के लड़के को तीन पहियों वाली साईकल पर घूमते देखा था, बस तभी से यह 'साईकल लूंगा, साईकल लूंगा' बोल रहा है" धनपत के पास गीता की इन बातों का कोई उत्तर न था। उधर तो नौकरी से जबाब इधर बच्चों की फरमाइशें, झौंपड़े की मुरम्मत, लड़की के दहेज में जरसी गाए देने की चिन्ता, शिमला जाने के किराये की फिकर, गीता के कपड़े बनवाने की उलझन अब सभी बातें धनपत के हृदय में विषैले बाणों की भान्ति चुभने लगीं। अब कुछ अन्धेरा हो चुका था। गीता ने भोजन तैयार किया। धनपत भोजन करके अपनी चारपाई पर लेट गया। रात को न जाने वह क्या सोचता रहा। सुबह उठकर उसने आज लोक निर्माण विभाग के कर्मचारी से मिलने की योजना बनाई। अधिशासी अभ्यन्ता का कार्यालय उसके गांव से दस किलोमीटर दूर था। गीता को उसने कुछ रोटियां कपड़े में बांधने को कहा। गीता ने धनपत के कहने के अनुसार कुछ रोटियां और अचार एक पुराने चिथड़े में बांधकर धनपत को थमाते हुए कहा "देखना अब भी कहीं ऐसा न हो कि बिना बात किये ही वापस आ जाना जैसे एक दिन मन्त्री से मिलने गये और बिना बात किये वापस हो आये थे" धनपत गीता की बात का उत्तर दिये बिना रोटियों को अपने थैले में डालकर चल दिया। लगभग ग्यारह बजे वह अधिशासी अभियन्ता महोदय के कार्यालय में पहुंचा। वहां बाहर बैंच पर बैठे चपड़ासी के पास धनपत भी बैठ गया। चपड़ासी बोला "भाई ! साहिब को तो आज फुरसत ही

नहीं है। आज तो एक पुल के ठेके की नीलामी है। ठेकेदार आ जा रहे हैं। आपकी बात कौन सुनेगा?" तब धनपत गिड़गिड़ाया बोला "मैं बड़ी दूर से आया हूं यदि आप मुझे मिला दो तो कुछ चाए पानी कर दूंगा।" धनपत की यह बात सुनकर चपड़ासी ने एकबार धनपत की ओर देखा और बोला "क्या देगा ?" धनपत ने दो रुपये का नोट अपने चमड़े के बटुए से निकालकर चपड़ासी की ओर बढ़ा दिया। चपड़ासी ने झट नोट को अपनी जेब में डाला और बोला, "थोड़ी देर ठहर। जब मैं अन्दर जाऊंगा तो बात करूंगा।" अब अन्दर की घन्टी बजी चपड़ासी अन्दर गया। उसने अन्दर जाकर बाहर आये व्यक्ति के बारे में अधिकारी महोदय को अवगत करवाया। अधिकारी महोदय ने बाहर आये व्यक्ति को अन्दर भेज देने को कहा। अब चपड़ासी ने धनपत को अन्दर जाने दिया। धनपत अन्दर गया अधिकारी महोदय से अपनी सारी कहानी कह सुनाई तो वे बोले "भाई यदि सरकार के पास बजट ही नहीं है तो हम पैसा कहां से खर्च करें। दूसरी रही आप की बात पांच साल सड़क पर काम करने की सो सरकार का कोई ऐसा नियम नहीं कि हम आपको पक्का कर दें। जब इन्टरवियू होगा तो देख लेंगे। इसके लिए भी आपको ऐम्पलाइमैंट में नाम दर्ज करवाना पड़ेगा।"

धनपत बहुतेरा गिड़गिड़ाया पर अधिकारी महोदय ने अपनी विवशता बताकर उसे जाने को कह दिया। अब धनपत अपना सा मुंह लेकर वापस घर चला आया।

दूसरे दिन धनपत ने अपनी मार्च मास की तनख्वाह ली और घर चला आया। धनपत आज बड़ा उदास था। क्या करता ? किसको कहता ? किसके आगे गिड़गिड़ाता ? कोई सुनने वाला नहीं था। अब गीता ने पुनः आकर धनपत को कहा "कल जब आप चले गये थे तो शीला के ससुर ने पुनः कहला भेजा था कि यदि जरसी

गाए का प्रबन्ध हो गया हो तो पता दें। ताकि रिश्ते की बात पक्की हो सके" अब गीता की बात का धनपत के पास कोई उत्तर न था। उसनें अब अपनी जेब से चमड़े का बटुआ निकाला और गीता की ओर बढ़ाता हुआ बोला, "दो सौ दस रुपये हैं, इस माह 240 रुपये मिले थे। तीस उधार दे दिया था।" इस थोड़े से पैसे से क्या बनेगा ? कल जब आप चले गये थे तो मैं समीप के गांव में जरसी गाए देखने गई थी। उन्होंने गाए का दो हजार बताया था" दो हजार का नाम सुनकर धनपत का चेहरा पीला पड़ गया काटो तो लहू नहीं। दो हजार तो उसने सारी आयु में आज तक न देखा था। धनपत कुछ न बोला अब गीता फिर बोली "आप कहें न कहें मैं जरसी गाए खरीद ही लूंगी। ऐसा अच्छा रिश्ता हमें कहीं नहीं मिलेगा। लड़का आठ पढ़ा है और सरकारी नौकरी पर चपड़ सी लगा है। साढ़े चार सौ रुपया तनख्वाह लेता है। हमने तो सारी उमर कुछ नहीं देखा तो क्या अपने बच्चों को भी ऐसा ही रहने दें" गीता की बात सुनकर धनपत ने कहा "इतनी बड़ो रकम कहां से खर्च करेंगे ? मेरे विवाह पर बाप ने एक हजार ही तो लिया था। उसी से पांच कनाल भूमि चली गई थी। यह तो दो हजार है। कहां से कर्ज लेंगे ?" यह बात कह कर धनपत ने गीता की ओर देखा। अब गीता कुछ क्षण सोचकर बोली, "और कुछ नहीं होता तो मेरे पास चांदी के जेवर तो हैं ही उन्हें बेच देंगे।" अपनी पत्नी के चांदी के जेवरों को बेचने की बात धनपत के हृदय को चीरती निकल गई। उसका सिर घूमने लगा कुछ देर उपरान्त सम्भलकर बोला "गीता एक तो नौकरी चली गई। झौंपड़ा इस दशा में है कि कब गिर जाए और आप जेवर बेचने की बात कह रही हैं। शादी पर तो और भी खर्चा होता है" "तो क्या लड़की कंवारी रखोगे?" गीता ने धनपत की ओर देखकर कहा। गीता के इस प्रश्न का उत्तर

अब धनपत के पास न था। उसने अपनी बीड़ी सुलगाई और कश खेंचने लगा। अब गीता फिर बोली "मैंने उनको हां कर दी है कि गाए का प्रबन्ध कर देंगे।" अब धनपत ने एक बार गीता की ओर देखा और बीड़ी के कश खेंचने लगा। "आप चुप क्यों हो गये ? एक दो दिन यहां नौकरी की पैरवी करके देख लो नहीं तो शिमला चले जाओ वहां मन्त्री जी से बात कर लो। मुझे पूर्ण आशा है कि वह हमारा काम कर ही देंगे।" "पर शिमला जाने का खर्चा भी तो लगेगा" धनपत ने गीता की ओर देखकर कहा। "कुछ पैदल चल लेना कुछ गाड़ी पर कुछ बस पर अब काम तो करना ही है। बैठे बैठे तो काम नहीं बनेगा।"

अब दूसरे दिन धनपत ने शिमला जाने की तैयारी कर ली। कुछ रोटियां पकवाकर अपने थैले में डाल लीं और रात को शिमला बस में जाने की तैयारी करने लगा। उसने पैंतीस रुपये का टिकट लिया और बस में बैठ गया सोचा कि शेष रुपये से आती बार कुछ दूर बस पर और कुछ दूर पैदल चल लूंगा, रोज भी तो पैदल चलता हूं। दूसरे दिन बस शिमला जाकर रुकी। शिमला के नगर को देखकर धनपत हैरान हो गया टीले पर बसा शिमला नगर सुबह की धुंध से ढका हुआ ऐसे लग रहा था मानों कोई तपस्वी तप कर रहा हो। चारों तरफ वातावरण शान्त था अब धनपत पूछता पूछता मन्त्री जी की कोठी की ओर बढ़ा। सुबह के नौ बज रहे थे। धनपत अब मन्त्री महोदय की कोठी के बाहर बैंचों पर बैठे लोगों के पास जाकर बैठ गया। बड़ी दूर दूर से लोग मन्त्री जी से मिलने आये थे। कोई हमीरपुर से तो कोई कुल्लु से, किसी का ठेके का काम था तो कोई लाईसैंस की बात कर रहा था। थोड़ी देर में मन्त्री की कोठी का आंगन लोगों से भर गया।

लगभग साढ़े नौ बजे के करीब मन्त्री महोदय कोठी से बाहर

निकले। बाहर रखी कुर्सी पर बैठ गए। अब सभी लोग उठकर उनकी ओर बढ़े। सबने उनका अभिवादन किया। धनपत सबसे पीछे था उसने सोचा कि अकेले में बात करेंगे। अब सभी लोग अपनी अपनी बात करने लगे। लगभग आधा घन्टा मन्त्री जी ने लोगों की बातें सुनी। अब धनपत भी आगे हुआ। ज्योंहि धनपत मन्त्री जी से मिलने आगे हुआ त्योंहि एक कार आंगन में आकर रुकी। मन्त्री महोदय उठ खड़े हुए और कार की ओर चल दिए। धनपत की ओर देखा फिर सबकी ओर देखकर बोले, "जो लोग बात नहीं कर सके वे मेरे दफ्तर में आ जावें यह कहकर मन्त्री जी कार की ओर चल दिए। धनपत भी सैक्ट्रीएट पहुंचा उसने भी मन्त्रियों से मिलने वाले लोगों में अपना नाम दर्ज करवाया। दो घन्टे के बाद अब उसकी बारी भी मिलने की आई। धनपत अन्दर गया उसने अपनी सारी कहानी सुनाई। मन्त्री महोदय ने धनपत को अपनी सारी बात लिख कर प्रार्थना-पत्र देने को कहा। अब धनपत सैक्ट्रीएट से बाहर निकला सैक्ट्रीएट से बाहर निकल कर उसने एक प्रार्थना-पत्र लिखवाया, हस्ताक्षर किये और पुनः सैक्ट्रीएट की ओर बढ़ा।

मन्त्री महोदय के कार्यालय के पास जाकर उसे पता चला कि मन्त्री महोदय अभी अभी दिल्ली चले गये हैं। उसने वह अपना प्रार्थना-पत्र वहां कमरे में कुर्सी पर बैठे एक व्यक्ति के पास दे दिया और बोला "मन्त्री महोदय ने प्रार्थना-पत्र देने को कहा था सो ले आया हूं" उसकी यह बात सुन कर कुर्सी पर बैठा व्यक्ति बोला, "कैसे लोग हैं? सोचते हैं मन्त्री से मिल लिया और काम हो गया" धनपत ने अब उस व्यक्ति की तरफ बड़ी गौर से देखा। अब वह व्यक्ति फिर बोला "भाई! तुम अब जा सकते हो यह सरकारी काम हैं। धीरे-धीरे होते रहेंगे। फजूल में शिमला ठहरकर खर्चा

मत करो। अब उस व्यक्ति की बात सुनकर धनपत गिड़गिड़ाया बोला, "महाराज मैं बड़ी दूर से आया हूं, और मेरा काम शीघ्रता का है। देर हुई तो परिवार भूखा मर जावेगा" अब उसी व्यक्ति ने अपना चशमा उतार कर मेज पर रखा और धनपत की ओर देख कर बोला "भाई यहां दूर और समीप की बात नहीं। भूखों मरने से बचाने का भी कोई इलाज यहां नहीं होता। आपका प्रार्थना-पत्र रख लिया है, मन्त्री जी के आने पर उन्हें बता दिया जावेगा। आप अब जा सकते हो। हमने और भी काम करने हैं।" अब धनपत ने एक बार उस व्यक्ति की ओर देखा और बाहर चला गया। जेब से एक बीड़ी निकाली और कश खेंचता हुआ आगे बढ़ा। अब उसके पास केपल पन्द्रह रुपये बाकी थे उनमें से उसने एक कप चाए पी और दो बंडल बीड़ी खरीद ली और बस स्टैंड की ओर बढ़ा तब उसे ध्यान आया कि बस से जाना ठीक नहीं टिकट आधे रास्ते से भी कम चलेगा। केवल चौदह रुपये से क्या बनेगा। उस रात धनपत शिमला ही ठहरा उसके चार रुपये रात को खर्च हो गये। दूसरे दिन सुबह उसने अपनी स्थिति एक कंडक्टर को बताई। कंडक्टर ने उसे दस रुपये से तय हो पाने तक के सफर का बस का टिकट दे दिया।

अब धनपत कुछ दूर बस के रास्ते चलने के उपरान्त पैदल सफर तय करने लगा। पूरे पांच दिन पैदल चलने के उपरान्त धनपत एक सप्ताह के बाद घर पहुंचा। इस थकान, लम्बे सफर और भविष्य की चिन्ता से धनपत को बुखार हो गया। अब एक महीना बीत चुकने के उपरान्त धनपत का बुखार उतरने का नाम न लेता था। धनपत का शरीर सूख कर कांटा हो गया। गीता अब गांव में मजदूरी करती और परिवार का पेट पालती। धनपत को

लड़की के होने वाले ससुराल से हर चौथे दिन जरसी गाए खरीदने का संदेशा आता। गीता का मन बिलख उठता। अब गीता ने एक दिन अपने चांदी के जेवर जो उसने भूमि में गाड़ रखे थे निकाले। सजल नेत्रों से एक बार उनकी ओर देखा और अपनी पुरानी चद्दर के चिथड़े में बांधकर पुनः वह जेवर एक टीन के ट्रंक में रख दिये।

अब वह अपने देवर किरपू के पास गई। उसने किरपू से उन जेवरों को वेच देने को कहा। गीता ने सोचा कि जेवरों को वेच कर जो पैसा मिलेगा उनमें से कुछ पैसे से जरसी गाए खरीद लेगी और कुछ पैसे से अपने पति का इलाज करवायेगी। जेवरों के वेचने की बात सुनकर किरपू गीता के साथ ही अपने भाई के घर की ओर बढ़ा। धनपत बरामदे में बे-सुध पड़ा था। उसे तीव्र ज्वर था। कभी कभी वोलता "गीता पानी पिला, मेरा वह प्रार्थना-पत्र वापस नहीं आया।" गीता उसे पानी पिलाती और धनपत पुनः आंखें बन्द कर लेता। किरपू गीता के साथ झौंपड़े के अन्दर गया। गीता ने झट अपना ट्रंक खोला और चिथड़े में बंधी जेवरों की गठरी किरपू को थमा दी। किरपू ने जेवरों की गठरी अपनी बगल में दबाई और अपनी खद्दर की चादर से अपने शरीर को ढांप कर झौंपड़े से बाहर चला आया। उसने एक बार अपने भाई धनपत की ओर देखा और आंगन की ओर बढ़ा। गीता किरपू को जाते देखती रही। आज उसकी आंखों में पानी था न जाने क्यों ?

किरपू जेवरों को लेकर दुकान की ओर बढ़ा। जेवर तोले गये। तीन हजार के नोट सुनार नें किरपू की ओर बढ़ा दिये। अब किरपू ने दो हजार रुपया एक कागज में लपेटा और एक हजार जुदा लपेटकर जेब में डाल लिया। किरपू अब गीता के घर की ओर बढ़ा। किरपू भी उसी समाज का अंग था जिसका धनपत की

लड़की का श्वसुर था। अब किरपू ने गीता को दो हजार रुपया गिन कर दे दिया और बोला "भाबी बड़ी मुश्किल से दो हजार रुपया दिया है। सुनार कह रहा था कि इन जेवरों में खोट ज्यादा है।" गीता ने किरपू की बात का कोई उत्तर न दिया। उसने सोचा किरपू ठीक ही कर आया होगा। वह लोक लज्जा के कारण सुनार के पास स्वयं न गई थी। और दूसरे यह सोच कर जेवर किरपू के पास दिये थे कि औरतों की बजाए मनुष्य ठीक ही बात कर सकते हैं पर किरपू के मन का उसे क्या पता था। अब किरपू दो हजार रुपये देकर अपने घर की ओर बढ़ा।

दूसरे दिन गीता समीप के उसी गांव में गई जिसमें उसने दो दिन पूर्व जरसी गाए खरीदने की बात पक्की कर ली थी। उसका बछड़ा हिरण की भान्ति अपने कान खड़े करके गीता की ओर देख रहा था। लगभग दस बजे गीता ने जरसी गाए अपने आंगन में एक खूंटे के साथ बांध दी थी। साथ ही बरामदे में एक खाट पर पड़ा धनपत बेसुध था। उसे अभी तक गाए खरीदने और जेवरों की घटना का कोई पता नहीं था। ज्योंहि गीता ने गाए आंगन में बांधी तो गाए का बछड़ा आंगन में उछलने कूदने लगा। बछड़े को उछलता कूदता देख नत्थू झट आँगन में भागता हुआ आया। वह किलकारिया मारता हुआ बछड़े की ओर बढ़ा। नत्थू को बछड़े की ओर जाता देख गाय ज़ोर से रंभाने लगी। गाए के रंभाने की आवाज सुनकर धनपत की तन्द्रा टूटी। उसने एक बार बरामदे की छत की ओर देखा और गुनगुनाया,

"गीता मेरा प्रार्थना-पत्र, वापस नहीं आया मन्त्री महोदय ने कोई उत्तर नहीं दिया मेरे प्रार्थना-पत्र का" अब दूसरे ही क्षण धनपत ने अपनी करवट बदली और बाहर की ओर देखा आंगन में बंधी

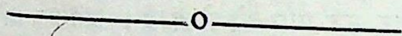
गाए की ओर देखकर धनपत पुनः बोला, "गाए खरीद ली क्या? शीला का रिश्ता पक्का हो गया क्या? पर मेरा प्रार्थना-पत्र गीता।" अब गीता धनपत की ओर बढ़ी, देखा तो धनपत की सूखी गालों पर बड़े-बड़े दो आंसू अटक गये थे और धनपत बेसुध था। "पानी पिला दे गीता! मेरा प्रार्थना-पत्र।" अब गीता ने झट एक गिलास पानी लाकर चारपाई के नीचे रख दिया उसने अपनी चद्दर के पल्ले से धनपत के आंसू पोंछे और उसे अपनी भुजा का सहारा देकर पानी पिलाया। अब धनपत ने एक बार आंखें खोलकर बाहर की ओर देखा "जरसी गाए है गीता?" "हां जरसी गाए है। मैंने सोचा कि जेवरों से प्यार करूंगी तो लड़की कंवारी रह जायेगी इसलिए मैंने अपने जेवर दो हजार रुपये में बेच दिये हैं और अठारह सौ रुपये की गाए और दो सौ आपके लिए रखा है। अब आप शीघ्र ठीक हो जावेंगे।" गीता की यह बात सुनकर धनपत ने अपनी आंखें बन्द करके करवट बदल ली। "आप सो गए क्या?" गीता ने धनपत को हिलाकर पूछा। धनपत बोला "तेरे चांदी के जेवर। तेरे सुहाग के वे चिन्ह समाप्त हो गए गीता, पर मेरा प्रार्थना-पत्र नहीं आया" सुहाग का नाम सुन कर गीता का माथा ठनका। अब धनपत का ज्वर तेज हो रहा था गीता घबराई हुई गांव के डाक्टर के पास गई। अब धनपत का इलाज चला। ज्यों-ज्यों इलाज बढ़ता त्यों-त्यों धनपत की बीमारी बढ़ती जाती दो सौ रुपया एक सप्ताह में खर्च हो गया पर धनपत का बुखार न टूटा।

सुबह के सात बज रहे थे। धनपत बेसुध पड़ा था। गीता ने गाए को आंगन से बरामदे में बांधा। बछड़ा आंगन में उछलने-कूदने लगा। गाए जोर से रंभाने लगी। गाए के रंभाने की आवाज

से धनपत की बेहोशी खुली धीमे से गुनगुनाया "मेरा प्रार्थना-पत्र ! पानी गीता ! गाए ! जरसी गाए दहेज - रिश्ता पक्का हो गया, गीता।" धनपत की अटपटी बातें सुन गीता दौड़ी तो धनपत एक टक छत की ओर देख रहा था। वह झट दौड़ कर किरपू के पास गई, किरपू आया। धनपत को देख कर बोला, "देखती क्या हो भाबी ! गौ दान करवा दो" अब गीता की एक चीख निकल गई। गीता को चीखता सुन कर बच्चे दौड़े, नत्थू दौड़ा, शीला दौड़ी। अब शीला दौड़कर झट गाए को ले आई। धनपत को भूमि पर लिटाया गया। गाए की पूंछ धनपत के हाथ में थमा कर किरपू बोला "भाबी दक्षिणा के लिए कुछ पैसा ला" अब गीता फिर झौंपड़े के अन्दर दौड़ी। उसने उसी प्रार्थना-पत्र के नकल के कागज की पुड़िया में चार आने पैसे लपेट कर रखे थे। प्रार्थना-पत्र समेत उठा लाई। प्रार्थना-पत्र के नकल का कागज चार आने सहित धनपत की मुट्ठी में रख दिया। धनपत ने एक बार गाए की ओर देखा और होंठ हिले "मेरा प्रार्थना-पत्र !" सभी चीख उठे।

धनपत की अर्थी उठी। आज उसी सड़क का उद्घाटन था जिस पर धनपत ने पांच वर्ष काम किया था। मन्त्री महोदय राम सिंह सड़क का उद्घाटन करने आ रहे थे। सड़क के किनारे बड़ी रौनक थी। स्टेज थी, फूलों से भरे गुलदस्ते स्टेज पर सजाए गये थे लोग मन्त्री महोदय का स्वागत करने हेतु फूल मालाएं लिए खड़े थे। ज्योंहि धनपत की अर्थी को शमशान घाट की ओर लेकर लोग उसी सड़क पर आए जहां मन्त्री महोदय की स्टेज सजी हुई थी। त्योंहि मन्त्री महोदय की कार भी पहुंच गई, अभी मन्त्री महोदय स्टेज पर चढ़े ही थे कि जयकारों के साथ जोर की आंधी चली

आंधी के साथ अर्थी से कागज का एक पुर्जा उड़ कर मन्त्री महोदय की गोदी में जा पड़ा। आंधी के थमने के बाद मन्त्री महोदय ने वह कागज का पुर्जा खोला, पढ़ा तो वह धनपत राय का 'प्रार्थना-पत्र' था।



"वारिस"

लल्लू ने सेव का अन्तिम पौधा लगाया और एक बार नज़र भरकर सेबों के उस बगीचे की ओर देखा जिसमें काम करते उसने तीस वर्ष बिताये थे। मस्तक का पसीना पोंछा और अपने कुदाल को वहीं एक सेब के वृक्ष के नीचे रखकर वह अपने झोंपड़े की ओर बढ़ा। लल्लू को ठाकुर सूर्यदेव के उस सेबों के बागीचे में काम करते तीस वर्ष बीत चुके थे। पच्चीस वर्ष की आयु में ही वह सूर्यदेव के पास नौकर हो गया था। ठाकुर सूर्यदेव उस गांव के राजा के समान थे। ठाकुर सूर्यदेव की वह पच्चीस एकड़ भूमि जो आज सेवों के बाग से लहरा रही थी, लल्लू के यहां आने से पहले उजाड़ पड़ी थी। वह सारे का सारा बागीचा लल्लू की भुजाओं का पौरुष ही तो था। लल्लू जब सूर्यदेव के पास काम करने लगा था तब उसका वेतन 20 रुपये था जोकि अब बढ़ा कर 60 रुपये कर दिया था। लल्लू उन्हीं साठ रुपयों में अपनी गृहस्थी का निर्वाह कर रहा था। लल्लू की केवल एक ही लड़की चमेली थी। चमेली वास्तव में चमेली के फूल की भान्ति सुन्दर थी। चमेली की मां उसे जन्म देने के दो वर्ष उपरान्त चमेली के पालन पोषण का दायित्व लल्लू पर डालकर स्वर्ग सिधार गई थी। लल्लू ने अपनी पत्नी के स्वर्गवास हो जाने के बाद चमेली का पालन पोषण बड़े प्यार से किया था। ठाकुर सूर्यदेव के इकलौते बेटे भानुदेव जिसकी आयु चमेली के बराबर थी के पुराने कपड़ों को पहनकर और भानु देव के टूटे हुए खिलौनों से खेल कर चमेली का बचपन बीता था। चमेली भानुदेव के कपड़े पहनकर ठाकुरों की लड़की ही लगती थी। अब चमेली की आयु अठारह वर्ष की हो चुकी थी। जब वह नई

पोशाक पहनकर बागीचे में जाती तो बागीचे का हर पौधा झूम उठता। बागीचे में बहार आ जाती। मानों वह उस बागीचे की वास्तविक मालकिन हो। वह प्रतिदिन स्नान करके बागीचे के मध्य बने भगवान कृष्ण की मूर्ति के लिए प्रतिदिन फूलों का हार पिरोती और प्रतिभा के गले में डाल कर कुछ देर आंखें बन्द करके वहां खड़ी रहती।

आज सुबह ज्योंहि उसने कृष्ण की मूर्ति के गले में हार पहनाकर आंखें बन्द कीं त्योंहि उसे किसी के आने की पदचाप सुनाई दी। पहले की भान्ति कुछ देर मूर्ति के आगे हाथ बांधे खड़े रहने के उपरान्त उसने पीछे हटकर देखा तो उसके पीछे भानुदेव खड़ा था। चमेली सहम कर सिमट गई। उसका चेहरा एकदम फीका पड़ गया। वह एक माली की लड़की थी और भानुदेव उस बागीचे के मालिक का लड़का। चमेली ने अब धीरे धीरे चलना आरम्भ किया तब भानुदेव बोला, "चमेली वास्तव में तू इस बागीचे की कोयल है। जब तू बागीचे में आती है तो बागीचा भर जाता है। डाली डाली झूम उठती है और साथ ही मेरा मन भी। मैंने कई बार सोचा कि आपसे मिलूं पर ... ..." भानुदेव की यह बात सुनकर चमेली रुकी और उसने भानुदेव पर एक कातर दृष्टि डाली मानों वह उससे क्षमा मांग रही हो। अब भानुदेव फिर बोला "चमेली यदि मेरे वस की बात हो तो यह सारा बागीचा तेरे नाम कर दूं। वास्तव में तू इस बागीचे की रौनक है।" अब चमेली बोली, "कैसी बातें करते हो मालिक! हम निर्धन व्यक्ति इतने बड़े बागीचे के मालिक! यदि ठाकुर इस बात को सुन लेंगे तो......" "तो क्या? इस बागीचे का वारिस तो मैं ही हूं" भानुदेवने मुस्करा कर चमेली की ओर देखकर कहा। अब चमेली ने एकबार मुस्करा कर भानुदेव की ओर देखा और चल दी। अब भानुदेव ने थोड़ा आगे

ढ़कर कहा, "चमेली मैं तेरे लिए एक उपहार लाया हूं, तू प्रतिदिन भगवान कृष्ण के गले में माला डालती है। ले पहले इस हार को गले में डालकर देख" अब भानुदेव ने सोने का हार डिबिया से निकाला और चमेली के गले में डाल दिया। चमेली ने एक बार भानुदेव की ओर देखा और चल दी। अब भानुदेव भी अपनी हवेली की ओर मुड़ा।

चमेली कुछ सोचती ठोकरें खाती अपने झौंपड़े की ओर बढ़ रही थी। उसे आज मन्दिर से वापस आने में काफी समय लग गया था। उसका पिता लल्लू कब का झौंपड़े में आकर चमेली का इन्तजार कर रहा था। चमेली का पिता झौंपड़े के बाहर चारपाई पर बैठा अपने मिट्टी के हुक्के को गुड़गुड़ा रहा था। चमेली आज अपने पिता से बिना बात किये ही झौंपड़े के अन्दर चली गई। उसने झट झौंपड़े के अन्दर जाकर अपना आयना देखा और हार को कमीज के अन्दर छुपा लिया। "बहुत देर कर दी बिटिया, कहां रुक गई थी आज ?" लल्लू ने हुक्के को गुड़गुड़ाकर कहा ? "कहीं नहीं बापू कांटा लग गया था बापू, उसे निकालने बैठ गई थी।" चमेली ने अन्दर से कहा "तो जूता पहन कर जाया कर बेटा और कांटें वाले फूलों के पौधों के पास देखकर जाया कर" "पुराना जूता अब टूटने ही वाला है, बापू इसलिए आज मैं नंगे पांवों ही चली गई थी।" बेटी की बात सुनकर लल्लू ने हुक्के का कश खेंचा और फिर बोला "बिटिया! यदि तू बुरा न माने तो छोटे ठाकुर का कोई पुराना जूता शाम को लेता आऊं" अब चमेली कुछ न बोली। वह अब अपने बापू के लिए भोजन तैयार करने लगी। भोजन करने के उपरान्त लल्लू सीधा ठाकुर की हवेली की ओर बढ़ा। बड़े ठांकुर आज जंगल में आखेट खेलने गये थे। ज्योंहि वह ठाकुर की हवेली के आंगन में पहुंचा त्योंहि हवेली के बरामदे में बंधा कुत्ता जोर से

भौंका। कुत्ते के भौंकने की आवाज सुनकर भानुदेव की मां
आवाज लगाई। "भानुदेव! जरा बाहर देख, कोई आया है।
भानुदेव ने दरवाजा खोल कर देखा तो सामने बूढ़ा माली लल्
खड़ा था। "माली तुम दूर क्यों खड़े हो गये आगे आ जाओ।
भानुदेव ने लल्लू की ओर देखकर कहा "ऐसे ही मालिक! मालि
के बहुत समीप आकर नौकर बिगड़ जाते हैं। दुस्साहसी होते हैं
काम करना छोड़ देते हैं मालिक, इसलिए ही दूर खड़ा हूं।" लल्
ने भानुदेव की ओर देखकर कहा "नहीं ऐसा नहीं हो सकता माली
नौकरों के दूर रहने से मालिकों को उनके कष्टों का पता न
चलता। तभी तो नौकर विद्रोही हो जाते हैं। आपको कोई क
तो नहीं हुआ जो दोपहर को बिना आराम किये हवेली की अ
चले आए" भानुदेव ने लल्लू की ओर देख कर कहा "भगव
आपको लम्बी आयु दे मालिक। आपके होते हमें कष्ट नहीं
सकता आज मैं आपसे कुछ लेने आया हूं मालिक। आज जब सु
चमेली फूल चुनने गई थी तो उसके पांव में कांटा लग गया थ
नंगे पांव कांटे ही लग जाया करते हैं मालिक। आपका क
पुराना जूता हो तो उसे पूरा आ जावेगा। अब तो बड़ी हो गई
पर वह बचपन में आपके पुराने कपड़े और जूते पहन कर बड़ी
नटखट लगती थी।" लल्लू की यह बात सुनकर भानुदेव झट अ
गया और एक राजस्थानी तिल्लेदार जूता उठाकर ले आया जो
उसने केवल उसी दिन पहना था। "यह ले जाओ माली। मैं अ
जब राजस्थान गया था तो दो जोड़ी ले आया था। एक मैं प
लूंगा एक तुम ले जाओ।" लल्लू ने जूते की ओर देख कर क
"बड़ा कीमती होगा मालिक! इसे आप ही पहन लें। मेरी चमे
इन इतने अच्छे जतों को पहनती अच्छी नहीं लगती मालिक। क
पुराना जूता है तो दे दो।" लल्लू ने भानुदेव की ओर देखकर कह

"कोई मंहगा नहीं है माली। पुराना होता तो दे देता, तुम इसे ही ले जाओ। आखिर चमेली का भी कोई हक है। आपने हमारे बागीचे में बड़ी मेहनत की है माली। वह सारा बागीचा आपकी ही तो देन है।" यह बात कह कर भानुदेव ने अखबार का कागज लल्लू को दिया और कहा "इसमें लपेट कर ले जाओ।" अब लल्लू ने उस तिल्लेदार जूते को अखबार में लपेटा और चल दिया।

लल्लू को आज अपने बचपन के दिन याद आने लगे थे। उसके घर उस गाँव से चालीस मील दूर थे। उसके मां-बाप बचपन में ही मर चुके थे। घर में केवल लल्लू की बूढ़ी दादी और लल्लू ही थे। जब लल्लू जवान हुआ तो उसकी दादी ने उसे नौकरी ढूंढने के लिए कहा था। नौकरी की तलाश में लल्लू ठाकुर सूर्यदेव के गांव में पहुंच गया था। उसने अपनी जवानी के दिन सूर्यदेव के पास ही बिताये थे। विवाह भी उसका सूर्यदेव ने ही किया था। विवाह के उपरान्त वह केवल दो बार ही अपने गांव में गया था। एक बार जब वह अपने गांव में गया था तो उसकी पत्नी उसके साथ थी। चमेली उस समय एक वर्ष की थी। दूसरी बार वह अपनी दादी की मृत्यु का समाचार सुनकर गांव गया था। तब उसने खपरैल पोश झोंपड़े की मुरम्मत भी करवा दी थी। गांव के लोगों ने अब लल्लू को अपने ही गांव में रहने को कहा था पर लल्लू ने किसी की न मानी थी। आज लल्लू का मन पुनः न जाने अपने गांव को जाने को क्यों कर रहा था। वह चमेली की अब शादी करना चाहता था। उसके लिए ठीक रिश्ता ढूंढना चाहता था। जो उसे उस ठाकुरों के गांव में मिलना कठिन था। लल्लू जाति का धीवर था और उस इलाके में धीवरों की आबादी नहीं थी। इसलिए अब लल्लू घर जाना चाहता था।

उधर चमेली प्रतिदिन जब सुबह मन्दिर में भगवान कृष्ण की

मूर्ति को हार पहनाने जाती थी तब भानुदेव भी वहां पहुंच जाता। वे दोनों घंटों वहां बैठे बातें करते रहते थे। चमेली अब प्रतिदिन जल्दी उठती और फूल तोड़ने चली जाती। फूल तोड़कर वह हार पिरोती और कुछ गुनगुनाती। उसका रंग रूप अब पहले से और निखर आया था। उसके पास अब किसी चीज की भी कमी नहीं थी। ठाकुरों के उस गांव में अब चमेली की ही चर्चा थी। कोई कहता 'माली की लड़की अब ठकुराईन बनती जा रही है' तो कोई कहता 'छोटे आदमी को जब कोई बड़ी चीज मिल जाती है तो उसके हाथ पांव भी उसके वस में नहीं रहते।' गांव में जब कोई त्योहार या मेला आता तो चमेली की वेष-भूषा को देख लोग दंग रह जाते पर किसी को भी ठाकुर सूर्यदेव के कानों तक बात पहुंचाने की हिम्मत नहीं थी।

ठाकुर सूर्यदेव को भानुदेव के कई रिश्ते आये पर वह अपने लड़के का विवाह किसी राज परिवार में करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपने लड़के भानुदेव की सगाई तक न की थी। एक वर्ष सेबों की फसल तैयार हुई तो ठाकुर सूर्यदेव ने अपनी पत्नी के भाई उग्रदेव को कुछ दिन के लिए अपने पास सेबों के बाग में काम करने हेतु बुलवा भेजा। अब उग्रदेव प्रतिदिन बागीचे को जाता, सेबों को पेटियों में बन्द करवा कर सड़क तक पहुंचाने का प्रबन्ध करता। सेबों के पेड़ अब धड़ा-धड़ खाली हो रहे थे। एक दिन जब उग्रदेव बागीचे की ओर जा रहा था। सुबह का समय था। उसने सोचा मन्दिर के रास्ते होकर जाऊं क्योंकि उस दिन उसका पूर्णमाशी का व्रत था। ज्योंहि वह मन्दिर की ओर मुड़ा त्योंहि उसने गुलाब के झुण्डों में कुछ बातें होती सुनीं। वह उस ओर देखने लगा। वहां भानुदेव और चमेली बैठे आपस में कुछ बातें कर रहे थे। उग्रदेव ने भानुदेव की ओर देखकर कहा "भानु! यह सब आपके लिए

ठीक नहीं। आप एक ठाकुर के लड़के हो। यदि घर पता लगा तो इसका परिणाम बुरा होगा।" अब भानुदेव वहां से उठा और अपने मामा की बात का उत्तर दिये बिना हवेली की ओर चल दिया। चमेली भी अब झौंपड़े की ओर बढ़ी। आज उन दोनों के दिल धक-धक कर रहे थे।

आज शाम जब लल्लू अपने झौंपड़े की ओर आ रहा था तो रास्ते में उसे उग्रदेव मिला उसने उसे देख कर नमस्कार की तो उग्रदेव ने बड़ी क्रोध भरी दृष्टि से उसे देखकर कहा "माली, तेरी लडकी के हाथ पैर ठिकाने नहीं दीख रहे। इसको समझा नहीं तो पणिाम गम्भीर होगा।" यह बात कहकर उग्रदेव हवेली की ओर चल दिया। लल्लू उग्रदेव की बात को नहीं समझ सका था। लल्लू शाम को अपने झौंपड़े में पहुंचा। संध्या ढल रही थी आता ही वह थका हुआ चारपाई पर लेट गया और उग्रदेव की कही हुई बात को सोचने लगा। चमेली से उसे इतना स्नेह था कि वह उसे कुछ न कहना चाहता था। अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद उसने उसे फूल के पौधे की भान्ति पाला और सींचा था "आज दीपक नहीं जलाया बिटिया, अन्धेरा हो चला है। दीपक जला दे" अपने पिता की आवाज सुनकर चमेली के विचारों का तांता टूटा। वह आज सुबह से ही उदास थी। वह अब जीना न चाहती थी। पर जब उसे अपने पिता की याद आती तो सोचती कि उसकी मृत्यु के साथ ही उसका बूढ़ा बाप बिलख बिलख कर प्राण दे देगा। अब वह चारपाई से उठी और दीपक जला दिया "चूल्हे में आग है? बिटिया तम्बाकू पीने को मन कर रहा है" अब पुनः लल्लू ने चमेली से पूछा। चमेली अब चूल्हे की ओर देखा और बोली, "थोड़ी सी है बापू, आपके तम्बाकू का काम चल जावेगा।" अब लल्लू उठा अपनी चिल्म भरी और अपने मिट्टी के हुक्के को गुड़गुड़ाने लगा।

अब कुछ कुछ अन्धेरा हो चला था लल्लू ने किसी के आने की पदचाप सुनी बाहर की ओर देखा तो ठाकुर सूर्यदेव को अपने झौंपड़े की ओर बढ़ता देख सहम कर खड़ा हो गया मानों वह उनका तीस वर्ष का माली नहीं भारी अपराधी हो। अब ठाकुर सूर्यदेव गरजकर बोले, "अरे लल्लू के बच्चे, वह तेरी छोकरी कहां है? जरा उसे बाहर निकाल।" ठाकुर सूर्यदेव के हाथ में दोनाली बन्दूक चमक रही थी। लल्लू सूर्यदेव के क्रोध को जानता था वह कुछ न बोला खड़ा रहा। अब सूर्यदेव पुनः बोले, "यदि तू भला चाहता है तो कल सूर्योदय से पूर्व मेरे गांव को छोड़ दे अन्यथा तुझे काला मुंह करके यहां से भेजा जावेगा। तेरी वह छोकरी हमारे कुल की मर्यादा मिटाने पर तुली है। उसने अपनी जात नहीं देखी। उस वृक्ष से लिपट कर उसको ही सुखाना चाहती है जिसके सहारे वह खड़ी हुई है। उसको लेकर सूर्योदय से पूर्व चला जा अन्यथा तुम दोनों को जीवन से हाथ धोने पड़ेंगे।" आज लल्लू के झौंपड़े में आग न जल सकी। दोनों बाप-बेटी आज भूखे ही लेटे रहे।

आधी रात को लल्लू जागा उसने चमेली को आवाज दी। चमेली तो आज सोई ही न थी। लल्लू ने चमेली को चलने के लिए कहा बोला, "बेटी! इन हवेली वालों के सहारे हम निर्धन व्यक्ति बड़े दिन नहीं ठहर सकते। उठ चलने की तैयारी कर। वह दूर खपरैल का झौंपड़ा हमें अपनी छाती से लगाने के लिए बाहें पसारे हमारी इन्तजार कर रहा है" अब क्या था चमेली ने बिलखते मन से अपना सामान बांधा और दोनों बाप-बेटी अपने सामान की एक एक गठरी सिर पर उठाकर चल दिए।

दूसरे दिन पौ फटी सवेरा हुआ। भानुदेव नित्य की भान्ति उसी समय पर मन्दिर गया। बड़ी देर इन्तजार करता रहा पर

वहां कोई न आया। भानुदेव अब सीधा मन्दिर से लल्लू के झौंपड़े की ओर गया। वहां देखा तो झौंपड़े के किवाड़ खुले थे। वह तिल्लेदार जूता जो कुछ दिन पूर्व लल्लू उससे ले गया था उसी प्रकार कागज में लिपटा हुआ था। अब भानुदेव कुछ क्षण वहां रुका और चल दिया।

शाम हुई सन्धया आई। सभी घर आए पर भानुदेव आज घर न लौटा था। सभी परेशान थे। सूर्यदेव की पत्नी बिलख रही थी। सूर्यदेव भी आज डगमगा गये थे। भानुदेव उनका इकलौता पुत्र था। उस रात सूर्यदेव के घर भी दीपक न जला। किसी ने भोजन न किया। सभी भानुदेव के अचानक चले जाने पर दुःखी थे। दूसरे दिन भानुदेव के चले जाने की चर्चा सारे गांव में फैल गई। कोई कहता "सूर्यदेव ने यह बुरा किया, एक ही तो लड़का था यदि उसका विवाह कर देते तो क्या हर्ज था। आखिर चमेली कोई अछूत तो नहीं थी" कोई कह रहा था "ठाकुर ने लल्लू के साथ बहुत बुरा किया बेचारा तीस साल बागीचे में काम करता रहा और जब बागीचा फला फूला तो उसे खाली हाथ निकाल दिया।" तो कोई स्त्री कह रही थी "जब ठाकुर के लड़के ने चमेली का जीवन तबाह कर दिया तो उसे घर से निकाल दिया। अब उस बेचारी के साथ कौन शादी करेगा, न घर की न घाट की।" लोग भिन्न भिन्न प्रकार की बातें कर रहे थे। सूर्यदेव ने भानुदेव को ढूंढने के लिए स्थान स्थान पर लोग भेजे, पर उसका कोई पता न चल सका।

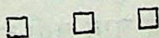
उधर घटना के तीन मास बाद चमेली ने एक पुत्र को जन्म दिया। लल्लू ने उसका नाम कुछ और रखना चाहा पर चमेली ने उसका नाम उदयदेव रख दिया। लल्लू के पूर्वजों के उस खपरैल-पोश मकान में पलने लगा। ठाकुर सूर्यदेव ने कुछ व्यक्ति भानुदेव

की तलाश में लल्लू के गांव भेजे पर भानुदव का कोई पता न चल सका। दिन बीतने लगे। सेबों का वह हरा भरा बागीचा सूखने लगा। उन पौधों की रखवाली करने वाला अब कोई न था। बागीचे का वारिस जा चुका था। ठाकुर सूर्यदेव की इतनी बड़ी सम्पति का मालिक भी अब कोई न था। सभी वारिसों को उसने घर से तथा सम्पति से विहीन करके भेज दिया था। अब सूर्यदेव की आयु ढल रही थी। उन्हें अब दिन रात चिन्ता थी कि इतनी बड़ी सम्पति का वारिस किसको बनाएं ? यह प्रश्न उनके सामने बार बार उठता था। भानुदेव की मां की आंखें रो रो कर अन्धी हो चली थी। उसे सिवाए रोने के सारा दिन कोई काम ही न था। सूर्यदेव ने अब सम्पति का लगाव बिल्कुल छोड़ दिया था। वर्षो बीते जा रहे थे। भानुदेव को गये अब बारह वर्ष हो रहे थे।

एक दिन पूर्णमाशी की सुबह को एक साधु उस गांव में आया। सारे गांव में घूमा। ठाकुर सूर्यदेव की हवेली में गया और आकर उसने उस कृष्ण के मन्दिर के आगे जहां चमेली प्रतिदिन आया करती थी। आकर अपना आसन जमा लिया। शाम को मन्दिर के आगे भजन कीर्तन होता। साधु सबको अच्छी अच्छी बातें सुनाता था। सबके प्रश्नों का उत्तर देता था। अब क्या था। दूसरे ही दिन ठाकुर सूर्यदेव और उसकी पत्नी उसके पास आए उन्होंने अपने पुत्र भानुदेव के गुम होने की बात सुनाई तथा अपनी इतनी बड़ी सम्पति का मालिक बनाने हेतु उस साधु से सलाह पूछी। अब कुछ क्षण चुप रहने के उपरान्त साधु बोला, "आपकी सम्पति का सही वारिस आपके माली लल्लू की लड़की चमेली का पुत्र उदयदेब है। यदि आप उसे अपनी सम्पति का वारिस नहीं बनाओगे तो आपकी सम्पति नष्ट हो जावेगी।" ठाकुर सूर्यदेव ने साधु की बात मान ली। अब क्या था। दूसरे ही दिन उसने अपने

ांव के कुछ व्यक्ति माली लल्लू और उसकी लड़की चमेली को बुलाने भेज दिए। ठाकुर सूर्यदेव के आदमियों को आया देख पहले तो लल्लू कुछ सहमा पर साधु की बात सुन कर वह उनके साथ चलने को उद्यत हो गया। लल्लू चमेली और उदयदेव ठाकुर सूर्यदेव के गांव पहुंचे वहां सूर्यदेव ने साधु के कहने पर उदयदेव को सरकारी ढंग से अपनी सम्पति का वारिस घोषित कर दिया।

सम्पति का ठीक वारिस घोषित करवाने के उपरान्त साधु चलने को तैयार हो गया। साधु की विदाई के समय वहां बहुत से लोग इकट्ठे हुए थे। अब साधु ने जाती बार सबको नमस्कार की और चल दिया। तब ठाकुर सूर्यदेव की पत्नी बोली "अरे यह कहीं मेरा बेटा भानुदेव ही तो नहीं था आज मेरी छाती भर आई है" यह बात कहकर सूर्यदेव की पत्नी गश खाकर गिर पड़ी। लोग साधु के पीछे उसे ढूंढने गए पर उसका कहीं पता न चल सका।



"गौ हत्या"

लाजो अब बूढ़ी हो चुकी थी। आगा पीछा कुछ भी नहीं था। उसका मायके का परिवार प्लेग के रोग का शिकार हो चुका था। उसने अपने सात भाईयों, दो बहनों और मां तथा बाप की अर्थियाँ अपने बचपन में अपने आंगन से उठती देखी थीं। जब अन्त में अन्तिम अर्थी उसके बाप की उस आंगन में से उठी थी तो लाजो पछाड़ खाकर भूमि पर गिर पड़ी थी। उसके मायकों के घर का आंगन लोगों से भरा पड़ा था। तब कुछ बूढ़ी स्त्रीयों ने उसे कुछ दिलासा दिया था। उसका विवाह गांव के लोगों ने ही मिल-मिलाकर सात वर्ष की आयु में एक समीप के गांव में कर दिया था। दहेज में उसे एक बछिया दी गई थी जैसा कि उसका पिता मरती बार कहकर गया था। जब लाजो दुल्हिन बन कर मायके आई थी तो उस समय 1914 की लाम लगी हुई थी। उसका पति वसन्ता गांव में एक हट्टा कट्टा नौजवान था। जब वह कुश्ती करता और पहलवानों को दंगल में पछाड़ता तो लोग तालियां बजाते थे। वसन्ता तालियों की आवाज से झूम उठता था।

एक दिन जब वह कुश्ती करके वापस आ रहा था तो उसके बूढ़े बाप ने कहा "वसन्ते लाम लगी हुई है, तू भी भरती हो जा। पांच सात रुपये महीने के तो मिलेंगे ही। घर की खेती-बाड़ी तो शाहुकार की है। जब फसल तैयार होती है तो शाहुकार पता नहीं सिर पर कहां से आ धमकता है। दे, दिला कर भी कर्जा बढ़ता ही जा रहा है यदि यही हालत रही तो भूमि भी चली जावेगी। इस ढंग से तो यह कर्ज मेरे पोते भी नहीं उतार पायेंगे। तू हट्टा कट्टा है, सूबेदार तो बन ही जावेगा।" अपने लिए बाप के मुंह से

(सू)बेदार शब्द सुनकर वसन्ते की आंखें चमक उठीं छाती दो बलिश्त (औ)र फूल गई बोला "बापू मैं कल ही भरती हो जाऊंगा" यह बात (क)हकर एक बार वसन्ते ने अपनी पत्नी लाजो की ओर देखा और (अ)पने मकान के बरामदे में बैठ गया। लाजो की आयु उस समय (स)ात वर्ष की थी। वह लाम का अर्थ नहीं समझ सकी थी। आज वह भी बड़ी प्रसन्न थी कि उसका पति महीने के पांच सात रुपये कमा लेगा और सूबेदार बनेगा।

दूसरे दिन पौ फटी सवेरा हुआ। वसन्ते ने अपने कपड़े पहने, सिर पर पगड़ी पहनी और चलने को तैयार हो गया। रोटियां तो आज लाजो ने चार घड़ी रात होते ही पका डाली थीं। रोटियों की गठड़ी उसने अपने थैले में डाल ली। बाप के पाओं छुए, एक बार लाजो की ओर देखा और चल दिया। लाजो अपने मकान की छत पर चढ़कर वसन्ते को दूर तक जाते हुए देखती रही ज्योंही वसन्ता उसकी नजरों से ओझल हुआ त्योंही लाजो का मन धड़कने लगा। उसकी आंखें भर आई न जाने क्यों? उसने स्वयं ही तो वसन्ते को खुशी खुशी भरती हो जाने के लिए भेजा था। फिर वे आंसू कैसे? इस बात को लाजो भी न समझ सकी थी। वसन्ता उस नगर की ओर बढ़ता जा रहा था जहां अंग्रेज साहब भारतीय नौजवानों को भरती करने के लिए आया हुआ था।

अन्ततः वसन्ता उस नगर में पहुंच कर उस स्थान की ओर बढ़ा जहां अंग्रेज साहब भारतीयों को भरती कर रहे थे। उसने कपड़े खोले और उसी लाईन में खड़ा हो गया जिस लाईन की भरती की जा रही थी। अंग्रेज साहब भारतीय नौजवानों को भरती करता करता वसन्ते तक पहुंचा। वसन्ते के हृष्ट-पुष्ट शरीर को देखकर कुछ रुका और बोला, "वैल! नौजवान कौन हाते हो तुम" साहब की यह बात सुन कर वसन्ते ने साहब की ओर देखकर

कहा "जाट" अब एक बार अंग्रेज साहब ने उसकी ओर देखा और उसकी छाती पर अपने हाथ की पैंसिल से कुछ लिखा और आगे चल दिया।

अब वसन्ता भरती हो चुका था। वसन्ते को फौजी ट्रक में बैठाकर बाकी नौजवानों के साथ लाहौर पहुंचा दिया गया था। लाहौर से भारतीय सैनिकों की गाड़ियां बन्दरगाहों तक जा रही थीं उन्हीं गाड़ियों में बैठाकर वसन्ते को भी बन्दरगाह के रास्ते मिश्र के युद्ध स्थल तक पहुंचा दिया गया। जब वसन्ते का एक मास तक कोई पत्र न आया तो वसन्ते के बाप का दिल धड़कने लगा। उससे नींद अब कोसों दूर थी। एक ही बुढ़ापे का सहारा वसन्ता ही तो रह गया था। उसकी बीवी तो वसन्ते को जन्म देने के पन्द्रह दिन उपरांत ही चल बसी थी। उसे ज्वर चढ़ा था। उसने एकबार वसन्ते के पिता की ओर देखकर आंखें बन्द कर ली थीं। अब घर में वसन्ता तथा वसन्ते का पिता अकेले ही थे। वसन्ते का पालन-पोषण वसन्ते के पिता ने इस ढंग से किया था कि सारे गांव के लोग दंग थे। वसन्ता समीपवर्ती गांवों में एक अनोखा नौजवान था। वसन्ते को उसके पिता अपने से एक घड़ी भी अलग नहीं करते थे। पर आज उसके पत्र को आये भी एक मास बीत चुका था। आज रात वसन्ते के पिता को नींद न आई, लाजो ने भी वह रात सिसकियां भरते ही काटी थी। दूसरे दिन वसन्ते का पिता उस नगर में पहुंचा जहां वसन्ता भर्ती हुआ था। नगर में पहुंचने पर उसे पता चला कि भीषण युद्ध छिड़ा हुआ था। गांवों में धड़ा-धड़ तारें आ रही थीं। भारतीय सैनिक धड़ा-धड़ युद्ध में मर रहे थे। नगर में यह चर्चा सुन वसन्ते के बाप का दिल बैठने लगा। वहां उसे पता लगा कि वसन्ता उसी दिन भरती हो गया था और उसी दिन उसे एक सैनिक गाड़ी में बैठाकर ले जाया गया था। अब वसन्ते का बाप

वसन्ते का पता किससे लेता ? उससे कहां मिलता ? वह लड़खड़ाते हुए पांवों से घर की ओर लौटता चला आ रहा था। शाहुकार का कर्ज चुकता करने के लिए ही तो उसने वसन्ते को भरती करवाया था। वह यह सोच रहा था कि कर्जा बढ़ता तो बढ़ता रहता, गांव की बात ही तो थी। अब तो अपने बेटे को उसने विदेशियों के हाथों बेच डाला था। पर अब क्या हो सकता था। समय हाथ से निकल चुका था। शाम को वसन्ते का बूढ़ा बाप घर पहुंचा। उसे आज तो न भूख थी न नींद। लाजो ने रोटी पकाई और अपने बूढ़े श्वसुर के आगे चार मक्की की रोटियां एक थाली में परोस दीं साथ में सरसों का साग था और एक कटोरा लस्सी। आज वसन्ते के बाप ने केवल दो रोटियां ही खाईं और लेट गया। वसन्ते के बाप को आज रात नींद नहीं आ रही थी न जाने क्यों ?

सवेरा होते ही वसन्ते का पिता अपने बिस्तर से उठा त्योंहि हरकारे ने आवाज दी "सरदार जी ! जरा बाहर आना। आपका तार आया है।" तार का नाम सुन कर वसन्ते के पिता को ऐसा लगा मानों उसे काला सांप काट गया हो। वह लड़खड़ाते कदमों से हरकारे की ओर बढ़ा। हरकारे ने एक काले रंग का लिफाफा बूढ़े को थमा दिया। "पढ़कर भी सुना दो क्या लिखा है इसमें" वसन्ते के पिता ने हरकारे की ओर देख कर कहा। हरकारा तार पढ़ना न चाहता था। उसने इन काले रंग के लिफाफों को जिस घर में पढ़कर सुनाया था उस घर में कोहराम मच गया था। बसन्ते के बाप के ज़ोर डालने पर हरकारे ने तार पढ़ा, लिखा था "वसन्त सिंह नं० 117896 ऐक्सपाईरड इन वार सौरी कमांडैंट" लाजो भी बरामदे में घूंघट निकाले खड़ी हरकारे की बातें सुन रही थी। तार का अर्थ समझ कर वसन्ते का बाप भूमि पर गिर पड़ा। सारा गांव इक्ट्ठा हुआ उसी दिन से वसन्ते के बाप को ज्वर हो गया था और

वह चारपाई से न उठ सका था एक मास उपरान्त उसके प्राण पखेरू उड़ गये थे। अब लाजो घर में अकेली थी। बाल विधवा थी। अब न उसका आगा था न पीछा। वह रेगेस्तान के उस हरे ठूंठ की भान्ति खड़ी थी जिस पर अब कोई पक्षी चहचहाने न आता था।

दिन बीतने लगे। अब वही एक बछिया जो लाजो के दहेज में आई थी, उसका एकमात्र सहारा और दिल का बहलावा शेष थी। उस जाटों के गांव में लाजो इस ढंग से रहती थी जैसे बत्तीस दांतों के बीच जुबान। लाजो पर जवानी आई और ढलने लगी। कई बार बसन्त के फूल खिले और मुरझाये। गांव में कई शादीयां हुईं और कई लोग मरे पर लाजो किसी के विवाह पर भी जाती तो चुपचाप बैठी रहती। न वह किसी की खुशी में अब खुशी मनाती थी और न किसी की चीख अब उसके हृदय को झकझोरती थी। वह अब उस हरे ठूंठ की भान्ति थी जिस पर न बहार का असर था और न ही वर्षा की बौछाड़ उसे अब डगमगाती थी। वह स्थिर थी उस अचल समुद्र की भान्ति जिसने हजारों ज्वार-भाटे देखे हों।

दहेज में आई बछिया की सेवा करना ही उसकी अब दिनचर्या थी। जब भी उसके दहेज की बछिया कोई बच्चा देती तो लाजो उसका पालन-पोषण परिवार के प्राणियों की तरह करती थी। गाए के लिए खेतों से हरी २ दूब लाती हर 3 वर्ष उपरांत गाए एक नया बछड़ा देती। जब वह बछड़ा चार पांच वर्ष का हो जाता तो लाजो उसको बेच देती। उसी से वह अपने जीवन का निर्वाह करती थी। दस रुपये प्रतिमास उसको अपने पति की पैंशन मिलती। लाजो ने उसी पैन्शन से शाहुकार का कर्ज उतार दिया था। उसे यह पता था कि उसी कर्ज की खातिर उसका पति भरती हुआ था। अब

चार वर्ष से शाहुकार लाजो से खर्च लेने नहीं आता था। अब लाजो के मन में शान्ति थी। उसने अपने ससुर के दादा द्वारा लिया हुआ कर्जा अदा कर दिया था। अब उसके पूर्वजों पर किसी का कोई ऋण नहीं था। लाजो की ढलती हुई आयु के साथ अब उसके दहेज की बछिया की आयु भी ढलने लगी थी। उसने दस बछड़ों को जन्म दिया था और ग्याहरवां बछड़ा उसके पेट में था। अब लाजो ने अपनी बछिया के लिए कुछ खली और बिनौले खरीद कर रख लिए थे। वह अपनी दहेज की बछिया को बूढ़ा नहीं देखना चाहती थी। उसकी खुराक का हर प्रकार से प्रबन्ध करती थी।

लाजो का वसाखा नाम का एक भतीजा था। उसके खेत लाजो के खेतों के पास ही थे। वसाखा उसके गांव का सबसे उजड्ड जाट था। जरा जरा सी बात पर वह आपे से बाहर हो जाता था। गाली गलौच करना, मारना-पीटना उसकी प्रतिदिन की क्रिया थी। गांव के सभी लोग उससे परेशान थे। लाजो के साथ भी उसने कई बार झगड़ने की कोशिश की थी पर बेचारी लाजो किसके सहारे लड़ती। जब भी वसाखा उसके आंगन में आ धमकता तो वह झट अन्दर चली जाती थी। वसाखा अपनी बात का उत्तर न पाकर दो तीन गालियां निकालकर चला जाता था। लाजो के पति का आज श्राद्ध था। वह अपने पति की श्राद्ध की तिथि पर हर वर्ष दो चार ब्राह्मणों को बुलाकर भोजन करवाती थी। लाजो ने अपने पति के श्राद्ध का काम पूरा किया और वह अपनी दहेज की बछिया को अपने खेतों में घास चराने के लिए ले गई। आज उसका मन बड़ा उदास था। जीवन की सारी बातें उसके मस्तिष्क में छाया चित्र की भान्ति घूमने लगी थीं। उसे वह समय रह रहकर याद आ रहा था जब उसके श्वसुर उस काले तार को सुन कर भूमि पर गिर पड़े थे और फिर वह उठ ही न सके थे। इन सब बातों की याद ने आज

लाजो को विचलित कर दिया था। उसने कुछ सुसताना चाहा। आकाश की ओर देखा। काले बादल आसमान पर घिर आये थे। उसने अब हाथ में ली हुई रस्सी से गाए को खेत में एक खूंटे के साथ बांध दिया और स्वयं अपने घर की ओर मुड़ी। आकर वह अपनी खाट पर लेट गई उसकी आंखों से अश्रु धारा बह निकली। रोते रोते उसे नींद पड़ गई थी।

इधर खेत मे बंधी गाए के पास वसाखे का बैल आया। उसने गाए को सींगों से खदेड़ना चाहा। गाए ने उससे बचने की कोशिश की, गाए और बैल की इसी खेंचातानी में गाए जिस खूंटे से बंधी थी वह उखड़ गया। अब दोनों ही गाए और बैल वसाखा के खेतों में चले गये। वसाखा भी धान की निलाई करके थोड़ी देर पहले घर को गया था। जब वह रोटी खाकर वापस आया तो उसने लाजो की गाए और अपने बैल को धान के खेत में चरते देखा। वह डंडा लेकर दूर से शोर मचाता भागा। बैल एकदम वहां से भाग गया। गाए के गले में रस्सी थी। वह उसी खेत के किनारे झाड़ियों से उलझ गई। अब वसाखे ने आव देखा न ताव, गाए पर डंडों की बौछाड़ कर दी। गाए डकराई पर उसे उस उजड्ड जाट से उस समय कौन छुड़ाता। समीप खेतों में काम कर रहे जाट लोग सभी दूर से देख रहे थे। अब गाए ने एक बार वसाखे की ओर देखा और डकराना बन्द कर दिया। गाए भूमि पर गिर पड़ी। वसाखा भी सहमकर खड़ा हो गया था। अब वह बिल्कुल न हिल रहा था न जाने क्यों? उसके मुंह की गालीयां अब थम चुकी थीं अब उसने वह डंडा जिससे उसने गाए को पीटा था वहीं फैंक दिया और हांफता हुआ दूर जाकर दूसरे खेत में एक आम के वृक्ष के तने का सहारा लेकर कुछ सोचने लगा। उसको दूर जाता देख गांव का एक वृद्ध जाट उस खेत की ओर आया और उस स्थान को ओर

ढ़ा जहां वसाखा गाए को पीट रहा था। वह एकदम विदक कर ज़ोर से बोला "गौहत्या, गौहत्या !" गौ हत्या उसकी आवाज उन निर्जन खेतों में गूंजती हुई वसाखा के हृदय को झकझोर गई थी। वसाखा अब वहां से एकदम उठा और चल दिया। न जाने वह किस ओर गया उसको जाते किसी ने नहीं देखा था।

अब सारे गांव के लोग वसाखा के उस खेत में एकत्र हो चुके थे जहां गाए मरी पड़ी थी। वसाखा की उजड्डता पर सभी पश्चाताप कर रहे थे। अब किसी ने सोई हुई लाजो को जगाया। लाजो के स्वपन चल रहे थे। स्वपन में उसने गाए को रोते हुए अपने सम्मुख खड़ा देखा था। साथ में गाए का एक छोटा सा बछड़ा भी रोकर लाजो से कुछ फरियाद कर रहा था। लाजो अब झट उठी और खेत की ओर बढ़ी। बहुत से लोगों को खड़े देख उसका मन धक-धक करने लगा। उसने गांव के बड़े बूढ़ों को जब वहां एकत्र देखा तो अपना घूंघट सरकाया और जल्दी जल्दी आगे बढ़ी। ज्योंहि वह घटना स्थल पर पहुंची तो उसकी चीख निकल गई। पास खड़े सभी लोग बिलख उठे। लाजो से वह दृश्य देखा न जा रहा था। उसके दहेज की बछिया सामने मरी पड़ी थी और साथ ही नवजात बछड़ा गाए की टांगों पर सिर रखे मरा पड़ा था। कोई कह उठा 'दोहरी हत्या! उसका बाईकाट करो चंडाल का' पर लाजो कुछ न बोली। वह रोई नहीं, चुपचाप वहां बैठ गई और कुछ क्षण उपरान्त गिड़गिड़ाकर बोली "आप सभी यहां गांव के बड़े बूढ़े उपस्थित हो। मैं अब आपसे एक सहायता मांगती हूं वह यह है कि मेरे खेत में गाए को दफनाने के लिए एक गहरा गढ़ा खोद दो। जिसके अन्दर मैं इस हत्या को छुपा सकूं। धरती मां मानव के सभी पापों को अपने अन्दर छुपा लेती है। वह वसाखे के इस पाप को भी छुपा लेगी। इस खेत की धरती पर एक दिन हरी हरी दूब उगेगी

लाजो को विचलित कर दिया था। उसने कुछ सुसताना चाहा। आकाश की ओर देखा। काले बादल आसमान पर घिर आये थे। उसने अब हाथ में ली हुई रस्सी से गाए को खेत में एक खूंटे के साथ बांध दिया और स्वयं अपने घर की ओर मुड़ी। आकर वह अपनी खाट पर लेट गई उसकी आंखों से अश्रु धारा बह निकली। रोते रोते उसे नींद पड़ गई थी।

इधर खेत में बंधी गाए के पास वसाखे का बैल आया। उसने गाए को सींगों से खदेड़ना चाहा। गाए ने उससे बचने की कोशिश की, गाए और बैल की इसी खेंचातानी में गाए जिस खूंटे से बंधी थी वह उखड़ गया। अब दोनों ही गाए और बैल वसाखा के खेतों में चले गये। वसाखा भी धान की निलाई करके थोड़ी देर पहले घर को गया था। जब वह रोटी खाकर वापस आया तो उसने लाजो की गाए और अपने बैल को धान के खेत में चरते देखा। वह डंडा लेकर दूर से शोर मचाता भागा। बैल एकदम वहां से भाग गया। गाए के गले में रस्सी थी। वह उसी खेत के किनारे झाड़ियों से उलझ गई। अब वसाखे ने आव देखा न ताव, गाए पर डंडों की बौछाड़ कर दी। गाए डकराई पर उसे उस उजड्ड जाट से उस समय कौन छुड़ाता। समीप खेतों में काम कर रहे जाट लोग सभी दूर से देख रहे थे। अब गाए ने एक बार वसाखे की ओर देखा और डकराना बन्द कर दिया। गाए भूमि पर गिर पड़ी। वसाखा भी सहमकर खड़ा हो गया था। अब वह बिल्कुल न हिल रहा था न जाने क्यों? उसके मुंह की गालीयां अब थम चुकी थीं अब उसने वह डंडा जिससे उसने गाए को पीटा था वहीं फैंक दिया और हांफता हुआ दूर जाकर दूसरे खेत में एक आम के वृक्ष के तने का सहारा लेकर कुछ सोचने लगा। उसको दूर जाता देख गांव का एक वृद्ध जाट उस खेत की ओर आया और उस स्थान को ओर

बढ़ा जहां वसाखा गाए को पीट रहा था। वह एकदम विदक कर ज़ोर से बोला "गौहत्या, गौहत्या!" गौ हत्या उसकी आवाज उन निर्जन खेतों में गूंजती हुई वसाखा के हृदय को झकझोर गई थी। वसाखा अब वहां से एकदम उठा और चल दिया। न जाने वह किस ओर गया उसको जाते किसी ने नहीं देखा था।

अब सारे गांव के लोग वसाखा के उस खेत में एकत्र हो चुके थे जहां गाए मरी पड़ी थी। वसाखा की उजड्डता पर सभी पश्चाताप कर रहे थे। अब किसी ने सोई हुई लाजो को जगाया। लाजो के स्वपन चल रहे थे। स्वपन में उसने गाए को रोते हुए अपने सम्मुख खड़ा देखा था। साथ में गाए का एक छोटा सा बछड़ा भी रोकर लाजो से कुछ फरियाद कर रहा था। लाजो अब झट उठी और खेत की ओर बढ़ी। बहुत से लोगों को खड़े देख उसका मन धक-धक करने लगा। उसने गांव के बड़े बूढ़ों को जब वहां एकत्र देखा तो अपना घूंघट सरकाया और जल्दी जल्दी आगे बढ़ी। ज्योंहि वह घटना स्थल पर पहुंची तो उसकी चीख निकल गई। पास खड़े सभी लोग बिलख उठे। लाजो से वह दृश्य देखा न जा रहा था। उसके दहेज की बछिया सामने मरी पड़ी थी और साथ ही नवजात बछड़ा गाए की टांगों पर सिर रखे मरा पड़ा था। कोई कह उठा 'दोहरी हत्या! उसका बाईकाट करो चंडाल का' पर लाजो कुछ न बोली। वह रोई नहीं, चुपचाप वहां बैठ गई और कुछ क्षण उपरान्त गिड़गिड़ाकर बोली "आप सभी यहां गांव के बड़े बूढ़े उपस्थित हो। मैं अब आपसे एक सहायता मांगती हूं वह यह है कि मेरे खेत में गाए को दफनाने के लिए एक गहरा गढ़ा खोद दो। जिसके अन्दर मैं इस हत्या को छुपा सकूं। धरती मां मानव के सभी पापों को अपने अन्दर छुपा लेती है। वह वसाखे के इस पाप को भी छुपा लेगी। इस खेत की धरती पर एक दिन हरी हरी दूब उगेगी

और वसाखा सिंह की की हुई यह हत्या उस दूब में दब कर रह जायेगी। रात को उस दूब पर मेरी बछिया चोरी चोरी आंसू बहाया करेगी।"

अब क्या था। सभी लोग अपने अपने घरों से कुदाल लाए और खेत में एक गहरा गढ़ा खोद दिया। गाए और बछड़े को चारपाई पर लिटाकर गढ़े के पास रखा गया। लाजो अब घर से अपने काते हुए सूत का एक थान लाई। गाए और बछड़े का मृतक शरीर उस कपड़े में लपेटा गया। सभी लोग अपने घरों से थोड़ा-थोड़ा नमक लाये और गढ़े में डाल दिया गया। गाए और बछड़े के मृतक शरीर उस गढ़े में रख दिये गये। अब लाजो ने अपने पति की पैन्शन के आये चान्दी के दस रुपये गढ़े में रख दिये और सभी लोगों ने गढ़े को बन्द कर दिया। गाए को दफना कर लाजो घर पहुंची। लाजो का मन टूट चुका था। उसे अब धीमा धीमा ज्वर चढ़ आया था। अब लाजो ने गांव के कारीगरों को बुलाया और गाए की समाधि तथा एक मन्दिर बनाने को कहा। दूसरे दिन मन्दिर का निर्माण कार्य आरम्भ हो गया। मन्दिर के अन्दर लाजो ने एक बड़ी सुन्दर गाए और बछड़े की मूर्ति बनवाई। मन्दिर के निर्माण का कार्य ज्यों-ज्यों पूरा हो रहा था त्यों-त्यों लाजो क्षीण होती जा रही थी। उसे एक वर्ष से लगातार बुखार था। मन्दिर निर्माण के कार्य को वह सुबह शाम लाठी के सहारे चल कर देखने जाती और चली आती। अब मन्दिर के कार्य को पूरा होने को दो दिन बाकी थे। लाजो को तेज ज्वर आया और वह चारपाई से न हिल सकी जिस दिन मन्दिर के निर्माण का कार्य पूरा हुआ था उसी दिन लाजो की अर्थी उठी थी। सारे का सारा गांव एकदम बिलख उठा था। लाजो के कहने के अनुसार उसी मन्दिर के आगे उसका अन्तिम संस्कार किया गया था। लाजो का देहान्त भी उसी दिन

हुआ था जिस दिन उसके दहेज की बछिया की हत्या हुई थी।

अब गांव वालों ने मिल-जुल कर मन्दिर के आगे लाजो की समाधि बना दी। सारे गांव के लोग सुबह शाम उस मन्दिर में भजन कीर्तन करते थे। लाजो, उसके पति, दहेज की बछिया और बछड़े की तिथि प्रतिवर्ष वहाँ लोग मेले के रूप में इक्ट्ठे होकर अपनी गौओं की पूजा किया करते थे। मन्दिर निर्माण के बीस वर्ष बाद एक सुबह गांव के लोगों ने एक कोढ़ी को मन्दिर के आगे हाथ बांधे खड़ा देखा, पहचाना तो वह कोढ़ी वसाखा सिंह ही था।



"प्रतिशोध"

सरोज ने आज दिन तक अपने मन की व्यथा किसी को नहीं बतलाई थी। उसका विवाह हुए आज पांच वर्ष बीत चुके थे। विवाह के एक वर्ष बाद उसके एक पुत्र ने जन्म लिया था। उसके इकलौते पुत्र का जन्म दिन था पर उसके पति डाक्टर उदय आज भी घर नहीं आये थे। सरोज को लगभग दो मास से ज्वर हो गया था। शरीर सूख कर कांटा हो चुका था। चौबीस वर्ष की सरोज अब चालीस वर्ष की प्रतीत हो रही थी। मनुष्य के शारीरिक रोगों का इलाज किया जाता है पर जब मनुष्य मानसिक रोग से ग्रस्त हो जाता है तो वह रोग उसे अन्दर ही अन्दर घुन की भान्ति खोखला कर देता है। यही दशा सरोज की थी। सरोज ने जब एम.ए. पास की थी तभी उसके पिता ने सरोज के लिए रिश्ता ढूंढना आरम्भ कर दिया था। डा० उदय के पिता सरोज के पिता के मित्र थे। अब एक दिन ज्योंहि उन्होंने सरोज के रिश्ते के बारे में डा० उदय के पिता से बात की थी त्योंहि वह हंस कर बोले थे, "भाई और जगह रिश्ता क्यों ढूंढना है उदय से ही क्यों नहीं कर देते। एक तो हमारा प्रेम भी बना रहेगा और बच्चे भी एक दूसरे से परिचित हैं" बस अब क्या था सरोज के पिता ने सरोज का रिश्ता डा० उदय से कर दिया था। डा० उदय ने विवाह की तिथि को आगे करने तथा विवाह देर से करने के लिए अपने पिता को सुझाव दिया था, न जाने क्यों? पर डा० उदय के पिता ने उसकी एक न मानी थी। डा० उदय शिमला के स्नोडाऊन औषधालय में काम करते थे और जब अपने विवाह पर आये थे तो उनके औषधालय की एक कम्पाऊडर कुमारी रेणू भी उनके साथ आई थी। विवाह बड़ी धूमधाम से हुआ था। हमीरपुर के नगर में ऐसी शादी कभी

नहीं हुई थी। विवाह के समय सरोज के पिता ने डा० उदय के पिता को फफक कर कहा था, "मेरी सरोज आप के हवाले है। विवाह के पहले मैंने कोई छानबीन न की थी। इसलिए अब सारा दायित्व आप पर ही होगा" यह बात कहकर उन्होंने एक बार रेणू की ओर और एक बार डा० उदय की ओर देखा था। डा० उदय के पिता अपने मित्र की बात को समझ न सके थे।

आज सरोज के पास उसकी सहेली अनीता सुबह से ही आ गई थी। सरोज चारपाई पर लेटी कुछ सोच रही थी। उसके सूखे गाल आंसुओं से भीग रहे थे। उसको सिसकते देख अनीता ने कहा था "सरोज! आज शुभ दिन है तुम कोई अच्छी बात करो। आप रो रही हैं।" अनीता की यह बात सुन कर सरोज ने एक लम्बी सांस ली थी और बोली थी, "नहीं बहन, इस बुखार ने मुझे इतना तंग कर रखा है कि उतरने का नाम ही नहीं लेता" अब अनीता सरोज के पास चारपाई पर बैठ गई थी। "बहन! यह शरीर है, तो दुःख भी है, बुखार भी है, और बुखार कोई भयानक रोग नहीं, एक दिन जरूर उतर जावेगा दूसरे जीजा जी तो स्वयं अच्छे डाक्टर हैं। आपको घबराने की क्या आवश्यकता है?" अनीता के मुंह से 'जीजा' का शब्द निकला ही था कि सरोज की आंखें पुनः डबडबा गई थी "मम्मी! ओ मम्मी! डैडी कब आयेंगे मम्मी? तू कहती थी कि आज मेरा जन्म दिन है, डैडी सुबह ही आ जावेंगे" टुप टुप की आवाज से कमरे के अन्दर दाखिल होते हुए अजय ने अपनी मां की ओर देखते हुए कहा अब कुछ देर कमरे में सन्नाटा छाया रहा। सरोज के पास अजय की बात का कोई उत्तर न था। वह कुछ सम्भल कर बोली, "आ ही रहे होंगे बेटा! तू इतना अधीर क्यों हो रहा है?" "अब तो दिन के नौ बज रहे हैं। देखो जरा घड़ी की ओर पूरे नौ हैं" अजय ने अपनी अंगुली से दीवार से लगे क्लाक की

ओर संकेत करते हुए कहा। अब एक क्षण उपरान्त क्लाक ने टन-टन से नौ की आवाज दी "मम्मी कल मैं जब स्कूल से आ रहा था तो डैडी आंटी रेणू के साथ मालरोड पर जा रहे थे। जब मैं उनसे मिलने बढ़ा तो आंटी रेणू ने मुझे घूर कर देखा था इसलिए मैं डैडी से नहीं मिल सका था मम्मी। यदि आंटी रेणू उनके साथ न होती तो मैं उन्हें खींच लाता, मम्मी।" यह बात कहकर अजय की आंखों से दो बड़े बड़े आंसू उसके गालों पर तैरते हुए उसके गले के बाहर रुक गये। अब सरोज ने अजय को अपनी भुजाओं में लपेट लिया, सिर पर हाथ फेरा और बोली, "बेटा जब तू बड़ा हो जावेगा तो तेरी आंटी रेणू तुझे देख कर घबरायेगी तब तू भी उसे घूर लेना।" अब कुछ देर पुनः कमरे में सन्नाटा रहा "मम्मी! जब आंटी रेणू हमारे घर आती है। वह डैडी को कुछ कहती है और डैडी आपसे लड़ते हैं। तभी तो डैडी ने आपको बालों से पकड़ कर घसीटा था। मुझे बड़ा गुस्सा आया था उस समय डैडी पर मम्मी! यह आंटी रेणू हमारी क्या लगती है? अब बच्चे की बात को भुलावा देने के लिए सरोज ने अपने तकिये के नीचे से सौ रुपये का नोट निकाल कर अपनी सहेली अनीता की ओर बढ़ाया और बोली "बहन यह पैसे ले जाओ और कुछ लेते आओ। वे पता नहीं कब आयेंगे। आज अजय का जन्म दिन है तब तक कुछ मिठाई तो बांट लें। अजय को भी साथ ले जाओ" अब अनीता ने सरोज के हाथ से नोट लेकर अपने पर्स में डाल लिया और अजय को साथ लेकर बाजार चल दी। वह अब सब बात समझ चुकी थी। उसे सरोज की दशा पर बड़ी दया आ रही थी। आज रविवार था। अनीता शिमले के ही एक विद्यालय में अध्यापिका थी। उसके पति भी उसी विद्यालय में अध्यापक थे। आज रविवार को वह अपनी बचपन की सहेली सरोज से मिलने आई थी। हमीरपुर की एक

प्राथमिक पाठशाला में वे दोनों इकट्ठी पांचवीं तक पढ़ी थीं। अनीता के पति प्रायः बीमार रहते थे उसने सुन रखा था कि सरोज के पति बड़े अच्छे डाक्टर हैं। वह उन्हें डाक्टर उदय को दिखाना चाहती थी। पर यहां उसने कुछ और ही देखा था। वह चुपचाप बाजार की ओर अजय को साथ लेकर बढ़ रही थी बड़ी उदास थी। उधर सरोज अपनी बातों को अनीता से छुपाना चाहती थी पर कब तक? अनीता और अजय मिठाई खरीदने जा चुके थे। अब सरोज घर में अकेली थी। सरोज ने अब अपना पैन उठाया और पत्र लिखने लगी। कुछ देर सोच कर उसने पत्र लिखना आरम्भ कर दिया।

प्रिय अजय,

प्यार!

यह पत्र जब आपको मिलेगा तो मैं इस दुनियां में नहीं हूंगी। केवल आपके आज के जन्मदिन की याद ही मेरे हृदय में रह जावेगी और आज की बातें आपको भी आयु भर याद आती रहेंगी। फिर भी मैं आपके हर जन्म दिन पर वधाई देने आया करुंगी। बेटा! मेरी मृत्यु का कारण तेरी आंटी रेणू है जो कई सालों से मौत की छाया की भान्ति मुझे ले जाने को प्रतिपल तैयार बैठी है। मुझे अपनी मौत की चिन्ता नहीं, पर यह आपकी आंटी आपके पिता और आप पर भी मौत की झड़ी बरसा सकती है। ईश्वर आपको चिरआयु दे मेरा यह अन्तिम आशीर्वाद है।

आपकी माता सरोज।

एक बार पढ़ने के उपरान्त अब सरोज ने पत्र को एक कागज में लपेट दिया, उसे एक टीन की डिबिया में बन्द किया। अच्छी प्रकार बन्द करके रख दिया। आज सुबह से ही उसका मन बड़ा उदास था। तीन दिन पूर्व जब उसके पति डा० उदय रेणू को लेकर

आये थे तो सरोज सोई थी। डा० उदय ने सरोज को सोया देख वापस चलने को कहा था। तब रेणू ने यह शब्द कहे थे "अब आप कब तक इन्तजार करोगे आज ही क्यों नहीं इंजैक्शन लगा देते ?" तब डा० उदय ने कहा था, "मेरे से यह अपराध नहीं हो सकेगा, रेणू" तब रेणू ने एक बार उदय की ओर देख कर कहा था, "तो मुझे कहो रोज रोज का झंझट छूट जायेगा" उसने डा० उदय के कोट से इंजैक्शन निकाला था पर डा० उदय ने उसे ऐसा करने से रोक दिया था। दो चार दिन इन्तजार करने को कहा था। सरोज सोई नहीं थी। आंखें बन्द किये वह अपने पति तथा रेणू की बातें सुन रही थी। अब डा० उदय ने सरोज को जगाया था। कुछ देर बठकर वह दोनों चले गये थे। अजय ने डा० उदय को आगे बढ़कर जाने से रोका था पर रेणू के घूरकर देखने से बच्चा सहमकर वापस अपनी बीमार मां के पास चला आया था। वास्तव में बात यह थी कि डा: उदय ने रेणू से विवाह करने का तब से वायदा कर रखा था जब वह दोनों इक्ट्ठे मैडीकल कालेज लुधियाना में पढ़ते थे पर डा० उदय अपने बाप द्वारा किये गये रिश्ते से इन्कार नहीं कर सके थे। उन्होंने अपने बाप के आगे बहुतेरी टाल-मटोल की थी पर उनकी एक न मानी गई थी। रेणू पढ़ लिख कर डाक्टर तो न बन सकी थी पर कम्पाऊडर अवश्य बन गई थी। अब वह भी स्नोडाऊन औषधालय शिमला में काम करती थी। डा० उदय के विवाह पर वह इसलिए साथ गई थी कि डा० उदय के माँ-बाप उसे देख कर उदय की शादी कहीं और न करेंगे पर ऐसा नहीं हो सका था।

डा० उदय के मां-बाप ने सब कुछ देखते और समझते हुए भी डा० उदय का विवाह सरोज से करवा ही दिया था। सरोज के पिता कानों में भी रेणू की भिनक पड़ी थी। तभी तो उन्होंने डा० उदय के पिता को बारात की विदाई के समय फफक कर कुछ शब्द

कहे थे। विवाह के उपरान्त जो घटना क्रम चल रहा था उससे सरोज ऊब चुकी थी। जब से सरोज शिमला आई थी तब से उसका मन उदास रहने लगा था। रेणू प्रतिदिन उनके क्वाटर में आती और वेतुकी बातें करती और चली जाती थी। आज से दो मास पूर्व जब रेणू उनके क्वाटर से वापस गई थी तो सरोज ने डा० उदय को यह शब्द कहे थे "अजी अब तो आप बच्चों के बाप हो गए हो, अब तो कुछ शर्म करो। भला मैं कब तक चुप रहूंगी" सरोज के मुंह से ये शब्द निकले ही थे कि डा० उदय ने एक चांटा सरोज के मुंह पर जड़ दिया था। सरोज की एक चीख सी निकल गई थी। पास खड़ा उदय विदक पड़ा था। इसके उपरान्त डा० उदय ने सरोज को बालों से पकड़ कर घसीटा था और कहा था "हरामजादी! वलैंडीफूल! डैमफूल!" इसके उपरान्त डा० उदय चले गये थे। वे दो दिन क्वाटर में न आये थे। उसी दिन से सरोज को बुखार हो गया था। जो आज दिन तक न उतरा था।

आज सरोज को अपने बचपन के दिन याद आ रहे थे। किस प्रकार उसके मां-बाप ने तंग रह कर उसे पढ़ाया। कितनी उच्च शिक्षा दी थी। यह सब उन्होंने इस लिए किया था कि सरोज को अच्छा रिश्ता मिलेगा। उनकी लड़की सुख की सांस लेगी। पर युवकों के नशे से वह अनभिज्ञ थे। सरोज के मां-बाप सरोज का विवाह करने के उपरान्त निश्चिन्त थे। जब भी कभी बात चलती तो सरोज के पिता बड़े गर्व से कहते "भाई रिश्ता मिला है तो मेरी सरोज को, बहुत अच्छा लड़का है, बे-ऐब। अच्छा पढ़ा लिखा है। डाक्टर है। सरोज को तो नौकरी करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी" सरोज ने कभी भी अपने मां-बाप से अपने मन की बात न कही थी। सरोज ने यह इसलिए किया था कि बड़े मां-बाप दुःखी होंगे। विवाह के उपरान्त वह कर भी क्या सकते हैं। यह

सब बातें सोच कर सरोज ने अपने मां-बाप से पति के बारे बात तक न की थी।

आज न जाने क्यों वर्षों से छिपाई हुई बात को सरोज उभारना चाहती थी। सम्भवत: इसलिए कि बातों का भार उसे अगले जन्म में भी दबाए रखेगा। आज उसने अपने मन की सारी बात अपनी सहेली अनीता से करने कीठान रखी थी और करती भी किससे ? अजय बच्चा था और अपने बूढ़े मां-बाप से वह यह बात करना भी न चाहती थी। अब बीती बातों का ताना बोना सरोज के मन में घुल ही रहा था कि अनीता और अजय मिठाई लेकर वापस आ गए। अजय ने घड़ी की ओर देख कर कहा, "मम्मी ! डैडी नहीं आए, अब तो दस बज रहे हैं मम्मी।" सरोज के पास बच्चे की बात का कोई उत्तर न था। अब सरोज ने अनीता को नये कपड़े अजय को पहनाने को कहा। अजय ने नये कपड़े पहने और वह अनीता के साथ पड़ोस में मिठाई बांटने चला गया। पड़ोस की स्त्रियों ने अजय को पूछा, "तेरे डैडी नहीं आए क्या, तेरे जन्मदिन पर ?" यह बात बच्चा सहन न कर सका। उसका मन बिलख उठा और उसने शेष मिठाई बिना बांटे अनीता को वापस चलने पर मजबूर कर दिया। अब अनीता और अजय वापस चले आये। सरोज के पूछने पर अजय बोला, "मम्मी डैडी क्यों नहीं आये ? सभी कह रहे हैं तेरे डैडी तेरे जन्म दिन पर नहीं आये। अब मैं मिठाई नहीं बांटूंगा अपने जन्म दिन पर।" सरोज कुछ न बोली। अब सरोज ने अनीता को अजय के लिए भोजन तैयार करने को कहा। अनीता ने भोजन तैयार करके अजय को खिलाया। जब अजय अपने साथी बच्चों के साथ मिल कर बाहर चला गया तो सरोज ने अनीता को पास बुला कर कहा "अनीता तू मेरी सगी बहन से बढ़कर है। तुझे मेरे घर का आज ही सब कुछ पता चल

गया होगा। मैं तुझे धरोहर के रूप में यह डिबिया दे रही हूं। जब मेरा अजय दसवीं की परीक्षा पास कर लेगा तब उसे मेरी यह धरोहर दे देना।" यह बात कहकर सरोज ने अपने तकिए के नीचे से टीन की छोटी सी डिबिया निकाल कर अनीता की ओर बढ़ा दी। अनीता ने एक बार सरोज की ओर देखा। सरोज की आंखों में पानी था। अब अनीता भी फफक पड़ी। नारी हृदय कितना कोमल होता है इसकी पहचान तो कोमल मन ही कर सकते हैं। कुछ देर कमरे में सन्नाटा छाया रहा। अब अनीता बोली "मैं बड़ी बड़ी आशाएँ लेकर आई थी पर बड़े ढोल में बड़ा पोल होता है। इस बात का मुझे पता नहीं था। मैं कल ही आपके पिता को पत्र लिखूंगी।" अनीता की यह बात सुन कर सरोज ने बिलखकर कहा "नहीं बहन, तुझे मेरी सौगन्द लगे। उन्हें पत्र न लिखना दम टूट जायेगा मेरे बूढ़े मां-बाप का, इस गम से। ऐसा अन्याय न करना। उन पर आपत्ति न ढा देना। अब वे कर भी क्या सकते हैं। जो वे कर सकते थे, कर दिया। लड़कियों का विवाह ही तो करना होता है, बहन! सो उन्होंने अच्छे पढ़े लिखे से कर दिया।"

अब सरोज अधिक न बोल सकी। अब कमरा सिसकियों की आवाज से गूंजने लगा। अनीता ने ऊपर देखा तो उसकी नजर विवाह के समय खैंचे हुए डा० उदय और सरोज के फोटो पर पड़ी उस फोटो में एक चेहरा और भी दीख रहा था वह था रेणू का। अनीता सोचने लगी कि रेणू का फोटो विवाह में साथ खेंचने की क्या आवश्यकता पड़ी होगी? पर बात ऐसे थी कि जब फोटो खेंचा जा रहा था तो रेणू स्वयं बीच में घुस गई थी। किसी ने भी उस समय न रोका। न ही डा० उदय ने और न ही उसके मां-बाप ने। डा० उदय उसे रोकने की सामर्थ्य ही नहीं रखते थे। सरोज नव-वधू के नाते न बोल सकी थी तथा सरोज के मां-बाप सरल हृदय के

थे। जब अनीता ऊपर देख ही रही थी तो दरवाजे पर खड़ाक हुई। दरवाजा खुला डा० उदय और रेणू अन्दर चले आये "आज अजय कहाँ है ? उसका आज जन्म दिन है। क्या सभी भूल गये ?" कुर्सी में धंसते हुए डा: उदय ने सरोज की ओर देखकर कहा। अब सरोज ने डबडबाई आंखों से अपने पति की ओर देखा और फिर छत की ओर देखने लगी आज उसकी दृष्टि भी विवाह के समय खेंचे हुए फोटो पर पड़ गई थी कई विचार मन में आने लगे थे "बुखार का क्या हाल है। क्या नई दवाई से फर्क पड़ा ?" यह बात कहकर डा: उदय ने एक बार सरोज की ओर देखा। सरोज ने बात सुनी अनसुनी कर दी थी। रेणू को सामने देख सरोज का बुखार तेज होता जा रहा था। अब डा० उदय ने सरोज का माथा छूआ "बुखार तो अब भी तेज है।" यह बात कह कर डा० उदय पुन: कुर्सी में धंस गए। "आज मैं और रेणू यहीं रहेंगे" अब तीसरी बार डा० उदय ने जुबान खोली और सरोज की ओर से कोई उत्तर न मिला। वह इस जीवन से मृत्यु को अच्छा समझ रही थी। यदि कुछ संस्कार मां-बाप के न होते तो कब की आत्म हत्या कर चुकी होती पर आत्म हत्या को वह सबसे बड़ा अपराध समझती थी। अब अनीता ने सरोज से जाने की आज्ञा मांगी। आंखों ही आंखों में दोनों की कुछ बात हुई और अनीता डिबिया लेकर चल पड़ी।

शाम के पांच बज रहे थे। दिन ढल रहा था। अजय घर आया और आज वह भी डैडी से बिना बोले बीमार मां के साथ लिपट गया था। रेणू को घर में आया देख वह भी सहम गया था। कुछ उपहार जो डा० उदय अपने लड़के के जन्म दिन पर लाये थे वे टेबल पर एक लिफाफे में बंधे पड़े थे। "कुछ जन्मदिन के उपहार हैं अजय" डा० उदय ने कहा पर अजय ने भी अपने पिता की बात का कोई उत्तर न दिया। उसने एक बार रेणू की ओर देखा और

पुन: मां की ओर देखने लगा । शाम हुई अन्धेरा हुआ । रेणू ने भोजन तैयार किया । डा० उदय और रेणू ने भोजन किया । अजय आज भूखा ही अपनी मां के साथ सो गया था । उसे बहुतेरा कहा गया पर उसने आज भोजन करने से इन्कार कर दिया । सरोज का बुखार आज बढ़ गया था । रात को सरोज को दवाई पिलाई गई । सवेरा हुआ सभी जागे पर सरोज की आंखें आज न खुल सकी थीं । वह सदा सदा के लिए बन्द हो चुकी थीं । लगभग ग्यारह बजे सरोज का जनाजा निकला तो केवल अजय की चीखें ही सभी को सुनाई दे रही थीं ।

दिन बीतते चले गये । वर्ष बीता अब डा० उदय की दूसरी शादी हो रही थी रेणू से । अजय को आज सरोज की सहेली अनीता ले गई थी । अजय अब अपने पिता के साथ न रहना चाहता था । डा० उदय ने एक बार अनीता से कहा "क्यों न मैं अपने लड़के अजय को आपके पास ही छोड़ दूं । आप अध्यापिका हैं । साथ ही आप उसकी मां की सहेली भी हैं । आपकी देख रेख में यह पढ़ेगा और दो सौ रुपया महावार मैं आपको इसके सरंक्षण का दे दिया करूंगा साथ ही साथ आपका एहसान मुझ पर रहेगा" डा० उदय की बात सुनकर एक बार अनीता ने डा० उदय की ओर देखा और बोली "मैं इतनी गई गुजरी नहीं हूं डाक्टर साहिब जो अपनी सहेली के लड़के के पालन पोषण के पैसे लूंगी । मेरे भी बच्चे हैं डाक्टर साहिब । किसी को क्या खबर कि कल को क्या होगा ? आज हम किसी के बच्चे से प्यार करेंगे तो कल कोई हमारे बच्चों से भी प्यार करेगा" अब डा० उदय के पास अनीता की बातों का कोई उत्तर न था । अजय अब अनीता के पास रहने लगा । दिन बीतते गये । कभी कभार वह अपने पिता से मिलता । डा० उदय कुछ देना चाहते तो वह कोई बहाना लगाकर चला जाता । मानों

अपने पिता से भी उसे घृणा हो गई हो। अजय दसवीं की परीक्षा पास करके अब शिमला के राजकीय महाविद्यालय का विद्यार्थी बन चुका था। एक रात जब सभी सोये थे तो अनीता की नींद उखड़ गई। उसने सुना अजय को जो उसके पास ही सोया था चिल्लाया "मां! मां! ओ मम्मी" अनीता ने झट अजय को झंजोड़ा जगाया और पूछा "बेटा क्या हुआ?" अजय रोता हुआ बोला "सगी मां, आज मेरे जन्म दिन पर उपहार लेकर आई थी। वधाई दी और दूर चली गई। मेरी मम्मी। मेरे जन्म दिन पर उपहार लेकर आई थी मेरी मम्मी - ओ मम्मी।" अब अनीता ने अजय के आंसू पोंछे और दिलासा दिया। उसे अब उस डिबिया की याद आई जो सरोज ने मरने से एक दिन पूर्व उसे दी थी। उसे सरोज के वे शब्द भी याद आये कि जब उसका अजय दसवीं पास कर लेगा तो उस यह धरोहर दे देना।

अब उसने अजय को चुप कराया और सुला दिया, पर अजय से आज नींद कोसों दूर थी। अब अनीता की नींद भी उखड़ चुकी थी। वह सोचने लगी कि उसकी सहेली ने कोई कीमती वस्तु उस डिबिया में डाली होगी जो अजय की आगामी पढ़ाई में काम आ सकेगी। यह सोच कर उसने अजय की धरोहर सुबह अजय को दे देने का निश्चय कर लिया। अजय और अनीता की आंख लगी ही थी कि सवेरा हो गया। अजय महाविद्यालय जाने की तैयारी करने लगा और अनीता उसके लिए भोजन तैयार करने लगी। अजय भोजन करने बैठा तो अनीता अपने ट्रंक से डिबिया निकाल लाई जो उसकी मां ने अजय के लिए धरोहर रखी थी। जब अजय जाने को उद्यत हुआ तो अनीता ने उसे पास बुला कर टीन की डिबिया निकाली और उसे थमाते हुए कहा "बेटा यह तेरी धरोहर है। इसे एकान्त में खोलना। तेरी मां की मृत्यु से एक दिन पूर्व जब मैं

आपके घर गई थी तो तेरी मां ने मुझे दो थी। कहा था जब अजय दसवीं पास कर लेगा तो उसे दे देना" मां का नाम सुनते ही अजय बिलख उठा। रात के स्वप्न ने यह सिद्ध कर दिया था कि मां सचमुच उसके लिए उपहार लेकर आई थी। उसने डिबिया को छाती से लगाया, चूमा और एक बार डबडबाई आंखों से अनीता की ओर देखा और डिबिया लेकर चल दिया। आज अजय विद्यालय की ओर न जाकर सोलन की सड़क की ओर मुड़ रहा था। वह उदास था। कभी किसी यात्री से टकरा जाता तो कोई कहता "कितना पागल लड़का है ?" कभी किसी लड़की से टकरा जाता तो सुनता "घर में मां-बहन न होगी" अजय सब कुछ सुनता हुआ आगे बढ़ रहा था एकान्त की ओर। अब कुछ दूर चल कर एकान्त स्थान देखकर अजय बैठ गया। सुसकार भरी और रोने लगा। कुछ देर मन हल्का करके उसने डिबिया खोली तो उपर सोने की अंगूठी थी। अजय ने अंगूठी अंगुली में डाल ली। अंगूठी की ओर देखकर धीरे से फुसफुसाया "मां ! मम्मी ! अब अजय को कागज का पुर्जा खोलते ही मां का फोटो दीख पड़ा। अजय की चीख निकल गई "मेरी मम्मी ! मेरी मम्मी। जा यात्री सड़क पर जा रहे थे वे सब उसकी ओर देखने लगे पर अजय ने किसी की नहीं देखा। कुछ देर सुस्ताकर उसने अपनी मां का पत्र पढ़ा और उसका दिल धड़कने लगा। चेहरा एकदम रंग बदल चुका था। आंखें एकदम खुल चुकी थीं। कुछ देर उसन सोचा, खड़ा हुआ और चल दिया। अब वह सीधा मालरोड पर पहुंचा। एक सराफ की दुकान पर पहुंचकर उसने अंगूठी 1500 रुपये में बेच दी उसके उपरान्त वह फोटो स्टेट की दुकान पर गया मां के पत्र की तीन फोटो स्टेट कापियां करवाई। अब वह सीधा अनीता के घर की ओर बढ़ा। अनीता पाठशाला जा चुकी थी। अजय ने अनीता से

बिना मिले जाना उचित न समझा । आज सारा दिन अजय शिमला की सड़कों पर घूमता रहा । उसके मन में आज चैन न था । शाम के साढ़े चार बजे अजय पुन: अनीता के घर गया । सबने इक्ट्ठे मिलकर चाए पी । चाए-पान करने के उपरान्त अजय बोला "सगी मां ! आपके पास बहुत दिन काटे, कभी नहीं भूलूंगा, पर अब मैं आज जा रहा हूं । कब का जा चुका होता पर आपके प्यार का आशीर्वाद लेने हेतु इस समय तक रुका हूं । मेरी स्वर्गीय मां का आदेश मुझे मिल गया है । अब मुझे आप आज्ञा दें कि मैं अपनी मां के हृदय को स्वर्ग में ठण्डा कर सकूं, मेरी मां का हृदय जल रहा है । सगी मां ! मुझे शीघ्र आज्ञा दो ।" यह बात कहकर अजय उठ खड़ा हुआ । आज उसकी आंखों में चमक थी । चेहरा लाल था । अनीता कुछ भी न समझ सकी थी । अजय पर उस टीन की डिबिया में भरे जादू का असर हो चुका था । अब अनीता ने यह जान लिया था कि अजय अब अधिक देर नहीं ठहरेगा । वह झट अन्दर गई अपना पर्स खोला और एक सौ रुपये का नोट आगे बढ़ाती हुई बोली, "बेटा यह मेरी ओर से लेते जाओ आवश्यकता पड़ने पर काम आवेगा ।" अजय ने रुपये लेने से इन्कार कर दिया बोला "सगी मां ! आपने बहुत कुछ मुझे दिया है । अब आपको कुछ न लूंगा । मेरी मां की धरोहर मुझे मिल गई है मेरे लिए वह पर्याप्त है ।" अब अजय ने अनीता के पैर छुए और चल दिया । अनीता डबडबाई आंखों से अजय की ओर देखती रही ।

अजय सीधा मध्य प्रदेश पहुंचा । उसने समाचार पत्रों में डाकू हीरा सिंह का नाम पढ़ा था । अजय उसी डाकू की खोज में मध्य प्रदेश की ऊबड़ खाबड़ पगडंडियों में घूमने लगा । इसी प्रकार एक मास बीत गया था । एक दिन अजय भूखा ही [illegible] की पगडंडी पर जा रहा था । रात के [illegible] बज रहे थे । उसकी [illegible]

में एक डायरी थी। उसे वह बार २ बगल के नीचे दबा रहा था। अचानक एक जीप के आने की आवाज उसके कानों में पड़ी जो उसकी ओर बढ़ रही थी। वह ठिठक गया। थोड़ी देर उपरान्त जीप आकर उसके पास रुकी। दो विशालकाय व्यक्ति जीप से उतरे दोनों के हाथों में मशीनगनें थीं। एक ने पूछा "कहां जा रहे हो छोकरे?" अजय थोड़ी देर सहमा फिर बोला "मैं डाकू हीरा-सिंह के पास जा रहा हूं।" दूसरा व्यक्ति जो डाकू हीरा सिंह ही था झट बोला "क्या काम है, उनसे तुझे?"

मैं अपनी मां की हत्या का बदला लेना चाहता हूं और इस मामले में उनसे सहायता लेना चाहता हूं" अजय ने कहा। "तो क्या कुछ पढ़े लिखे भी हो" दूसरे व्यक्ति ने अजय का ओर देखकर कहा। "ग्यारह पढ़ा हूं" अब हीरा सिंह ने उसे जीप में बैठा लिया और जीप बीहड़ों की ओर बढ़ गई। वास्तव में हीरा सिंह भी पढ़े लिखे व्यक्ति की खोज में था। उनका एक पढ़ा लिखा युवक साथी जो उनके गिरोह में था वह पुलिस की मुठभेड़ में मारा गया था। अब हीरा सिंह ने अजय से उसकी मां की पूरी कहानी सुनी और बोला "बेटा! अभी एक वर्ष इन्तजार करना पड़ेगा। दूध का दूध पानी का पानी कर दूंगा। यह एक वर्ष का समय इसलिए दिया जा रहा है क्योंकि हमारा एक वर्ष का पूरा काम निर्धारित है।" एक वर्ष का समय सुन कर अजय का मन विचलित हो उठा पर डाकू हीरा सिंह के सामने कुछ शब्द कहने का उसमें साहस न था। दिन बीतने लगे। अजय से केवल लिखा पढ़ी का काम ही लिया जाता था। डाके डालने या भीषण कार्य पर उसे साथ न ले जाया जाता था। हीरासिंह जिस किसी को भी लूटता था उसके छः मास पूर्व पत्र लिखवा देता था।

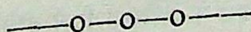
अब पत्र लिखने का काम अजय के सपुर्द था। अजय पत्र

लिखकर नीचे डाकू हीरासिंह की मुहर लगा देता था। इसी कार्य-क्रम के अधीन सात मास का समय बीत गया। अब अजय ने एक दिन डाकू हीरा सिंह को अपनी बात फिर जतलाई। अजय को तिथि निर्धारित करने और पत्र लिखने के आदेश मिल गये। अजय ने वही तिथि निर्धारित कर दी जिस तिथि को उसकी मां का देहान्त हुआ था। वह तिथि अजय के जन्मदिन के दूसरे दिन पड़ती थी। अब साथ ही अजय ने डाकू हीरा सिंह से दो हजार रुपया भी मांगा। पूछने पर उसने बताया कि यह रुपया उसने अपनी 'सगी-मां' अनीता को भेजना है। उसे तुरन्त ही दो हजार रुपया भी मिल गया था। अब उसने एक पत्र डा० उदय के नाम हीरा सिंह की ओर से लिखा और एक मनीआर्डर फार्म दो हजार रुपये का अनीता के नाम भर दिया। अपने गिरोह में से एक व्यक्ति को पत्र और मनीआर्डर फार्म तथा रुपये देकर डाकू हीरा सिंह ने नगर की ओर भेज दिया। पत्र रजिस्ट्री द्वारा भेजा गया। पत्र में केवल यही लिखा था "हम——दिनांक— को आ रहे हैं।" पत्र के नीचे डाकू हीरा सिंह की मुहर थी। डा० उदय पत्र का अर्थ न समझ सके, पत्र कई लोगों को दिखाया पर कोई पता न चल सका। अनीता के मनीआर्डर पर अजय का ही नाम था एडरैस नहीं था। अनीता भी हैरान थी कि अजय कहां होगा ?

डा० उदय को छः मास पूर्व आये हुए पत्र की याद भूल चुकी थी। वह एक शाम बैठकर अपने क्वाटर में चाए पी रहे थे रेणू भी साथ बैठी थी। किसी ने दरवाजा खटखटाया। दरवाजा खुलने पर एक स्त्री ने आकर कहा "बहन रेणू से मिलना चाहती हूं" रेणू झट उठ कर खड़ी हो गई और बोली 'आईए' एक बार उस अपरिचित स्त्री ने रेणू की ओर देखा और पुनः बोली, "बाहर आपके गांव से आपकी एक सहेली आई है। उसी ने मुझे अन्दर

भेजा है कि उन्हें बुलाकर लाओ। उसका पति भी उसके साथ है। दोनों जीप में बैठे हैं। उन्हें शीघ्रता है इसलिए उन्होंने आपको कष्ट दिया है।" यह बात कहकर वह स्त्री पुनः डा० उदय की ओर देखने लगी। रेणू ने अब झटपट अपनी चप्पल पहनी और उस स्त्री के साथ बाहर चली गई। जीप के पास जाकर खड़ी हो गई। जीप का दरवाजा खुला। रेणू जीप की खाली सीट पर बैठकर पीछे देखने लगी। पीछे केवल वही स्त्री बैठी थी जो रेणू को लाने गई थी। जीप चल दी सोलन की ओर और वापस नहीं आई। डा० उदय रेणू का इन्तजार करते रहे। रात के दस बज गये रेणू वापस न आई। पुलिस में रपट दी पर रेणू का कहीं पता न चला था।

घटना के दस वर्ष बाद डा० उदय ने लखनऊ के एक चौराहे पर उसे देखा था। वह आंखों से अन्धी थी। शरीर विकृत था। फटे पुराने कपड़ों में भिक्षा मांग रही थी।



"दायित्व"

वन विभाग के रैस्ट हाऊस का बूढ़ा चौकीदार लच्छमण अब रिटायर होने को था। उसकी नौकरी केवल एक वर्ष बाकी थी। उसने सारी आयु वन विभाग की चौकीदारी में ही काटी थी। उसने अपने जीवन में कई उतार चढ़ाव देखे थे। कई प्रकार के वन के अधिकारियों से उसका वासता पड़ा था। एक तो वह निस्सन्तान था, दूसरे जब से उसकी बीवी की मृत्यु हो गई थी तब से ही वह बड़ा उदास रहता था। आए दिन उसे कोई न कोई शिकारी मिल् ही जाता था। वह सभी शिकारियों को जीव हत्या न करने के उपदेश देता था और कहता "मेरी ओर देखो, न जाने कौन से पूर्व जन्म के पाप किए हैं जिनका फल भोग रहा हूं।" पर उस बूढ़े लच्छमन की कौन सुनता? आए दिन उस जंगल में उसे बन्दूकों की गूंज सुनाई देती तो उसका मन बिलख उठता, सोचता कि यह सभी शिकारी जंगल की सुन्दरता को खत्म करने पर क्यों तुले हैं। कभी वन के अधिकारियों से जंगल के पक्षियों को न मारने के सम्बन्ध में कानून बनाने की फरियाद करता, तो कभी अपने वेतन से खरीदे हुए अनाज को जंगल में बिखेर आता। गर्मियों की ऋतु में एक लोहे के कड़ाहे में पानी डाल कर घने जंगल के मध्य रख आता। इसी प्रकार उसके जीवन के अन्तिम दिन बीत रहे थे। वन विभाग का वह रैस्ट हाऊस वन के एक किनारे पर था। कभी कोई शिकारियों की टोली आकर उस रैस्ट हाऊस में ठहरती तो लच्छमन का मन बड़ा दु:खी होता। जब किसी मरे हुए पक्षी के पंख वह बिखरे हुए देखता तो उसका मन बिलख उठता। बसन्त ऋतु में कोयल की कूक को सुनने के लिए वह सुबह जंगल में दूर निकल जाता। सुबह सवेरे जब मुर्गा आवाज लगाता तो लच्छमन का दिल बाग बाग हो

जाता। वर्षा ऋतु में तो मोर की आवाज सुनकर वह सभी दुःखों को भूल कर नाचने ही लग पड़ता। जंगली पक्षियों के पंखों की सुन्दरता को वह घन्टों देखता। जब कभी गोली की गूंज से सभी जंगल के पक्षी भयभीत होकर चीख उठते तो उसे ऐसा लगता कि वे सभी उसके आगे फरियाद कर रहे हों।

आज मार्च मास की पांच तारीख थी। लच्छमन को वेतन मिला। उसने बाजार जाकर अपने खाने पीने का सामान खरीदा और साथ ही जंगल के पक्षियों के लिए दो सेर चावल भी खरीद कर जुदा बांध लिया और रैस्ट हाऊस की ओर बढ़ता चला आया। उसने रैस्ट हाऊस में आकर उन चावलों को अच्छी तरह साफ किया। भोजन करने के उपरान्त कुछ चावल गठड़ी में बांध कर जंगल की ओर चला गया। मोर की कूक आवाज से सारा जंगल गूंज रहा था। वन की डाली डाली पर बहार थी। वृक्षों पर नई कोपलें निकल आई थीं। मानों वह सारा वन प्रदेश आज नये वस्त्र पहने लच्छमन का स्वागत करने को खड़ा हो। हरे लाल और पीले रंगो के फूल डालियों पर झूम रहे थे। ज्यों ज्यों लच्छमन जंगल के मध्य की ओर बढ़ता त्यों त्यों पक्षियों के चहचहाने की आवाज भी बढ़ती जाती। उसे ऐसा लग रहा था मानों जंगल के सारे पक्षी उसे अपनी बोली में कुछ कह रहे हों। अब लच्छमन ठीक जंगल के मध्य पहुंचा। वह एक झाड़ू रैस्ट हाऊस से ही ले गया था। उसने एक स्थान को दाने विखेरने के लिए उचित समझा। वहां झाड़ू लगाया और दोनों की गठड़ी खोलकर वहां दाने बिखेर दिये। कुछ क्षण वह वहां रुका और चला आया। उसने देखा कि कुछ पक्षी जिन्होंने उसे जंगल की ओर आते हुए देखा था उसी ओर उड़े आ रहे थे। लच्छमन भी उनके लिए ही तो दाने बिखेर कर आया था। लच्छमन रैस्ट हाऊस के उस कमरे में पहुंचकर

जिसमें वह छः वर्षों से रह रहा था विश्राम करने के लिए लेट हो गया। उसकी अभी आंख लगी ही थी कि बन्दूक की गोली की आवाज से सारा वन प्रदेश गूंज उठा । पक्षियों के विलाप की आवाज ! चीखें, पुकार और फड़फड़ाहट उसके हृदय को चीरती निकल गई। वह झट अपनी चारपाई पर उठकर बैठ गया। उसने अपने कमरे से बाहर आकर देखा तो पक्षी इधर उधर आकाश पर उड़ते जा रहे थे। अब उसने उस स्थान की ओर दृष्टि दौड़ाई जहां वह दाने बिखेरकर आया था तो उसे उस स्थान से कुछ धुआं उठता हुआ दिखाई दिया। वह झट समझ गया किसी शिकारी ने उसके द्वारा बिखेरे हुए दानों के स्थान पर दाने खाते हुए पक्षियों पर गोली दाग दी है। उसका मन धक धक करने लगा। वह बिना जूता पहने ही उस स्थान की ओर तेजी से बढ़ा। उसे अब कांटों की परवाह नहीं थी। वह सोच रहा था कि उसके द्वारा उस जंगल में बिखेरे हुए दाने ही कहीं किसी पक्षी की हत्या का कारण न बने हों। पक्षियों के पोषण की बजाए उसके द्वारा पक्षियों का शोषण ही न गया हो।

इसी बात को सोचते सोचते वह उस स्थान पर पहुंचा जहां वह कुछ देर पहले पक्षियों के लिए दाने बिखेर कर आया था। जब वह उस स्थान पर पहुंचा तो वहां के दृश्य को देख कर उसका मन बिलख उठा क्योंकि हुआ वही था जिसका उसको डर था। जिस बात की उसको आशंका थी। दानों के स्थान पर एक मोरनी के पंख बिखरे हुए पड़े थे। पंखों के पास धरती पर कुछ खून के धब्बे भी थे। वह कुछ क्षण स्तब्ध सा वहां खड़ा रहा। अब उसने इधर उधर देखा तो मोरनी के दो छोटे छोटे बच्चे उसे झाड़ी से झांक कर देख रहे थे। ज्योंहि लच्छमन की आंखें उस मोरनी के बच्चों से मिलीं तो उसे ऐसा लगा मानों वह उससे कुछ फरियाद कर रहे

हों। अब लच्छमन उन बच्चों की ओर बढ़ा। बच्चे उससे डरकर एक झाड़ी में छुपकर बैठ गए। उसने उन दोनों बच्चों को उठाया और अपनी गोदी में डालकर अपने को कोसता हुआ बिलखते हृदय से रैस्ट हाऊस की ओर बढ़ने लगा। वह मोरनी के बच्चे उसकी गोदी में उछल रहे थे। उन्हें अब मानव जाति से घृणा तथा भय हो गया था। लच्छमन उन्हें अब स्वतन्त्र उस जंगल में अकेला नहीं छोड़ना चाहता था। उसे भय था कि जंगल का कोई हिंसक पशु या पक्षी उन नन्हें नन्हें बच्चों को खा न जाए। इसी कारण वह उन्हें अपने साथ ले जा रहा था। अब उसने मोरनी के बच्चों को एक टोकरे के नीचे ढाँप दिया था। स्वयं उसने उन बच्चों के लिए रैस्ट हाऊस के बांस गाढ़ कर छोटा सा झोंपड़ा बना दिया। अब उसने उन बच्चों को टोकरे के नीचे से निकाल कर पानी पिलाया। रोटी के कुछ टुकड़े उनके मुंह में दिये। बच्चे अब कातर दृष्टि से लच्छमन की ओर देखने लगे। अब उन मोरनी के बच्चों के पालन पोषण का भार लच्छमन पर आ पड़ा था। उन मोरनी के बच्चों की देखरेख अब उसकी प्रतिदिन की क्रिया थी। रात को वह उन बच्चों को टोकरे के नीचे ढांप देता और दिन को झोंपड़े के अन्दर छोड़ देता। वह मोरनी के बच्चे अब लच्छमन की देखरेख में बढ़ने लगे थे। उनके अब पंख निकलने लगे थे। पंखों से लच्छमन ने उन मोरनी के बच्चों को पहचान लिया था। उनमें से एक मोर था और एक मोरनी। वह मोरनी के दोनों बच्चे अब रैस्ट हाऊस की शोभा बनते जा रहे थे। ज्यों-ज्यों वह बड़े होते जा रहे थे त्यों-त्यों लच्छमन के चेहरे पर रौनक छाती चली जा रही थी। वह अब उन बच्चों को छोड़ कर कहीं न जाता। उनसे ही अपना मन बहलाता। कई लोगों ने उन बच्चों को खरीदने की पेशकश की थी पर लच्छमन ने किसी की न मानी थी। अब बच्चे बढ़कर पूरे

जवान हो गये थे। वर्षा ऋतु में मेघों को देखकर जब वह बोलते तो पूरा रैस्ट हाऊस गूंज उठता ऐसा लगता मानों वह मोरनी के बच्चे उस रैस्ट हाऊस के मालिक हों। मोर जब अपने पंख फैला कर नाचता तो लच्छमन का मन फूला न समाता। उसे जंगल में दाने बिखेरने की वह घटना अब धीरे धीरे भूलती जा रही थी। उसके बुझे हुए मन का सहारा अब वह दो मोरनी के बच्चे ही थे। उसने यह सोच रखा था कि सेवा निवृत्ति के उपरान्त वह ऊन दोनों बच्चों को अपने घर ले जावेगा और अपने बुढ़ापे के दिन उनकी सेवा करके ही काटेगा व जंगल में बिखेरने का पाप धुल जावेगा। इसी प्रकार बूढ़े लच्छमन के दिन बीतने लगे।

एक शाम को जब वह बाहर बैठा हुआ उन मोरनी के बच्चों को देख रहा था तो वन के गार्ड ने उसे आकर कहा, "लच्छमन, यहां कल रैस्ट हाऊस में वन के बड़े अधिकारी आ रहे हैं। उनके साथ उनकी बीवी तथा बच्चे भी होंगे। रैस्ट हाऊस की सफाई ठीक ढंग से कर लेना दूसरे अब तेरी रिटाईरमैंट समीप है। साहब की सेवा ठीक ढंग से करना जिससे साहब तेरे पर खुश होकर तेरे पैंन्शन के कागज शीघ्र बनवा दें नहीं तो पैंन्शन के कागज वर्षों लटके रहते हैं। यदि साहब खुश हो जावेगा तो तेरे पैंन्शन के कागजात शीघ्र बन जावेंगे। दूसरे यह बड़े आदमी हुआ करते हैं लच्छमन! शायद तेरे बुढ़ापे पर तरस खाकर तुझे कोई इनाम भी दे जावें।" यह कह कर वन का गार्ड रैस्ट हाऊस की ओर बढ़ा और बोला "अरे लच्छमन, जरा कमरे को तो खोल, हम भी देख लें, और रैस्ट हाऊस के अन्दर यदि किसी चीज की कमी हो तो पूरा करवा दें।" अब लच्छमन ने आगे बढ़कर रैस्ट हाऊस के कमरे को खोला। गार्ड ने इधर उधर देखकर कहा "अरे! यह तो ऐसा लग रहा है कि कई महीनों से इन कमरों में झाड़ू भी

नहीं दिया गया। कमरों को अच्छी प्रकार से साफ कर यह बात कहकर गार्ड ने लच्छमन सिंह की ओर देखा, " यह सब आज ही अभी ठीक हो जावेगा हजूर। आप फिकर न करें। पर साहब से मेरे बारे में आपने ही बात करनी है। हम चौकीदार, चपड़ासी बड़े लोगों से क्या बात कर सकते हैं" ? यह बात कहकर लच्छमन ने वहां पड़ा झाड़ू उठाया और कमरे की सफाई करने लगा। अब गार्ड पुनः मुड़कर आया और बोला, "लच्छमन यह तेरे मोरनी के बच्चे भी तेरे जाने के उपरान्त रैस्ट हाऊस में तेरी एक याद ही रह जायेगी" यह बात सुनकर लच्छमन गार्ड की ओर देखकर बोला, "ऐसा नहीं होगा महाराज ! इन मोरनी के बच्चों को मैं अपने साथ ही ले जाऊंगा। मेरे वुढ़ापे में केवल यही तो मेरा एक सहारा और दिल बहलावा होगा। ये मोरनी के बच्चे मेरे बगैर अकेले नहीं रह सकेंगे और न ही मैं इनके बगैर रह सकता हूं" अब गार्ड को अधिकारी महोदय का बाकी इन्तजाम करने को देर हो रही थी। इसलिए वह शीघ्रता में होने के कारण लच्छमन को कुछ आवश्यक बातें समझाकर चला गया। अब लच्छमन रैस्ट हाऊस में अकेला था। गार्ड की इस बात को सुनकर कि मोरनी के बच्चे उसकी रिटाईरमैंट के उपरान्त रैस्ट हाऊस में ही रहेंगे वह मन में सोच रहा था कि ये वन के अधिकारी उसके द्वारा पाले हुए उन बच्चों को उसे वहां छोड़ने पर कैसे वाध्य कर सकेंगे ? उसके मन में अब कई प्रकार के भाव जागने लगे। वह बड़बड़ाया, "ऐसा कभी नहीं हो सकेगा। यदि ये अधिकारी ऐसा करना चाहेंगे तो मैं पक्षियों को पुनः जंगल में छोड़ दूंगा" यह बात सोचकर उसने पुनः झाड़ू देना आरम्भ कर दिया। यह दिन लच्छमन का उधेड़-बुन में ही बीता। रात को उसे आज बहुत देर तक नींद न आई थी। रात जब भी उसकी आंख खुलती तो वह जाकर उस झौंपड़े की ओर देखता

जहां पक्षी रात को आराम करते थे। न जाने आज उसके मन में उन पक्षियों के प्रति क्यों आशंका हो उठी थी।

दूसरे दिन पौ फटी सवेरा हुआ तो लच्छमन ने उन पक्षियों को झौंपड़े से बाहर निकाला पानी पिलाया। कुछ दाने उनके खाने के लिए झौंपड़े के बाहर बिखेर दिये। वह दोनों मोर के बच्चे उन दानों को एक एक करके खा गए। लच्छमन उनको देखकर बड़ा प्रसन्न हो रहा था।। वह अब दोनों मोर के बच्चे नित्य की भान्ति रैस्ट हाऊस के किनारे उगे एक चीड़ के वृक्ष पर बैठ गए और आपस में गुटर गुटर करके कुछ बातें करने लगे। लच्छमन बड़ी देर तक उन्हें देखता रहा। उसने उन मोर के बच्चों के कार्य से निवृत होकर अपना भोजन तैयार किया। भोजन करने के उपरान्त ज्यों ही वह अपने कमरे से बाहर निकला त्यों ही उसने देखा कि वन के कुछ अधिकारी रैस्ट हाऊस की ओर बढ़ते चले आ रहे हैं। अब एक अधिकारी ने आवाज दी "अरे लच्छमन! जरा जल्दी आओ और कुछ कुर्सियां बाहर निकालकर रख दो। साथ में एक दरी भी बिछाओ" अब लच्छमन झट रस्ट हाऊस के कमरे में गया और एक दरी निकाल कर उसने रैस्ट हाऊस के प्रांगण की हरी दूव पर विछा दी। अब उसने कुछ कुर्सियां निकालीं और दरी के एक किनारे पर रखीं तथा एक मेज लाकर कर्सियों के आगे रख दिया। एक फूलों से भरा गुलदस्ता जो उसने सुबह से सजाकर रखा था मेज पर रखकर बोल। 'लीजिए, साहिब! अब और क्या करना है मुझे?" अब सभी अधिकारी उससे बात किए बिना रैस्ट हाऊस के अन्दर गए। अन्दर कमरे में उन्होंने वन के बड़े अधिकारी के ठहरने का प्रबन्ध देखा।

शाम के चार बज रहे थे। एक जीप सीधी रैस्ट हाऊस के आंगन में आकर रुकी। उस जीप से वन के अधिकारी और उनकी

पत्नी तथा एक छोटी लड़की जिसकी आयु केवल दो वर्ष की थी उतरे। वन के अधिकारी महोदय की लड़की को उनके बारह वर्षीय नौकर ने गोदी में उठाया हुआ था। अब सबने उनका अभिवादन तथा सत्कार किया। बूढ़े लच्छमन ने भी वन के अधिकारी महोदय का अभिवादन किया। अब वन के अधिकारी महोदय, उनकी पत्नी तथा लड़की वहां रखी कुर्सियों पर बैठ गये। वन के अधिकारी महोदय ने वन से सम्बन्धित कुछ बातें उन वन के अधिकारियों से करनी शुरू कर दीं। सूर्यदेव अस्ताचल की ओर प्रस्थान कर रहे थे। अब सूर्य की अन्तिम किरणें उस वट वृक्ष की नई नई कोपलों को स्वर्णमयी किये जा रही थी जो उस रैस्ट हाऊस के प्रांगण के एक किनारे पर कई वर्षों से खड़ा था। अब अचानक ही मोर की आवाज से सारा रैस्ट हाऊस गूंज उठा। मोरनी के बच्चों की आवाज को गूंजते देख वन के अधिकारी महोदय बोले "कितनी मीठी आवाज है ? ऐसा लग रहा मानों सारा रैस्ट हाऊस मोरों से भरा पड़ा हो।" तब वन का एक अधिकारी बोला "सरकार ! आपके इस रैस्ट हाऊस का बूढ़ा चौकीदार लच्छमन पक्षियों से बड़ा प्यार करता है। जब से उसने इस रैस्ट हाऊस में मोरनी के बच्चे पाल रखे हैं तब से इस रैस्ट हाऊस की शोभा बढ़ गई है।" वन के उच्च अधिकारी ने तब इधर उधर देखा मानों वह मोर के बच्चों को देखना चाहता हो। तब एक मोर की ओर एक अधिकारी ने इशारा करके कहा "वह देखिए सरकार मोरनी के बच्चे उस चीड़ के वृक्ष पर बैठे कितने सुन्दर लग रहे हैं।" जब वन के उच्च अधिकारी की दृष्टि उस चीड़ के वृक्ष पर बैठे मोर के बच्चों पर पड़ी तो उसका मन उन मोर के बच्चों को देखने से प्रसन्न हो उठा। उसकी पत्नी तो उनको पकड़ने के लिये ललचा उठी। वन के अधिकारी महोदय की पत्नी अब वहां से उठी और उस चीड़ के

वृक्ष के नीचे चली गई जिसके उपर वह मोर के बच्चे बैठे हुए थे। साथ में उनका नौकर भी उनकी छोटी लड़की को लेकर वहां पहुंच गया। अब मोर के वह दोनों बच्चे पुनः बोलने लगे। उनकी आवाज को सुन कर वन अधिकारी महोदय की छोटी लड़की तो ख़ुशी से किलकारियाँ मारने लगी। वन के उच्च अधिकारी महोदय की पत्नी उन बच्चों की ओर बढ़ी, देर तक देखती रही। अब कुछ कुछ अन्धेरा हो रहा था। लच्छमन अब अपने कमरे से बाहर निकला और ज्योंहि उसने झोंपड़े का दरवाजा खोला त्योंहि वह मोर के बच्चे उड़कर झोंपड़े के अन्दर आ गए। लच्छमन ने मोरनी के बच्चों का झोंपड़े का दरवाजा बन्द कर दिया और अपने काम में व्यस्त हो गया। अब वन के उच्च अधिकारी महोदय की पत्नी आकर कुर्सी पर बैठ गई और बोली "कितने सुन्दर हैं यह वन के पक्षी ! इनको छोड़कर जाने को मन नहीं करता। जी चाहता है इनको साथ ही ले जायें पर पता नहीं यह चपड़ासी माने या इंकार करदे। मोर की आवाज सुनकर छोटी बिटिया तो उछलने ही लग पड़ी थी।" यह बात कह कर वन के उच्च अधिकारी महोदय की पत्नी ने अपने पति की ओर देखा मानों वह इन मोर के बच्चों को किसी भी कीमत पर खरीद कर ले जाने के लिए कह रही हो। वन के उच्च अधिकारी की पत्नी की इस बात को सुनकर वन का एक अधिकारी बोला "सरकार ! वैसे तो लच्छमन को इन मोर के बच्चों को खरीदने के लिए कई लोगों ने पेशकश की थी पर वह नहीं माना था। परन्तु आपकी बात को वह भला कैसे टाल सकेगा।" यह बात कह कर वन के अधिकारी ने आवाज दी "लच्छमन ! अरे लच्छमन ! साहब बुला रहे हैं।" अब लच्छमन दौड़कर उस स्थान पर पहुंचा जहां वन के बड़े अधिकारी बैठे थे। उसने सोचा कि वन के अधिकारी ने उसकी पैंन्शन के कागजात के

लिए बात की होगी पर यहां तो कुछ और ही बात थी। उसे देख कर वन के बड़े अधिकारी ने कहा, "लच्छमन! इन मोर के बच्चों का क्या दाम लोगे?" वन के बड़े अधिकारी की यह बात सुन कर लच्छमन का चेहरा एकदम फीका पड़ गया काटो तो लहू नहीं। उसने सोचा था कि वन के उच्च अधिकारी आवेंगे तो उसे कुछ इनाम देंगे उनसे अपनी पैन्शन के बारे फरियाद करूंगा पर मोर के बच्चों के दाम की बात सुन कर उसका मन बिलख उठा। वह समझता था कि मोर के बच्चों का पालन का दायित्व उसी पर है। कुछ देर चुप रहकर बोला "सरकार! मैंने यह मोर के बच्चे बेचने के लिए नहीं पाले थे। इन बच्चों के पालन पोषण का दायित्व मेरे पर आ पड़ा था। जिसको मैंने निभाया है और निभाता रहूंगा।" यह बात कह कर बूढ़े लच्छमन ने वन के उच्च अधिकारी की ओर सहमी हुई नजर से देखा मानों उसने कोई उनका भारी अपराध किया हो। अब लच्छमन की यह बात सुन कर वन के एक अधिकारी बोले "अरे लच्छमन! बड़े अधिकारियों की बात को इस प्रकार नहीं टाला जाता। मोर के बच्चों की बात तो मामूली बात है। पक्षियों से इतना मोह नहीं करना चाहिए बाकी रही दायित्व की बात सो मनुष्यों पर पक्षियों का दायित्व कैसा? जब बड़े अधिकारी इनको लेना ही चाहते हैं तो आपको जिद नहीं करनी चाहिए। आखिर ये भी वन के अधिकारी हैं। इनका भी इन पक्षियों पर कुछ अधिकार है।" यह बात कहकर वन के अधिकारी ने लच्छमन की ओर देखा। लच्छमन अब चुप खड़ा था मानों उसके शब्द कोश में वन के उच्च अधिकारी के सामने बोलने के लिए कोई शब्द ही न हो। अब एक और वन का अधिकारी बोला "लच्छमन यदि तू यह बात मान जावेगा तो तेरी पैन्शन के कागज शीघ्र तैयार हो जावेंगे दूसरे साहब से मुंह मांगा इनाम पायेगा।" अब लच्छमन ने

एक बार साहब की ओर देखा और बिना बात किये वहां से आकर अपने काम व्यस्त हो गया। वह पक्षियों के बारे अब बात न करना चाहता था। अब रात हो रही थी सबने भोजन किया और सो गए पर लच्छमन से आज नींद कोसों दूर थी। उसके मस्तिष्क के सामने वह जंगल में दाने बिखेरने का दृश्य, उस दिन की बन्दूक की गोली की गूंज, उन छोटे छोटे बच्चों को गोद में उठा कर लाने और उनके लिए अलग झोंपड़ा बनाने की बातें सब एकदम घूमने लगीं।

सुबह हुई सूर्यदेव की चढ़ती किरणें रैस्ट हाऊस के किनारे उगे उस चीड़ के वृक्ष के पत्तों से छन कर मोर के बच्चों के झौंपड़े पर अपना प्रकाश बिखेरने लगीं। झौंपड़े का दरबाजा आज न खुला था। वन के एक अधिकारी वहां आये लच्छमन को आवाज दी पर लच्छमन वहां नहीं था। अब बड़े साहब उसी समय वहां से जाने की तैयारी करने लगे। वन के एक अधिकारी ने मोर के बच्चों को पकड़कर उनकी टांगों को एक रस्सी से बांध दिया। मोर के बच्चे फड़फड़ाने और चीखने लगे। अब एक अधिकारी लच्छमन के कमरे के अन्दर गया और वह टोकरा ले आया जिस के अन्दर कुछ समय पहले लच्छमन उन बच्चों को ढांप कर रखता था। उन दानों मोर के बच्चों को उस टोकरी में डालकर जीप के अन्दर रख दिया गया। बच्चे चीखे और जीप चल दी।

उस दिन उस रैस्ट हाऊस में उन मोर के बच्चों की गूंज न सुनाई दी। उनके झौंपड़े का दरबाजा खुला पड़ा था। ठीक पांच वर्ष उपरान्त संध्या के समय वन के उस उच्च अधिकारी की कोठी की बगल में एक बूढ़ा व्यक्ति गया। उन मोर के बच्चों के कटहरे का ताला उसने खोला और अपनी मुट्ठी में लिए हुए अनाज के कुछ दानें उन मोर के बच्चों के आगे बिखेर दिये। एक एक पक्षी को

उठाकर प्यार किया और उस कटहरे का दरवाजा खोल दिया जिसमें वह पक्षी पांच वर्ष से कैद थे। अब दोनों पक्षी उड़कर उसके दोनों कंधों पर बैठ गए। वह उन दोनों को लेकर उस स्थान की ओर तेजी से बढ़ा जहां से उनको उठाकर वह ले आया था। उसे रास्ते में कुछ व्यक्तियों ने पहचान कर पूछा "लच्छमन इन पक्षियों को लेकर कहां जा रहे हो"। तो उसने उत्तर दिया "पक्षियों के प्रति अपने दायित्व को निभा रहा हूं" दूसरे दिन वन के उच्च अधिकारी ने देखा तो पक्षियों का कटहरा खुला पड़ा था। पक्षी वहां पर नहीं थे।



"वसीयत नामा"

वर्षा ऋतु के अवकाशों के कारण दो मास के लिए शिक्षा संस्थान बन्द हुए तो लक्खू ने एक दीर्घ निश्वास छोड़ा और घर जाने की सोची। शिक्षा विभाग में लक्खू आज से लगभग 25 वर्ष से काम कर रहा था। था तो वह अनपढ़ पर शिक्षा विभाग में एक चपड़ासी होने के नाते किसी अध्यापक ने उस पर तरस खाकर उसे हस्ताक्षर करना सिखा दिये थे। लक्खू की पत्नी तो विवाह के दो वर्ष बाद ही लक्खू के एक लड़के दीनू को जन्म देकर स्वर्ग सिधार चुकी थी। लक्खू के लिए अब दीनू ही सब कुछ था। उसका पालन पाषण उसने बड़े लाड प्यार से किया था। लक्खू के मन में बड़ा चाव था कि दीनू भी पढ़ लिख कर एक अध्यापक बन कर कुर्सी पर बैठे, पर विधाता की बिडम्बना। लक्खू के भाग्य में अपने लड़के का भी सुख नहीं लिखा था। दीनू आठवीं पास नहीं कर सका। लक्खू ने दीनू की आठवीं की परीक्षा तीन बार दिलवाई पर दीनू सफलता न प्राप्त कर सका था। गांव के कुछ छोकरों ने दीनू को सिगरेट आदि पीना सिखला दिया था। लक्खू दीनू के लिए जो पैसे देता दीनू सिगरेट आदि पीकर खर्च कर देता। जब दीनू बड़ा हुआ तो लक्खू को उसके विवाह की चिन्ता हुई। दीनू गांव में आने वाले ट्रकों के ड्राईवरों के साथ चला जाता और घर से कई दिन गायब रहता। एक बार जब लक्खू घर आया तो दीनू घर पर नहीं था। लक्खू को बड़े दिनों की छुट्टियां थीं। उसने घर आकर पड़ोसियों से पूछा तो पता चला कि दीनू गांव में आने वाले ट्रक ड्राईवरों के साथ चला जाता है और कई कई दिन नहीं आता। अब दीनू को शराब पीने की आदत भी पड़ चुकी थी।

लक्खू ने शराब तो क्या सिगरेट तक नहीं पी थी। वह अपनी चिलम साथ रखता और जब जी करता उसमें तम्बाकू भरकर पी लेता। जब कोई अध्यापक उसे सिगरेट पीने को दे देता तो लक्खू बड़े अजीब ढंग से सिगरेट पकड़ता और पीता। लक्खू अपने पड़ौसियों से दीनू का इस तरह आवारा हो जाना सुनकर बड़ा उदास हुआ। वह ज्योंहि कमरे का दरवाजा खोलने के लिए आगे बढ़ा तो उसे अपने घर की ओर तीन चार व्यक्ति आते हुए दिखाई दिये। उनमें एक दीनू भी था। दीनू ने लक्खू के पैर छुए और लड़खड़ाती जुबान में बोला "अब्बा! आप कब आए?" यह वाक्य कहकर दीनू बाहर आंगन में रखी चारपाई पर लेट गया। "तुम कहां थे बेटा?" लक्खू ने दरवाजा खोलते हुए दीनू की ओर देख कर कहा। "कहीं नहीं अब्बा! आपको यह जानकर खुशी होगी कि मैं ट्रक का कंडक्टर बन गया हूं। ट्रक के मालिक ने पहली तारीख से काम पर हाजिर होने को कहा है। अब आप नौकरी छोड़ दो आप बूढ़े हो चुके हो, अब्बा।" यह बात कहकर दीनू उठकर बैठ गया। अब दीनू के साथ जो तीन व्यक्ति और आए थे उनमें से एक बोला "बापू अब आप फिकर मत करो दीनू अब खूब रुपये कमायेगा। अब आप दीनू के विवाह की चिन्ता करो ताकि रोटी पकी पकाई मिल सके।" दीनू के विवाह की बात सुनकर लक्खू की वांछें खिल गईं। बुढ़ापे में भी उसके चेहरे पर रौनक दीखने लगी, बोला "बेटा! बस अब यही चिन्ता है कि इसका विवाह शीघ्र कर दें क्योंकि नौकरी थोड़ी है। जीवन का कोई भरोसा नहीं। दीनू की मां तो जवानी में ही चल बसी थी। पता नहीं उस समय मेरी जान कहां अटक गई। दीनू के पालन पोषण के लिए ही जीवित हूं, बेटा?" यह बात कहकर लक्खू कमरे के अन्दर गया। अब कुछ कुछ अन्धेरा हो रहा था। दीनू और उसके तीनों मित्र ट्रक का

ड्राईवर और कंडक्टर शराब के नशे में धुत थे। "दीपक कहां है बेटा ?" लक्खू ने अन्दर से आवाज दी। अब दीनू लड़खड़ाते पांवों उठा और कमरे की ओर बढ़ा। पहले तो वह दरवाजे से टकराया और फिर कमरे में पड़ी चारपाई से टकराकर बोला "दीपक क्या करना है अब्बा ? हमने खाना खा लिया है आपने अगर खाना खाना हो तो मैं पका पकाया ले आता हूं।" लक्खू ने हैरान होकर दीनू की ओर देखा और बोला "कहां से लाओगे तुम ?" "यहीं 'शीला के घर से" शीला का नाम सुन कर लक्खू बौखला उठा। शीला उस गांव की एक विधवा स्त्री थी। लक्खू की स्त्री के मरने के उपरांत शीला ने लक्खू से स्वयं विवाह करने की पेशकश की थी। पर लक्खू नहीं माना था। शीला भी उस समय विधवा थी और लक्खू की आयु से उससे पांच वर्ष अधिक थी। जाति दोनों की एक थी। लक्खू भी जाति का कुम्हार और शीला भी जाति की कुम्हार थी। लक्खू ने शीला की बात न मानी थी। शीला की एक लड़की थी और लक्खू का एक लड़का। गांव वालों ने भी लक्खू को दूसरा विवाह करने को कहा था पर लक्खू न माना था। अब शीला की लड़की यौवन सम्पन्न थी। "शीला क्या लगती है तेरी?" लक्खू ने दीनू के पास आकर कहा। "अभी तक तो कुछ नहीं लगती अब्बा" दीनू ने लड़खड़ाती आवाज से कहा। "फिर क्या लगेगी ? हरामजादा कहीं का।" लक्खू ने आज दिन तक दीनू को गाली न निकाली थी पर शीला के नाम से ही उसे घृणा थी न जाने क्यों ? अब लक्खू कुछ क्षण के लिए चुप हो गया उसने अपने थैले से दियासिलाई की डिबिया निकाली और दीपक ढूंढने लगा। दीपक ढूंडकर उसने दीपक जलाया। अब दीनू बाहर आकर अपने साथियों के पास चारपाई पर आकर बैठ चुका था। "दीनू की बात मान क्यों नहीं लेते बापू ?" दीनू के एक मित्र ने लक्खू के पास

आकर कहा। "क्या बात है दीनू की ?" लक्खू ने उस ट्रक कंडक्टर की ओर देखते हुए पूछा। "यही कि इसकी शादी शीला की लड़की सुच्ची से कर दो बापू! बड़ी सुन्दर जोड़ी है" अभी ट्रक कंडक्टर ने अपना वाक्य पूरा भी नहीं किया था कि लक्खू बोल उठा "यह कभी नहीं होगा! ऐसी बदमाश औरत की लड़की से दीनू की शादी कभी नहीं होगी।" "मान जाओ अब्बा इसी में भलाई है नहीं तो कुछ और गुल न खिल जावे" ट्रक ड्राईवर ने लक्खू की ओर देखकर कहा "और गुल क्या खिल सकता है, हम कोई भूखे नंगे हैं जो दीनू की शादी और कहीं नहीं कर सकते" लक्खू ने कंडक्टर की ओर देखकर कहा। "यह बात नहीं है बापू! बात कुछ और है दीनू कहता था कि यदि बापू शादी सुच्ची से न करवायगे तो दोबारा घर नहीं आऊंगा" ट्रक कंडक्टर की यह बात सुनकर लक्खू के पांवों तले की भूमि खिसक गई। एक ही तो बेटा था। यदि घर से भाग जायेगा तो लक्खू क्या करेगा। लक्खू ने तब दीनू की शादी शीला की लड़की से कर देने की हाँ कर दी। बस फिर क्या था। दीनू झट गया और शीला के घर से अपने बापू के लिए रोटियां ले आया। साथ शीला को उसने सारी बात से अवगत करवा दिया। शीला भी आज बड़ी प्रसन्न थी। अब क्या था। दूसरे ही दिन दीनू और सुच्ची के विवाह की तिथि भी निश्चित करवा दी गई थी। कुछ मास उपरान्त दीनू का विवाह सुच्ची से हो गया था। दीनू अब ट्रक का ड्राईवर बन चुका था। विवाह के तीन वर्ष बाद सुच्ची की गोद हरी हुई थी। सुच्ची ने एक लड़के को जन्म दिया था। सुच्ची का छोटा मुन्ना जगतू जब एक वर्ष का हुआ था तो दीनू ने उसके पहले जन्मदिन पर अपने सारे मित्रों को बुलाकर सहभोज करवाया था। लक्खू उस दिन फूला नहीं समा रहा था। दीनू उस दिन शराब की कई बोतलें

लाया था। लक्खू को भी उस दिन शराब पिला दी गई थी। सुच्ची के मुन्ने का जन्म दिन बड़ी धूमधाम से मनाया गया था। दूसरे दिन दीनू अपनी नौकरी के लिए पटियाला (पंजाब) चला गया था और लक्खू हमीरपुर (हि०प्र०)। दीनू के जाने के दो दिन उपरान्त सुच्ची का एक तार आया था लिखा था "दीनू का एक ट्रक से ऐक्सीडैंट हो गया है" तार को देखकर सुच्ची की एक चीख सी निकल गई थी। शीला ने अपने माथे को पीटकर कहा था "भाग्य फूट गया।" लक्खू के तार कर दी गई थी। उसके एक दिन उपरान्त लक्खू भी बिलखता हुआ घर पहुंचा था। उसी दिन दीनू की लाश को पोस्ट-मार्टम करवाने के उपरांत ट्रक के मालिक ने घर भिजवा दिया था।

अब लक्खू पुनः अकेला था। उसकी कमर टूट चुकी थी। नौकरी तो केवल चार वर्ष ही बाकी थी पर लक्खू अब दिन प्रति-दिन सूखता जाता था। दीनू का छोटा मुन्ना जगतू अब दो वर्ष का हो गया था। जब लक्खू घर आता तो सुच्ची जगतू को गोदी में लेकर अपने घर चली आती अन्यथा वह अपनी मां शीला के पास ही रहती थी।

अब लक्खू बरसात की छुट्टियां पड़ने पर घर पहुंचा तो उसने पोते जगतू के लिए कुछ जायदाद भूमि के रूप में खरीदने के लिए सोचा। लक्खू की अपनी कोई भूमि नहीं थी और रिटाईरमैंट को केवल चार वर्ष ही रह गये थे। उसकी सारी आयु की कमाई की कुछ राशी तो उसने दीनू के विवाह पर खर्च कर दी थी और बची हुई राशी से वह भूमि खरीद करना चाहता था। पिछले वर्ष छुट्टी आने पर भी उसने शीला से कुछ भूमि खरीद करने की बात चलाई थी तो शीला ने कहा था किसी को पूछ कर पता करूंगी। अब लक्खू के घर आने पर सुच्ची अपने छोटे मुन्ने जगतू को लेकर

घर आई। शीला भी उसके साथ साथ थी। शीला ने अपना घूंघट सरकाते हुए लक्खू की ओर देखकर कहा था "भूमि के लिए आप कह गये थे सो हमारे नम्बरदार अपनी भूमि का कुछ भाग बेचना चाहते हैं मैंने उनसे पूछा भी था। कोई दस बारह कनाल मिल जाने की सम्भावना है पर एक हजार रुपये कनाल कह रहे थे।" अब लक्खू ने अपने पोते जगतू को अपनी गोदी में लेते हुए शीला की ओर देखा और बोला "यह मुन्ना मेरे दीनू की एकमात्र निशानी है शीला! इसके लिए कुछ तो खरीद दूं, जो भाओ मिलेगी मैं अपने नन्हें के लिए अवश्य खरीदकर रख जाऊंगा। पता नहीं कल का कैसा समय आये। यह जीवन रहे न रहे तो उस समय मेरी खरीदी हुई भूमि ही मेरे नन्हें जगतू के काम आयेगी।" यह बात कह कर लक्खू जगतू के सिर पर हाथ फेरने लगा "क्या खरीदोगे दादा?" जगतू अपनी तोतली जुबान में लक्खू की दाढ़ी को एक हाथ से नोचते हुए बोला। "आपके लिए जमीन खरीदूंगा बेटा, जमीन! मेरा जगतू जब बड़ा होगा तो उसमें बगीचा लगायेगा, आम लगायेगा और उन आमों को चूसकर अपने दादा को याद किया करेगा" यह वाक्य कहकर लक्खू ने जगतू को गोदी में जकड़ लिया। जगतू अपने दादा की गोदी में घुसकर बड़े सुख का का अनुभव करने लगा मानों वह बैकुंठ में पहुंच गया हो। "तो यदि भूमि खरीद करनी ही है तो कुछ साई बियाना नम्बरदार को पहले दे देना चाहिए क्योंकि ऐसा न हो कि कोई और हाथ मार जावे। बड़ा अच्छा टुकड़ा है भूमि का! दो फसली जमीन है" शीला ने लक्खू की ओर देखकर कहा। "तो आप नम्बरदार से पता कर लो साई बियाने की क्या बात है। अभी दो महीने की छुट्टियां तो हैं ही। सारा काम कर लेंगे" "अच्छा मैं पता करके आती हूं" शीला यह बात कहकर उठकर चली गई। सुच्ची ने अब

घर का काम करना आरम्भ किया। जगतू आंगन में दौड़ने लगा।

इस बात के दो दिन बाद ही लक्खू ने भूमि की खरीद करने की कार्यवाही आरम्भ कर दी थी। लक्खू पन्द्रह हजार रुपये अपने खाते से निकालकर ले आया था। यह पैसा उसने अपने फंड से दो मास पूर्व निकलवाकर बैंक में जमा करवा रखा था क्योंकि भूमि को खरीद करने की बात एक वर्ष से चल रही थी। शीला के पत्र के अनुसार ही अपने अठारह हजार के फंड से उसने पन्द्रह हजार निकलवा लिया था।

अब क्या था एक माह के अन्दर २ लक्खू ने बारह कनाल भूमि की रजिस्टरी करवा ली। रजिस्टरी उसने पटवारी के पास दर्ज करवाने को दे दी और रजिस्टरी की केवल एक नकल अपने टीन के ट्रंक में कपड़े से लपेट कर रख ली। कुछ दिनों के उपरान्त लक्खू के नाम भूमि का इन्तकाल भी चढ़ गया था। पर अब समस्या यह बन गई है कि भूमि को जोते कौन? लक्खू बूढ़ा था, सुच्ची स्त्री और जगतू बच्चा। दूसरे लक्खू की नौकरी भी अभी तीन साल बाकी थी। मक्की की फसल की बिजाई का समय था। लक्खू के लिए यह समस्या खड़ी हो गई कि भूमि को जोते कौन? उसी गांव में लक्खू का एक मित्र था हरिया। जब भी लक्खू घर आता तो हरिया उससे मिलने आता। हरिया और लक्खू बचपन के साथी थे। लक्खू की पत्नी के स्वर्गवास हो जाने के उपरान्त दीनू कई महीने हरिये के पास ही रहा था। जब लक्खू घर छुट्टी आता तो हरिया उसे एक दो बार अपने घर भोजन पर भी बुलाता था। हरिया जाति का लुहार था। अब लक्खू की नजरों में हरिये का एक सहारा ही घूमने लगा। हरिये के पास बैलों की एक अच्छी जोड़ी थी और नम्बरदार की वह भूमि जो लक्खू ने खरीदी थी हरिये के घरों के समीप ही थी। बस दूसरे दिन लक्खू ने सुबह

हरिये से बात करने की योजना बनाई। दूसरे दिन लक्खू हरिये के घर गया और उसे अपनी भूमि जोतने को कह दिया। हरिया बड़ा प्रसन्न था। फसल की बंटाई आधी आधी लेना देना तय हो गई। फसल का घास हरिये के पशुओं के लिए देना लक्खू ने स्वीकार कर लिया।

तीसरे दिन लक्खू की भूमि जोती गई। भूमि जोतने के समय लक्खू शीला और सुच्ची तथा छोटा जगतू भी खेत में गये। सभी बड़े प्रसन्न थे। भूमि में मक्की की फसल बीज दी गई। अब हरिया लक्खू की भूमि में काम करने लगा। फसल निकलने पर फसल को दोनों परिवार आधा आधा बांट लेते। इसी प्रकार दिन बीत गये। लक्खू की नौकरी पूरी हुई और लक्खू घर आ गया। लक्खू को चार हजार रुपया फंड का और मिला था जोकि उसने बैंक में सुच्ची के नाम जमा करवा दिया था।

लक्खू घर आकर बड़ा उदास रहने लगा। उसका स्वास्थ्य बिगड़न लगा। जब वह नौकरी पर था तो किसी न किसी से बात करके अपने मन को हल्का कर लेता था पर घर आकर उसे दीनू की याद सताने लगी। स्वप्न में रात को उसे दीनू ही दीखता स्वप्न में वह कहता, "अब्बा मैंने आपका कहना नहीं माना, मुझे क्षमा कर देना।" लक्खू की आंख खुलती तो बिलख उठता। उसका शरीर अब दुर्बल होता चला गया। एक दिन उसे शीला ने सलाह दी, बोली "दीनू के पिता बात कही तो नहीं जाती पर आपका स्वास्थ्य अब बिगड़ रहा है इसलिए आप अपनी वसीयत छोटे जगतू के नाम कर दो तो अच्छा रहेगा। हम बूढ़ों का क्या पता कि कब चल बसें। जमीन की बात बड़ी खराब होती है। यदि आपको मेरी बात बुरी न लगे तो ऐसा करने में हर्ज नहीं।" शीला ने यह बात कहकर लक्खू की ओर देखा। "मरना कोई गाली नहीं

शीला ! हम बूढ़ों के लिए वसीयत कर जाना कोई पाप नहीं । मैं तो पहले ही चाहता था कि मेरे मरने के बाद भूमि का कोई झगड़ा खड़ा न हो और मेरे नन्हें जगतू को कोई कष्ट न हो" लक्खू ने शीला की ओर देखकर कहा । जब लक्खू नौकरी से रिटायर होकर घर आने वाला था तो उसे एक अध्यापक ने भी कहा था "लक्खू ! तुम अब बूढ़े हुए जा रहे हो । यदि घर में कहीं भूमि वगैरा हो तो पहले जाकर एक काम कर देना "वसीयत" । लक्खू को तब उस अध्यापक की बात बुरी लगी थी । पर लक्खू अब सोच रहा था कि वसीयत करना ठीक रहेगा । उसका शरीर अब दुर्बल हो रहा था । अब लक्खू ने दूसरे दिन अपनी वसीयत अपने नन्हें पोते जगतू के नाम कर देने का निश्चय कर लिया ।

दूसरे दिन सुबह ही सुच्ची ने रोटियां पकाई और अपनी मां और नन्हें जगतू को लेकर वह लक्खू के पीछे चल पड़ी । लक्खू तहसील की ओर बढ़ा चला जा रहा था । वे चारों बस स्टैंड पर पहुंचे, बस आई और चले गए । लक्खू ने आज तहसील में जाकर अपनी भूमि चल तथा अचल सम्पति की वसीयत अपने नन्हें पोते जगतू के नाम करवा दी । वसीयत की केवल दो नकल करवाई गईं लक्खू ने वसीयत की एक नकल सुच्ची के पास दे दी और दूसरी अपने पास रखी ।

दूसरी ओर लक्खू की भूमि के बारे में हरिये के लड़के के मन में बदनीयत आ गई थी । हरिये का बड़ा लड़का आज नगर गया था । वहां उसने किसी से सुना था कि सरकार एक ऐसा कानून बना दिया है कि भूमि को जोतने वाले भूमि के मालिक बना दिये जावेंगे । नगर से आते ही हरिये का बड़ा लड़का अपने बाप से बोला, "बापू आज एक नई बात सुनकर आया हूं वह यह है कि सरकार ने एक नया कानून बना दिया है कि जो व्यक्ति भूमि को

जोतेगा वही उसका मालिक होगा।" अपने लड़के की बात सुनकर हरिये ने एक बार अपने लड़के की ओर देखा और चुप हो गया। "आप बोलते क्यों नहीं बापू? लक्खू ताया की भूमि हमें मुफ्त में ही मिलने वाली है। पटवारी लोगों को सरकार ने यह निर्देश दिये हैं कि भूमि की गिरदावरियां खेतों में जाकर लगाओ। जो भूमि को जोतता है उसकी ही गिरदावरी लगनी चाहिए।" अब हरिये ने अपनी चिलम भरी और कश खेंचकर बोला, "आप अभी कल के छोकरे हो, आपको क्या पता कि दुनियादारी क्या है? बेईमानी से पैदा की हुई सम्पत्तियां कुछ दिन ही ठहरा करती हैं बेटा! बजुर्गों ने कहा है 'पाप उसी का बाप' दूसरे अपने मित्र के साथ धोखा करना! यह मेरे से नहीं होगा, बेटा" "पर हम किसी की जमीन खद थोड़ ही ले रहे हैं बापू! सरकार ही तो दे रही है।"

सरकार चाहे कुछ भी करे पर हमें तो अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहिए। सरकार को क्या पता कि मेरे और लक्खू के क्या सम्बन्ध हैं दूसरे सरकार को यह भी क्या पता है कि लक्खू ने भूमि कैसे खरीदी है तीसरे लक्खू कहीं का भूमिपति है? जो हम उसकी भूमि ले लें। यदि ऐसा होगा तो लक्खू भूमि रहित हो जावेगा। लक्खू भूमि के गम में प्राण दे देगा, बेटा। मैं मित्र द्रोही कहलाऊंगा।" "कुछ भी हो पर सरकार ने तो यह कानून बना ही दिया है। यदि आप अपने नाम गिरदावरी न भी लगवायेंगे तो भूमि को जोतता तो मैं ही हूं।" अपने लड़के के मन में आई हुई बात को देखकर हरिया कुछ न बोला। वह चुपचाप चिलम पीता रहा। चिलम पी कर उसने दहलीज पर रखी और हाथ में खूंटा लिया और चल दिया। "कहां जा रहे हो बापू?" हरिये के बड़े लड़के ने जाते हुए हरिये को पूछा पर हरिया कुछ न बोला। वह सीधा लक्खू के पास गया। लक्खू आज अनायास ही हरिये को

शीला ! हम बूढ़ों के लिए वसीयत कर जाना कोई पाप नहीं । मैं तो पहले ही चाहता था कि मेरे मरने के बाद भूमि का कोई झगड़ा खड़ा न हो और मेरे नन्हें जगतू को कोई कष्ट न हो" लक्खू ने शीला की ओर देखकर कहा । जब लक्खू नौकरी से रिटायर होकर घर आने वाला था तो उसे एक अध्यापक ने भी कहा था "लक्खू ! तुम अब बूढ़े हुए जा रहे हो । यदि घर में कहीं भूमि वगैरा हो तो पहले जाकर एक काम कर देना "वसीयत" । लक्खू को तब उस अध्यापक की बात बुरी लगी थी । पर लक्खू अब सोच रहा था कि वसीयत करना ठीक रहेगा । उसका शरीर अब दुर्बल हो रहा था । अब लक्खू ने दूसरे दिन अपनी वसीयत अपने नन्हें पोते जगतू के नाम कर देने का निश्चय कर लिया ।

दूसरे दिन सुबह ही सुच्ची ने रोटियां पकाई और अपनी मां और नन्हें जगतू को लेकर वह लक्खू के पीछे चल पड़ी । लक्खू तहसील की ओर बढ़ा चला जा रहा था । वे चारों बस स्टैंड पर पहुंचे, बस आई और चले गए । लक्खू ने आज तहसील में जाकर अपनी भूमि चल तथा अचल सम्पति की वसीयत अपने नन्हें पोते जगतू के नाम करवा दी । वसीयत की केवल दो नकल करवाई गई लक्खू ने वसीयत की एक नकल सुच्ची के पास दे दी और दूसरी अपने पास रखी ।

दूसरी ओर लक्खू की भूमि के बारे में हरिये के लड़के के मन में बदनीयत आ गई थी । हरिये का बड़ा लड़का आज नगर गया था । वहां उसने किसी से सुना था कि सरकार एक ऐसा कानून बना दिया है कि भूमि को जोतने वाले भूमि के मालिक बना दिये जावेंगे । नगर से आते ही हरिये का बड़ा लड़का अपने बाप से बोला, "बापू आज एक नई बात सुनकर आया हूं वह यह है कि सरकार ने एक नया कानून बना दिया है कि जो व्यक्ति भूमि को

जोतेगा वही उसका मालिक होगा।" अपने लड़के की बात सुनकर हरिये ने एक बार अपने लड़के की ओर देखा और चुप हो गया। "आप बोलते क्यों नहीं बापू? लक्खू ताया की भूमि हमें मुफ्त में ही मिलने वाली है। पटवारी लोगों को सरकार ने यह निर्देश दिये हैं कि भूमि की गिरदावरियां खेतों में जाकर लगाओ। जो भूमि को जोतता है उसकी ही गिरदावरी लगनी चाहिए।" अब हरिये ने अपनी चिलम भरी और कश खेंचकर बोला, "आप अभी कल के छोकरे हो, आपको क्या पता कि दुनियादारी क्या है? बेईमानी से पैदा की हुई सम्पत्तियां कुछ दिन ही ठहरा करती हैं बेटा! बजुर्गों ने कहा है 'पाप उसी का बाप' दूसरे अपने मित्र के साथ धोखा करना! यह मेरे से नहीं होगा, बेटा" "पर हम किसी की जमीन खद थोड़े ही ले रहे हैं बापू! सरकार ही तो दे रही है।"

सरकार चाहे कुछ भी करे पर हमें तो अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहिए। सरकार को क्या पता कि मेरे और लक्खू के क्या सम्बन्ध हैं दूसरे सरकार को यह भी क्या पता है कि लक्खू ने भूमि कैसे खरीदी है तीसरे लक्खू कहीं का भूमिपति है? जो हम उसकी भूमि ले लें। यदि ऐसा होगा तो लक्खू भूमि रहित हो जावेगा। लक्खू भूमि के गम में प्राण दे देगा, बेटा। मैं मित्र द्रोही कहलाऊंगा।" "कुछ भी हो पर सरकार ने तो यह कानून बना ही दिया है। यदि आप अपने नाम गिरदावरी न भी लगवायेंगे तो भूमि को जोतता तो मैं ही हूं।" अपने लड़के के मन में आई हुई बात को देखकर हरिया कुछ न बोला। वह चुपचाप चिलम पीता रहा। चिलम पी कर उसने दहलीज पर रखी और हाथ में खूंटा लिया और चल दिया। "कहां जा रहे हो बापू?" हरिये के बड़े लड़के ने जाते हुए हरिये को पूछा पर हरिया कुछ न बोला। वह सीधा लक्खू के पास गया। लक्खू आज अनायास ही हरिये को

आते देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ पर ज्योंहि उसने हरिये से सरकार के बने कानून और उसके पुत्र के मन में आई हुई बेईमानी की बात सुनी तो उसका सिर घूमने लगा। घूमता भी क्यों न ? सारी आयु संचित धन राशी से ही तो उसने भूमि खरीदी थी। भूमि की गिरदावरी का समय था। हरिया यह खबर लक्खू को देकर वापस चला आया। लक्खू को आज चैन नहीं थी। कभी वह उठता और कभी बैठता। ज्यों ज्यों रात होती जा रही थी त्यों त्यो लक्खू का मन डूबता जा रहा था। रात को लक्खू ने केवल एक ही रोटी खाई और लेट गया। सुबह उठा तो लक्खू को हलका सा ज्वर था। वह अब सीधा पटवारी के पास गया पर उसे वहां जाकर पता चला कि पिछले कल ही तो हरिये का लड़का उसकी भूमि पर गिरदावरी लगवाकर चला गया था और भूमि के पर्चे भी ले गया था। अब लक्खू ने पटवारी की बहुतेरी मिन्नत की पर पटवारी ने उसे यह कहकर टाल दिया कि सरकार का कानून ही ऐसा है कि जो भूमि जोतेगा भूमि उसी को मिलेगी।

अब लक्खू को प्रतिदिन शाम को बुखार हो जाता। कभी वह अपने झौंपड़े की ओर बढ़ता टीन के ट्रंक को खोलता और वसीयतनामे तथा रजिस्टरी की नकल को देखता और पुनः उन दोनों कागजों को लपेट कर ट्रंक में रख देता। वसीयत की नकल और रजिस्टरी की नकल पर अदालत की मुहरों को देख कर गुनगुनाता "क्या ये सभी कागज, मुहरें झूठी हैं ? ऐसा कभी नहीं हो सकेगा" यह बात कहकर अपने मन को तसल्ली देता।

लक्खू अब बीमार था उसे आए दिन बुखार हो जाता। इसी प्रकार छः मास बीत चुके थे। आज सुबह लक्खू चारपाई पर लेटा कुछ सोच रहा था कि चौकीदार ने आंगन में आकर आवाज दी, बोला "लक्खू चाचा, आपको तहसीलदार ने बुलाया है। आज

गांव में तहसीलदार आ रहे हैं वहां आपको चलना होगा" यह बात कहकर चौकीदार ने एक कागज अपनी जेब से निकाला और उस पर लक्खू के हस्ताक्षर करवा लिए। लक्खू ने सुच्ची को शीघ्र रोटी पकाने को कहा। रोटी खा लेने के उपरान्त लक्खू तहसीलदार के पास जाने को उद्यत हुआ तो छोटा जगतू भी लक्खू से लिपट बैठा। अब लक्खू अन्दर झौंपड़े की ओर बढ़ा सोचा कि तहसीलदार ने बुलाया है कोई भूमि सम्बन्धी काम ही होगा। उसने झौंपड़े के अन्दर जाकर झट अपना टीन का ट्रंक खोला और उसमें से रजिस्टरी की नकल और वसीयत नामा निकाला, दोनों कागजों को जेब में डाल कर लक्खू अपने खूंटे के सहारे पटवारखाने की ओर बढ़ा लक्खू के घर से पटवार खाना थोड़ी ही दूर था। अब जगतू भी लक्खू के पीछे ठुमक ठुमक कर चलने लगा। लक्खू में इतनी हिम्मत न थी कि जगतू को गोदी में उठा सके। कभी लक्खू जगतू को गोदी में उठा लेता और कभी अंगूठे से लगा लेता। ज्यों त्यों दादा पोता पटवार खाने के समीप पहुंचे। लक्खू खांसता हुआ पटवार खाने से कुछ दूरी पर बैठ गया। हरिया तथा उसका बड़ा लड़का भी वहां आये हुए थे। अब कुछ देर आराम करने के बाद लक्खू अपने पोते को अंगुली से लगाकर अपने दुबले शरीर को कम्बल से ढांपता हुआ पटवार खाने के प्रांगण में पहुंचा। पटवार खाने का आंगन लोगों से भरा पड़ा था। एक कोने में तहसीलदार साहिब एक कुर्सी पर बैठे थे। पटवारी रजिस्ट्रों को लेकर तहसीलदार को दिखा रहा था। अब लक्खू की नजर हरिये पर पड़ी। दोनों की नजरें मिलीं। लक्खू ने चाहा कि हरिये के पास जाकर बैठूं पर उसके उठने से पहले हरिया उस स्थान से उठकर एक कोने में कुछ लोगों के जमघट में जाकर बैठ चुका था। लक्खू ने चारों ओर नजर दौड़ाई पर हरिया वहां नहीं था। लक्खू को देखकर

हरिया खिसकता हुआ उस स्थान से भी कहीं दूर चला जाना चाहता था। उसने अपने बड़े लड़के की ओर एक बार देखा और पटवार खाने के पिछले रास्ते से बाहर की ओर चला गया न जाने किस ओर और कहां गया ? उस दिन के उपरान्त उसे किसी ने नहीं देखा था। अब लक्खू को देखकर एक व्यक्ति बोला "लक्खू भैय्या ! तूने बड़ी देर कर दी तेरे आने से पहले हरिया और उसका बड़ा लड़का आवाज पड़ने पर हाजिर हुए थे। उनके यह कहने पर कि आपकी भूमि को वे जोतते हैं; तहसीलदार साहिब ने आपको अनुपस्थित देख कर कुछ उस गांव के लोगों को पूछ कर कानून के अनुसार भूमि का इन्तकाल हरिये के नाम कर दिया है।" उस व्यक्ति के मुंह से यह बात निकली ही थी कि लक्खू के होश उड़ गये। चेहरा एकदम सफेद हो गया। चिन्ता और बिमारी ने लक्खू को पहले ही निचोड़ कर रख दिया था। लक्खू इस प्रहार को सहन न कर सका। अब शाम ढल रही थी। सभी लोग धीरे धीरे अपने घरों को जाने लगे पर लक्खू वहीं पटवार खाने के प्रांगण में उगे पीपल के पेड़ के नीचे बैठा कुछ सोच रहा था। जब सभी लोग चले गये तो लक्खू तहसीलदार के पास जाकर गिड़गिड़ाया बोला, "महाराज ! इतना जुलम मत करो मेरे सारी आयु के संचित धन से खरीदी हुई भूमि को आपने मुझे बिना पूछे हरिये के नाम कर दिया" लक्खू अब कुछ न बोल सका उसका गला रुंध चुका था। उसका नन्हा पोता जगतू अपना मुंह उपर करके अपने दादा की प्रत्येक बात को बड़े ध्यान से सुन रहा था। अब तहसीलदार साहिब ने अपना चशमा उतार कर मेज पर रखते हुए लक्खू की ओर बड़े ध्यान से देखा और बोले, "भाई ! इसमें हम कुछ नहीं कर सकते सरकार का कानून ही ऐसा है कि जो भूमि जोतता है भूमि उसी को दी जावे"

"तो क्या मेरी सारी आयु के संचित धन से खरीदी भूमि मुफ्त में हरिये को दी जावेगी"

"हां ! यदि आपने समय पर एल. आर. फाईव, फार्म भरे होते तो भूमि आप दोनों को आधी आधी बांट दी जाती। पर अब जबकि आपने उपरोक्त फार्म नहीं भरे हैं तो कानून यही कहता है कि भूमि हरिये को दी जाये क्योंकि भूमि को हरिया जोतता है।"

अब लक्खू ने अपनी जेब से एक रूमाल में लपेटें दो कागजों को निकाला। उनमें से एक कागज उसने तहसीलदार के मेज पर रख दिया। तहसीलदार साहिब ने उस कागज को देखा वह लक्खू की खरीदी हुई भूमि की रजिस्ट्री की नकल थी। तहसीलदार ने कागज को लक्खू की ओर बढ़ाया पर लक्खू बिना कुछ बोले और बिना कागज लिए उस स्थान से कहीं दूर जा चुका था। अब अन्धेरा हो चुका था। लक्खू घर से चार रोटियां पकवा कर लाया था जो उसके थैले में पड़ी थी। लक्खू ने घर जाना मुनासिब न समझा न जाने क्यों ? वह पटवार खाने के आंगन में पीपल के वृक्ष के दूसरी ओर अपना कम्बल बिछा कर लेट गया। जगतू को पहले ही नींद लगी थी। जगतू अपने दादा की गोदी में छुप बैठा। अब लक्खू ने अपना रूमाल खोला और उसमें से दूसरा कागज निकाल कर उसने जगतू की जेब में डाल दिया। जगतू जब सो गया तो लक्खू वहां से उठा और चल दिया न जाने किस ओर।

दूसरे दिन सारे गांव में लक्खू तथा हरिए के गुम होने की चर्चा थी। सभी लोगों ने नन्हे जगतू की जेब टटोली तो उसकी जेब से एक कागज निकला। वह कागज लक्खू का "वसीयत नामा" था जिसे वह जाती बार अपने पोते जगतू की जेब में डाल गया। था।



हरिया खिसकता हुआ उस स्थान से भी कहीं दूर चला जाना चाहता था। उसने अपने बड़े लड़के की ओर एक बार देखा और पटवार खाने के पिछले रास्ते से बाहर की ओर चला गया न जाने किस ओर और कहां गया ? उस दिन के उपरान्त उसे किसी ने नहीं देखा था। अब लक्खू को देखकर एक व्यक्ति बोला "लक्खू भैय्या ! तूने बड़ी देर कर दी तेरे आने से पहले हरिया और उसका बड़ा लड़का आवाज पड़ने पर हाजिर हुए थे। उनके यह कहने पर कि आपकी भूमि को वे जोतते हैं; तहसीलदार साहिब ने आपको अनुपस्थित देख कर कुछ उस गांव के लोगों को पूछ कर कानून के अनुसार भूमि का इन्तकाल हरिये के नाम कर दिया है।" उस व्यक्ति के मुंह से यह बात निकली ही थी कि लक्खू के होश उड़ गये। चेहरा एकदम सफेद हो गया। चिन्ता और बिमारी ने लक्खू को पहले ही निचोड़ कर रख दिया था। लक्खू इस प्रहार को सहन न कर सका। अब शाम ढल रही थी। सभी लोग धीरे धीरे अपने घरों को जाने लगे पर लक्खू वहीं पटवार खाने के प्रांगण में उगे पीपल के पेड़ के नीचे बैठा कुछ सोच रहा था। जब सभी लोग चले गये तो लक्खू तहसीलदार के पास जाकर गिड़गिड़ाया बोला, "महाराज ! इतना जुल्म मत करो मेरे सारी आयु के संचित धन से खरीदी हुई भूमि को आपने मुझे बिना पूछे हरिये के नाम कर दिया" लक्खू अब कुछ न बोल सका उसका गला रुंध चुका था। उसका नन्हा पोता जगतू अपना मुंह उपर करके अपने दादा की प्रत्येक बात को बड़े ध्यान से सुन रहा था। अब तहसीलदार साहिब ने अपना चशमा उतार कर मेज पर रखते हुए लक्खू की ओर बड़े ध्यान से देखा और बोले, "भाई ! इसमें हम कुछ नहीं कर सकते सरकार का कानून ही ऐसा है कि जो भूमि जोतता है भूमि उसी को दी जावे"

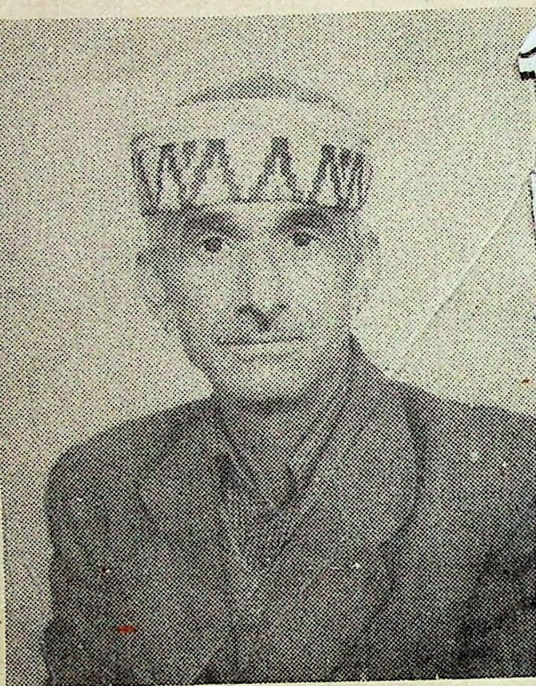
"तो क्या मेरी सारी आयु के संचित धन से खरीदी भूमि मुफ्त में हरिये को दी जावेगी"

"हां ! यदि आपने समय पर एल. आर. फाईव, फार्म भरे होते तो भूमि आप दोनों को आधी आधी बांट दी जाती। पर अब जबकि आपने उपरोक्त फार्म नहीं भरे हैं तो कानून यही कहता है कि भूमि हरिये को दी जाये क्योंकि भूमि को हरिया जोतता है।"

अब लक्खू ने अपनी जेब से एक रूमाल में लपेटें दो कागजों को निकाला। उनमें से एक कागज उसने तहसीलदार के मेज पर रख दिया। तहसीलदार साहिब ने उस कागज को देखा वह लक्खू की खरीदी हुई भूमि की रजिस्ट्री की नकल थी। तहसीलदार ने कागज को लक्खू की ओर बढ़ाया पर लक्खू बिना कुछ बोले और बिना कागज लिए उस स्थान से कहीं दूर जा चुका था। अब अन्धेरा हो चुका था। लक्खू घर से चार रोटियां पकवा कर लाया था जो उसके थैले में पड़ी थी। लक्खू ने घर जाना मुनासिब न समझा न जाने क्यों ? वह पटवार खाने के आंगन में पीपल के वृक्ष के दूसरी ओर अपना कम्बल बिछा कर लेट गया। जगतू को पहले ही नींद लगी थी। जगतू अपने दादा की गोदी में छुप बैठा। अब लक्खू ने अपना रूमाल खोला और उसमें से दूसरा कागज निकाल कर उसने जगतू की जेब में डाल दिया। जगतू जब सो गया तो लक्खू वहां से उठा और चल दिया न जाने किस ओर।

दूसरे दिन सारे गांव में लक्खू तथा हरिए के गुम होने की चर्चा थी। सभी लोगों ने नन्हे जगतू की जेब टटोली तो उसकी जेब से एक कागज निकला। वह कागज लक्खू का "वसीयत नामा" था जिसे वह जाती बार अपने पोते जगतू की जेब में डाल गया। था।





संसार चन्द 'प्रभाकर' उपन्यासकार
कहानीकार कवि एवं निबन्ध लेखक
गांव व डा० फतेहपुर तहसील नूरपुर
(कांगड़ा) हि०प्र०